BED III- CPS 18

सामाजिक विज्ञान का शिक्षणशास्त्र (भाग II)

Pedagogy of Social Science (Part II)

शिक्षक शिक्षा विभाग, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

ISBN: 13-978-93-85740-86-2
BED III- CPS 18 (BAR CODE)

BED III- CPS 18

सामाजिक विज्ञान का शिक्षणशास्त्र (भाग II)

Pedagogy of Social Science (Part II)

शिक्षक शिक्षा विभाग, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

अध्ययन बोर्ड	विशेषज्ञ समिति
□**प्रोफेसर एच० पी० शुक्ल** (अध्यक्ष- पदेन), निदेशक, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय □**प्रोफेसर मुहम्मद मियाँ** (बाह्य विशेषज्ञ- सदस्य), पूर्व अधिष्ठाता, शिक्षा संकाय, जामिया मिल्लिया इस्लामिया व पूर्व कुलपति, मौलाना आजाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय, हैदराबाद □**प्रोफेसर एन० एन० पाण्डेय** (बाह्य विशेषज्ञ- सदस्य), विभागाध्यक्ष, शिक्षा विभाग, एम० जे० पी० रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली □**प्रोफेसर के० बी० बुधोरी** (बाह्य विशेषज्ञ- सदस्य), पूर्व अधिष्ठाता, शिक्षा संकाय, एच० एन० बी० गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर, उत्तराखण्ड □**प्रोफेसर जे० के० जोशी** (विशेष आमंत्री- सदस्य), शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय □**प्रोफेसर रम्भा जोशी** (विशेष आमंत्री- सदस्य), शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय □**डॉ० दिनेश कुमार** (सदस्य), सहायक प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय □**डॉ० भावना पलड़िया** (सदस्य), सहायक प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय □**सुश्री ममता कुमारी** (सदस्य), सहायक प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा एवं सह-समन्वयक बी० एड० कार्यक्रम, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय □**डॉ० प्रवीण कुमार तिवारी** (सदस्य एवं संयोजक), सहायक प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा एवं समन्वयक बी० एड० कार्यक्रम, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय	□**प्रोफेसर एच० पी० शुक्ल** (अध्यक्ष- पदेन), निदेशक, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय □**प्रोफेसर सी० बी० शर्मा** (बाह्य विशेषज्ञ- सदस्य), अध्यक्ष, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान, नोएडा □**प्रोफेसर पवन कुमार शर्मा** (बाह्य विशेषज्ञ- सदस्य), अधिष्ठाता, शिक्षा संकाय व सामाजिक विज्ञान संकाय, अटल बिहारी बाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल □**प्रोफेसर जे० के० जोशी** (विशेष आमंत्री- सदस्य), शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय □**प्रोफेसर रम्भा जोशी** (विशेष आमंत्री- सदस्य), शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय □**डॉ० दिनेश कुमार** (सदस्य), सहायक प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय □**डॉ० भावना पलड़िया** (सदस्य), सहायक प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय □**सुश्री ममता कुमारी** (सदस्य), सहायक प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा एवं सह-समन्वयक बी० एड० कार्यक्रम, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय □**डॉ० प्रवीण कुमार तिवारी** (सदस्य एवं संयोजक), सहायक प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा एवं समन्वयक बी० एड० कार्यक्रम, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

दिशाबोध: प्रोफेसर जे० के० जोशी, पूर्व निदेशक, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

कार्यक्रम समन्वयक:	कार्यक्रम सह-समन्वयक:	पाठ्यक्रम समन्वयक:	पाठ्यक्रम सह समन्वयक:
डॉ० प्रवीण कुमार तिवारी समन्वयक, शिक्षक शिक्षा विभाग, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल, उत्तराखण्ड	**सुश्री ममता कुमारी** सह-समन्वयक, शिक्षक शिक्षा विभाग, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल, उत्तराखण्ड	**डॉ० सोमू सिंह** सहायक प्रोफेसर, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तरप्रदेश	**सुश्री ममता कुमारी** सह-समन्वयक, शिक्षक शिक्षा विभाग, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल, उत्तराखण्ड

प्रधान सम्पादक	उप सम्पादक
डॉ० प्रवीण कुमार तिवारी समन्वयक, शिक्षक शिक्षा विभाग, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल, उत्तराखण्ड	**डॉ० सोमू सिंह** सहायक प्रोफेसर, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तरप्रदेश

विषयवस्तु सम्पादक	भाषा सम्पादक	प्रारूप सम्पादक	प्रूफ़ संशोधक
सुश्री ममता कुमारी सहायक प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय	**सुश्री ममता कुमारी** सहायक प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय	**सुश्री ममता कुमारी** सहायक प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय	**सुश्री ममता कुमारी** सहायक प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

सामग्री निर्माण

प्रोफेसर एच० पी० शुक्ल निदेशक, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय	**प्रोफेसर आर० सी० मिश्र** निदेशक, एम० पी० डी० डी०, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

© उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, 2017

ISBN-13 -978-93-85740-86-2

प्रथम संस्करण: 2017 (पाठ्यक्रम का नाम: सामाजिक विज्ञान का शिक्षणशास्त्र (भाग II), पाठ्यक्रम कोड- BED III- CPS 18)

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पुस्तक के किसी भी अंश को ज्ञान के किसी भी माध्यम में प्रयोग करने से पूर्व उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय से लिखित अनुमति लेना आवश्यक है। इकाई लेखन से संबंधित किसी भी विवाद के लिए पूर्णरूपेण लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद का निपटारा उत्तराखण्ड उच्च न्यायालय, नैनीताल में होगा।

निदेशक, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय द्वारा निदेशक, एम० पी० डी० डी० के माध्यम से उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय के लिए मुद्रित व प्रकाशित।

प्रकाशक: उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय; **मुद्रक:** उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय।

कार्यक्रम का नाम: बी० एड०, कार्यक्रम कोड: BED- 17

पाठ्यक्रम का नाम: सामाजिक विज्ञान का शिक्षणशास्त्र (भाग II), पाठ्यक्रम कोड- BED III- CPS 18

इकाई लेखक	खण्ड संख्या	इकाई संख्या
डॉ० स्वेता द्विवेदी सहायक प्रोफेसर, शिक्षा संकाय, मिजोरम केन्द्रीय विश्वविद्यालय, आइजोल, मिजोरम	**1**	**1, 2 व 5**
डॉ० अजय कुमार सिंह सहायक प्रोफेसर, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तरप्रदेश	**1**	**3 व 4**
डॉ० सोमू सिंह सहायक प्रोफेसर, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तरप्रदेश	**2**	**1 व 2**
डॉ० नृपेन्द्र वीर सिंह सहायक प्रोफेसर सह सहायक निदेशक, शिक्षा पीठ, दक्षिण बिहार केन्द्रीय विश्वविद्यालय, गया, बिहार	**2**	**3 व 4**
डॉ० प्रवीण कुमार तिवारी सहायक प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, उत्तराखण्ड	**2**	**5**

BED III- CPS 18
सामाजिक विज्ञान का शिक्षणशास्त्र (भाग II)
Pedagogy of Mathematics (Part II)

खण्ड 1		
इकाई सं०	**इकाई का नाम**	**पृष्ठ सं०**
1	भौगोलिक ज्ञान की प्रकृति; भूगोल के प्रतिमान (मानदंड); भूगोल के विषय वस्तु: स्थान (अवस्थिति), पारस्परिक क्रिया, मापनी, दूरी और परिवर्तन; भूगोल शिक्षण के लक्ष्य और उद्देश्य	2-14
2	भूगोल में कौशलों (अवलोकन, तथ्यों का अभिलेखन एवं प्रस्तुतीकरण) का विकास; भूगोल शिक्षण में उपागम (आगमनात्मक, निगमनात्मक, अन्तर-अनुशासनत्मक, रचनात्मक इत्यादि), रणनीतियां (सहयोगपूर्ण, योजना, समस्या समाधान, प्रयोगात्मक, विवरणात्मक इत्यादि) और संसाधन (मानचित्र, रेखाचित्र, उपग्रह से भेजे गए चित्र, आकाशीय चित्र)	15- 37
3	अर्थशास्त्र: एक अनुशासन के रूप में; अर्थशास्त्र का अर्थ, प्रकृति एवं क्षेत्र, अर्थशास्त्र के मूल संप्रत्यय: दुर्लभता तथा चयन, अवसर लागत, उत्पादकता, माँग, पूर्ति एवं बाजार क्रियाविधि, श्रम के भाग एवं विशिष्टता; अर्थशास्त्र शिक्षण के लक्ष्य एवं उद्देश्य	38-63
4	अर्थशास्त्र में कौशलों का विकास	64-87
5	सामाजिक विज्ञान-भूगोल, अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान और इतिहास में सीखने के लिए आकलन; सामाजिक विज्ञान के विभिन्न पहलूओं की जांच/आकलन/समझने के लिए सबसे उपयुक्त प्रश्नों के प्रकार; सामाजिक विज्ञान में सतत और व्यापक आकलन में मूल्यांकन के विभिन्न उपकरण और तकनीकें	88-99

खण्ड 2		
इकाई सं०	**इकाई का नाम**	**पृष्ठ सं०**
1	राजनीति विज्ञान विषय का अर्थ, प्रकृति एवं कार्यक्षेत्र; राजनीति विज्ञान विषय के मूल संप्रत्यय: लोकतन्त्र, सरकार, पंचायत, संविधान, अधिकार, कर्तव्य, राज्य, नागरिकता; राजनीति विज्ञान शिक्षण के लक्ष्य और उद्देश्य	101-117
2	राजनीति विज्ञान में कौशलों (अवलोकन, तथ्यों का अभिलेखन एवं निर्वचन) का विकास; राजनीति विज्ञान शिक्षण में उपागम (आगमनात्मक, निगमनात्मक, अन्तर-अनुशासनात्मक, रचनात्मक इत्यादि), विधि एवं रणनीतियां (व्याख्यान, अभिनयीकरण, परियोजना, समस्या समाधान, परिचर्चा द्वारा अधिगम, सामाजिक अन्वेषण) और संसाधन (भारत का संविधान, एटलस, राजनैतिक मानचित्र-विश्व, एशिया, भारत, प्रदेश, जिले; ग्लोब, समाचार पत्र, समाचार पत्रिका, पुस्तकें, टेलीविज़न, रेडियो इत्यादि)	118-134
3	एक अनुशासन के रूप में इतिहास का अर्थ, प्रकृति तथा क्षेत्र; इतिहास में मुख्य अवधारणाएं; एक प्रजातांत्रिक देश में इतिहास शिक्षण के उद्देश्य **एवं** लक्ष्य	135-156
4	इतिहास में विकासशील कौशल: इतिहास के शिक्षण में उपागम, विधियाँ एवं प्रविधियाँ तथा साधन	157-185
5	5 E (संलग्नता, अन्वेषण, व्याख्या, विस्तार और मूल्यांकन) प्रतिरूप पर आधारित सामाजिक विज्ञान के लिए अधिगम योजना	186-204

खण्ड 1

Block 1

इकाई 1 - भौगोलिक ज्ञान की प्रकृति; भूगोल के प्रतिमान (मानदंड); भूगोल के विषय वस्तु: स्थान (अवस्थिति), पारस्परिक क्रिया, मापनी, दूरी और परिवर्तन; भूगोल शिक्षण के लक्ष्य और उद्देश्य

Nature of Geographical Knowledge; Paradigms in Geography; Geography Theme: Location, Interaction, Scale, Distance and Change; Aims and Objectives of Geography

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 भौगोलिक ज्ञान की प्रकृति
1.4 भूगोल के प्रतिमान
1.5 भूगोल के विषय वस्तु
1.6 भूगोल शिक्षण के लक्ष्य और उद्देश्य
1.7 सारांश
1.8 शब्दावली
1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.10 संदर्भ ग्रंथ सूची
1.11 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

भूगोल वह विषय है जो सम्पूर्ण विश्व के विषय में जानकारी देता है। यदि भूगोल के विषय क्षेत्र को देखा जाये तो यह इसी विश्व तक नही सीमित है बल्कि यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को अपने अन्दर समाहित किया है। एक भूगोल शिक्षक के लिए आवश्यक है कि वह इस विषय की प्रकृति के विषय में जाने। इसके साथ ही उसके लिए यह जानना भी आवश्यक है कि भूगोल अपने वर्तमान स्वरुप को प्राप्त करने के लिए किन-किन चरणों से होकर गुजरा है। भूगोल के कुछ विषय क्षेत्र हैं जिनमें भौतिक, जैविक और सांस्कृतिक पक्षों

को मुख्य रूप से सम्मिलित किया जाता है तथा इसने अध्ययन के लिए भूगोल के कुछ शब्दावलियाँ हैं और भूगोल के अध्ययन हेतु इनकी जानकारी होनी आवश्यक है। इसके साथ ही प्रत्येक विषय की भांति भूगोल के भी कुछ लक्ष्य और उद्देश्यहैं जिसके द्वारा अध्यापक द्वारा किए जाने वाले कार्यों, क्रियाकलापों और व्यवहारों को स्पष्ट करने का प्रयास किया जता है। प्रस्तुत पाठ इसी की व्याख्या से सम्बंधित है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के अध्ययन के उपरांत विद्यार्थी

1. भौगोलिक ज्ञान की प्रकृति की व्याख्या कर सकेंगे।
2. भूगोल के बदलते प्रतिमान की चर्चा कर सकेंगे।
3. भूगोल के विषय-वस्तुओं का वर्णन कर सकेंगे।
4. भौगोलिक तत्वों और मानव जीवन के सन्दर्भ में अवस्थिति, पारस्परिक क्रिया, मापनी, दूरी तथा परिवर्तन की व्याख्या कर सकेंगे।
5. भूगोल शिक्षण के लक्ष्यों और उद्देश्यों को स्पष्ट कर सकेंगे।

1.3 भौगोलिक ज्ञान की प्रकृति

भूगोल पृथ्वी तथा इसकी आकृति का क्रमबद्ध अध्ययन है। भूगोल को भिन्न-भिन्न भूगोलवेत्ताओं ने भिन्न भिन्न रूप में परिभाषित किया है। भूगोल की विशालता को देखते हुए यह बड़ी सामान्य सीबात है। यह सत्य है कि जितना विशाल भूगोल का विषय क्षेत्र है उतना किसी अन्य विषय का नहीं है। यह भूगर्भ से लेकर अंतरिक्ष तक और ज़मीन से लेकर महासागरों तक फैला है। नए खोजों और आविष्कारों के साथ ही भूगोल का क्षेत्र बढ़ता गया।

इराटस्थनीज ने भूगोल को "पृथ्वी वर्णन" या "भू-विवरण" का अध्ययन माना है। मध्य युग में 'भूगोल को जहाँ वितरण का विज्ञान' माना गया जो आधुनिक युग में भूगोल 'मानव और उसके पर्यवरण के मध्य अंतर्क्रियाओं का अध्ययन' है। मार्थ ने इसे वितरण का विज्ञानं माना तो कार्ल रिटर ने इसे भूपृष्ठ और वायुमंडल का विज्ञान माना है। यह तो हर परिभाषा से स्पष्ट है किएसे हर एक विद्वान ने विज्ञानं ही माना है। इससे यह स्पष्ट होता है कि भुगोल्वाह विषय है जिसके अध्ययन के लिए वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग किया जाता है । विज्ञान वह विषय है जिसमें वैज्ञानिक तरीके से क्रमबद्ध और व्यवस्थित अध्ययन किया जाता है। इस प्रकार भूगोल में भी वैज्ञानिक रीति से क्रमबद्ध और व्यवस्थित ढंग से तथ्य सर्वेक्षण, समस्याओं का चयन, परिकल्पनाओं का निर्माण, प्रदत्तों या आंकड़ों का संकलन, तद्पश्चात उन आंकड़ों का विश्लेषण, परिकल्पना का परीक्षण, निष्कर्ष पर पहुंचना, मूल्यांकन जैसे क्रमिक चरणों का प्रयोग किसी भी तथ्य के लिए करते हैं। प्रदत्तों के संकलन में वस्तुनिष्ठता और निष्पक्षता बनी रहे इसके लिए प्रमापीकृत यंत्रों, उपकरणों को प्रयुक्त किया जाता है।

भूगोल के विकास के साथ से ही इसमें भौगोलोक स्थलाकृतियों का वर्णन किया जाता रहा है । इसके पश्चात् भूगोलवेत्ताओं के रूप में यात्रियों ने भूगोल में योगदान दिया । भूगोल के वर्तमान स्वरुप को देने में उनका योगदान सर्वाधिक रहा है । पाइथस, इबन्बतूता, इराटस्थनीज, इदरीसी, इब्नखादून इत्यादि यात्रियों ने भूगोल के लिए अपना बहुमूल्य योगदान दिया है । इन यात्राओं से संबंधित विवरण आज भी उपलब्ध हैं और विभिन्न स्तरों पर हमारे पाठ्यक्रम का हिस्सा हैं ।भूगोल की प्रारंभिक कक्षाओं में विभिन्न देश और वहां पर रहने वाले लोगों के रहने वालों के रहन-सहन, पहनावा, खान-पान, परम्पराओं, रीति-रिवाजों, परम्पराओं इत्यादि का अध्ययन किया जाता है । इन तथ्यों का विवरण इन कक्षाओं में होना यह स्पष्ट करता है कि भूगोल का स्वरूप, इसकी प्रकृति विवरणात्मक है । विवरणात्मक स्वरुप भूगोल की मूलभूत प्रकृति है क्योंकि सभी भौगोलिक तथ्यों का ज्ञान हम विवरण के रूप में ही प्राप्त करते हैं ।

भूगोल की प्रकृति प्राकृतिक भी है । भूगोल को प्राकृतिक विज्ञान के रूप में भी जाना जाता है क्योंकि इसके अभाव में हम प्रकृति से सम्बंधित कोई ज्ञान नहीं प्राप्त कर सकते । प्रकृति से जुड़े सभी तथ्यों जैसे, स्थलभाग, जलभाग, वायुमंडल, जैवमंडल और इनसे जुड़ी चीजों का ज्ञान हमें भूगोल ही देता है ।

भूगोल मात्र इन प्राकृतिक घटकों के साथ ही नहीं जुड़ा बल्कि मानवीय पक्ष भी भूगोल के अंतर्गत सम्मिलित होते हैं । मानव भूगोल भूगोल का एक अहम् भाग है । मानव और उसके समाज की विषद विवेचना भूगोल में की जाती है । मानवीय क्रियाकलाप और उनका समाज किसी विशेष भौगोलिक दशा में किस प्रकार होगा इसका वर्णन भूगोल करता है । अतएव यह कहा जा सकता है कि भूगोल की प्रकृति सामाजिक भी है ।

भूगोल को मार्थ ने वितरण का विज्ञान कह कर परिभाषित किया था तो यह स्पष्ट है कि भूगोल की प्रकृति वितरणात्मक भी है । भूगोल न केवल किसी भी भूदृश्य का मात्र विवरण नहीं देता बल्कि उसकी स्थिति और विस्तार को भी बताता है जो यह बताता है कि भूगोल की प्रकृति विवरणात्मक है । भूगोल प्रत्येक, भूदृश्य, स्थान, घटना, क्रियाकलाप, से जुड़े तथ्यों का विश्लेषण करता है तथा कार्य-कारण सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास करता है जैसे- यदि किसी क्षेत्र में कोई नदी पंजाकार डेल्टा बनाती है तो इसके पीछे क्या काराब है इसका विश्लेषण भूगोल करना है । इस आधार पर भूगोल अपनी प्रकृति में विश्लेषणात्मक भी है ।

भूगोल मानव और प्रकृति के मध्य संबंधों का अध्ययन करता है । प्रकृति किस प्रकार मानव को प्रभावित करता है और मानव किस प्रकार अपने पर्यावरण को प्रभावित करता है । इस पारस्परिक क्रिया,अंतःक्रिया का अध्ययन भूगोल करता है । मिस सैम्पुल ने भी भूगोलको परिभाषित करते हुए इसे पर्यावरण और मानव के अंतर्क्रिया का अध्ययन करने का विज्ञान माना है । इस प्रकार भूगोल अंतर्क्रियात्मक प्रकृति का भी है ।

भूगोल हर एक घटना का कार्य-कारण अध्ययन करता है ।किसी भी घटना का विश्लेषण कर किसी निष्कर्ष पर पहुँचने का प्रयास करता है । विद्यार्थी तार्किक रूप से किसी घटना का विश्लेषण करते हैं तो भूगोल की प्रकृति को तार्किक माना जाता है । इसके अलावा भूगोल की प्रकृति व्यवस्थित और

क्रमबद्ध माना जाता है। जब भूगोल को विज्ञान के रूप में सभी विद्वानों ने परिभाषित किया है तो स्पष्ट है कि भूगोल की प्रकृति व्यवस्थित और क्रमबद्ध है।

अभ्यास प्रश्न

1. इराटस्थनीज ने भूगोल को किस रूप में परिभाषित किया है?
2. भूगोल की प्रकृति किस प्रकार से सामजिक है?

1.4 भूगोल के प्रतिमान

भूगोल अपने वर्तमान स्वरुप में एक लम्बी यात्रा के पश्चात् पहुंचा है। वैसे तो भूगोल का प्रारंभ पृथ्वी की उत्पत्ति के साथ हुआ था परन्तु मानव ने अपने जन्म के साथ हो इसका अध्ययन प्रारंभ किया और मानव का जिज्ञासु स्वभाव भूगोल में नए क्षेत्रों और अध्यायों को जोड़ता गया। प्रारंभ में भूगोल का शाब्दिक अर्थ गोल पृथ्वी माना जाता था। अंग्रेजी शब्द Geography दो यूनानी शब्दों Geog+Graphy से मिलकर बना है जिसमें Geog का अर्थ है पृथ्वी और Graphy का अर्थ है वर्णन करना या लिखना है। इसप्रकार से Geography का अर्थ पृथ्वी का वर्णन है।

प्राचीन युग: भूगोल का प्रारंभ कब हुआ इसके बारे में स्पष्ट रूप से कहा नहीं जा सकता। परन्तु ऐतिहासिक प्रमाणों में सुमेरियन सभ्यता जिसका काल 2700 ईसा पूर्व था; में मानचित्रों प्राप्त हुए हैं। अन्य नदी घटी सभ्यताओं में ऐसे प्रमाण प्राप्त हुए हैं।प्राचीन काल में भूगोल वर्णात्मक रूप में था। उस समय में साम्राज्य विस्तार की नीति राजा अपनाते थे जिसके लिए वे युद्ध करते थे। दूसरे राज्यों पर चढ़ाई के लिए उन्हें मानचित्र की आवश्यकता होती थी जिसने तत्कालीन समय में मानचित्रण को प्रोत्साहित किया।

उस समय में भूगोल कोई स्वतंत्र विषय नहीं था बल्कि यह खगोल शास्त्र, नक्षत्रविद्या इत्यादि के साथ जुड़ा था। प्राचीन युग में यूनान और रोम के अनेक विद्वानों ने महत्वपूर्ण भौगोलिक वर्णन दिए। इरेटास्थनीज ने सबसे पहले ज्योग्राफिका अर्थात भूगोल शब्द का प्रयोग किया था। इसी वजह से इन्हें भूगोल का जन्मदाता कहा जाता है। इस समय में भूगोल के विकास का श्रेय समुद्री यात्रियों को जाता है जो अन्य देशों में वहां के नागरिकों के विषय में अध्ययन के लिए भेजे जाते थे ताकि उनलोगों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित किए जा सकें। यूनानी भूगोल्वेत्ताओं ने उस समय में भूकंप. ज्वालामुखी, ज्वार-भाटा, समुद्री- लहरों जैसी प्राकृतिक तथ्यों और घटनाओं का किया गया। भौगोलोक या प्राकृतिक अवयवों की इस शाखा को प्राकृतिक दर्शन नाम दिया गया। यूनान के कवि होमर द्वारा लिखे गए ग्रन्थ इलियट और ओडेसी में भौगोलिक वर्णन मिलता है। उससमय के भूगोलवेत्ताओ में थेल्स का नाम लिया जाता है जिन्होंने यह व्याख्या की थी पृथ्वी एक प्लेट की तरह है जो महासागर पर तैरेही है। आगे चल कर इसे नकार दिया गया पर थेल्स के योगदान को नकारा नहीं जा सकता। अरस्तु ने थेल्स की कल्पना को सिद्ध करने की कोशिश की। 582 ईसा पूर्व में पाइथागोरस ने पृथ्वी के सही आकार का वर्णन किया।

ग्रीक में भी भूगोल समुद्री यात्राओं से ही जुड़ा है। हिरोटोडस, टाल्मी, इराटस्थनीज, हिप्पार्कास पाईथम, स्ट्रेबो इत्यादि इस काल में महातेपूर्ण भूगोलवेत्ता रहे। रोम में भी भूगोल साम्राज्य विस्तार से जुड़ा था। भारत में भी पृथ्वी का अध्ययन किया गया पर ये अध्ययन पूर्णतया भौगोलिक ना होकर आध्यात्मिक था।

मध्य युग: मध्य काल में लम्बे समय तक अंध युग रहा। पोप और चर्च के बातों से भौगोलिक तथ्य बिलकुल अलग थे जिस कारण से ईसाई धर्म मतावलंबियों ने भूगोल को स्वीकार नहीं किया। पृथ्वी को गोल और गतिशील मानने के कारण गैलिलियो और कोपरनिकस को अनुनाइयों द्वारा काफी यातनाएं दी गयीं। सभी भौगोलिक घटनाओं को ईश्वरीय क्रिया मानी गयी।

मुस्लिम काल में भूगोल की उन्नति हुई। मानचित्र बनाने की काल का इस युग में बहुत विकास हुआ । प्रसिद्द भूगोलवेत्ता इब्नखातून ने दो प्रकार के भौगोलोक वातावरण (मरूउद्यानीय और मरूस्थलीय) का प्रभाव मानव जीवन पर देखा। 25वीं सदी में भूगोल का भी पुनरुत्थान हुआ। व्यापार प्रसार के लिए नए-नए देशों की खोज की गयी। कोलम्बस मार्कोपोलो, वास्कोडिगामा, मैगलन इत्यादि के योगदान ने भूगोल का विस्तार किया। सर टॉमस एलियट ने 26वीं शताब्दी में भूगोल को पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया।

यह काल खोज-युग था जिसमें मार्कोपोलो ने चीन की यात्रा की, प्रिंस हेनरी ने अफ्रीका के किनारे की खोज की, पुर्तगाल निवासियों ने नयी दुनिया की खोज की, नए समुद्री मार्गों का पता लगाया। यह स्वीकार किया गया कि भूगोल के अध्ययन से कल्पना शक्ति का विकास होता है पर भूगोल को पढ़ने की विधि वर्णनात्मक ही रही जो मात्र स्मरण पर बल देती थी। भूगोल में कार्य-कारण संबंधों का अभाव रहा।

आधुनिक युग: सत्रहवीं सदी आते-आते एक बार फिर भूगोल का विकास तीव्र गति से होने लगा।और इसके तीसरे दशक तक यह बिर्बाधगति से चलता रहा। यह इस काल की ही देन है कि भूगोल एक स्वतंत्र विषय के रूप में पाठ्यक्रम में स्थान प्राप्त कर लिया। मरकेटर ने भूगोल को एक व्यवस्थित वैज्ञानिक रूप प्रदान किया। 26 वीं सदी में मानचित्र हेतु प्रारंभ किया गया था जो 27 वीं सदी में हैरिसन के द्वारा क्रोनोमीटर का आव्सिष्कार किया गया जिसके फलस्वरूप मानचित्र पहले की अपेक्षा ज्यादा शुद्ध होने लगे। इस क्रम में सबसे शुद्ध मानचित्र बनाने का श्रेय डेसिल्वे और डी. एन्विल को जाता है।आधुनिक भूगोल का जन्म 29वीं शताब्दी में मन जाता है जिसके लिए श्रेय फ्रैंकलिन और लिविंगस्टोन को दिया जाता है जिन्होंने इस सदी में अफ्रीका महाद्वीप के भीतरी भागों की यात्राएँ की और अंध महाद्वीप के भीतरी भागों का पता लगाया।

हम्बोल्ट को आधुनिक भूगोल का जनक मानते हैं। उन्होंने विश्व मानचित्र पर संताप रेखाओं को दर्शाया। हम्बोल्ट के अनुसार मानव अपने वातावरण पर आश्रित है और वातावरण की विशेषताएं वहाँ के निवासियों को प्रभावित करती हैं। हम्बोल्ट ने अपने जीवन काल में 2977 से 2804 के दौरान दक्षिण अमेरिका और 2829 में रूस का भ्रमण किया। रूस के भ्रमण के दौरान उन्होंने साइबेरिया का भी भ्रमण किया था। जर्मन दार्शनिक इमैनुएल कांट और स्वीडन के भूगोलवेत्ता वर्गमैन ने 28वीं सदी में पृथ्वी का अध्ययन करते हुए कार्य-कारण विधि प्रतिपादित की। मध्य काल में भूगोल को वितरण के विज्ञान के रूप

में जाना जाता था वह 29वीं सदी में रसायन विज्ञान और ज्योतिष विज्ञान के विकास के साथ मानव और उसके पर्यावरण के अंतर्क्रियाओं के अध्ययन का विज्ञान के रूप में परिणत होकर अपने वैज्ञानिक स्वरुप प्राप्त हुआ।

भूगोल के विषय में विभिन्न विद्वानों के मध्य मतान्तर रहा है। किसी स्कूल के विद्वानों ने भूगोल में भौगोलिक वातावरण को महत्वपूर्ण स्थान दिया वहीँ दूसरे स्कूल के विद्वानों ने भूगोल को पृथ्वी, उसकी आकृति और आकार के अध्ययन से सम्बंधित होने पर बल दिया। भूगोल के अध्ययन के तरीके में भी परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगा। पहले इसमें जहाँ स्मरण शक्ति पर बल दिया जाता था वहीँ आधुनिक युग में इसमें तर्क और और चिंतन को महत्व दिया जाने लगा। 29वीं सदी के अंत तक आते-आते भूगोल में नियतिवाद का क्षेत्र बढ़ने लगा और कार्ल रिटर, डार्विन और वैगनर जैसे विद्वानों ने वैज्ञानिक वातावरण को मुख्य स्थान दिया। रेटजेल ने भी वातावरण को अधिक महत्व प्रदान देते हुए यह माना कि वातावरण का प्रभाव मानव जीवन पर पड़ता है। रेटजेल की प्रसिद्द पुस्तक एन्थ्रोपोजियोग्राफी (2882-92) है जिसमें उन्होंने मानव भूगोल के आधुनिक स्वरुप की व्याख्या की परन्तु इस पुस्तक में उन्होंने मानव से अधिक महत्व पर्यावरण को दिया।

20वीं सदी के प्रारंभ में भूगोल के वर्तमान स्वरुप का विकास फ्रांस और जर्मनी में हुआ। बर्लिन में 2870 ई. में और पेरिस तथा लन्दन में 2880 ई. में विश्वविद्यालयों में भूगोल एक विषय के रूप में पढ़ाया जाने लगा। 2900 के दौरान संयुक्त राज्य अमेरिका के विश्वविद्यालयों में भी भूगोल पढ़ाया जाने लगा। भारत के विश्वविद्यालयों में अलीगढ़ विश्वविद्यालय प्रथम विश्वविद्यालय था जहाँ भूगोल का अध्यापन प्रारंभ हुआ था। नियतिवाद के बाद सम्भववाद का प्रारंभ हुआ जिसमें मानवों और मानवों से सम्बंधित तत्वों को भूगोल के अध्ययन में मुख्य स्थान दिया। इसके प्रवर्तकों में ब्लाश और ब्रून्स प्रमुख हैं जिन्होंने मानव को विवेक का प्राणी मानते हुए यह माना कि अपने ज्ञान से मनुष्य भौगोलिक वातावरण का उपयोग अपने अनुसार कर सकता है और आवश्यकतानुसार परिवर्तन भी कर सकता है। संभववाद की मानव सम्बन्धी संकल्पना ने भूगोल को सामाजिक विज्ञानं के रूप में भी स्थापित कर दिया और भूगोल को प्राकृतिक और सामजिक विज्ञानों के बिच एक कड़ी के रूप में देखा जाने लगा। 2920 से 2920 के मध्य में मानवीय तत्वों को अधिक महत्व दिया गया परन्तु मार्टिन ने इस संकल्पना को पूर्णरूपेण नहीं स्वीकारा। फेयरग्रीव, वेल्पटन, और बार्कर ने 2920 के दशक में दोनों विचारधाराओं के मध्य समन्वय स्थापित करते हुए वैज्ञानिक और दोनों मानवीय दोनों को समान रूप से स्वीकार किया। वर्तमान समय में भी भूगोल को इसी रूप में स्वीकार किया जाता है।

अभ्यास प्रश्न

3. ज्योग्राफिका शब्द का सर्वप्रथम उपयोग किसने किया था?
4. भूगोलवेत्ता इब्नखातून ने किन वातावरणों का प्रभाव मानव जीवन पर देखा?
5. भूगोल विषय का भारत के किस विश्वविद्यालय में अध्यापन सर्वप्रथम प्रारंभ हुआ?

1.5 भूगोल के विषय वस्तु

भूगोल शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है- भू+गोल। यदि भूगोल का अंग्रेजी शब्द देखा जाए तो यह भी दो शब्दों से बना है- geo+graphy जिसका वर्णन ऊपर किया जा चुका है।भूगोल को परिभाषित करते हुए यह कहा जा सकता है कि "यह वह विज्ञान है जो पृथ्वी की सतह के विभिन्न भौतिक, जैविक और सांस्कृतिक सुविधाओं के विवरण, वितरण और पारस्परिक क्रिया से संबंधित है"। इस प्रकार उपरोक्त परिभाषा से स्पष्ट है कि भौतिक, जैविक और सांस्कृतिक सुविधाओं का विवरण, वितरण और पारस्परिक क्रिया भूगोल की विषय वस्तु है। भूगोल में सम्मिलित कुछ महत्वपूर्ण घटकों का विवरण निम्नलिखित है।

अवस्थिति: भूपृष्ठ पर विषुवत रेखा के उत्तर या दक्षिण में एक याम्योत्तर पर किसी भी बिंदु की दूरी जो पृथ्वी के केंद्र से नापी जाती है और अंशों, मिनटों और सेकंड में व्यक्त की जाती है, अक्षांश कहलाती है। भूमध्य रेखा 0 डिग्री अक्षांश है। इसी तरह किसी स्थान की कोणीय दूरी जो प्रधान याम्योत्तर (0 डिग्री या ग्रीनविच) के पूर्व व पश्चिम में होती है देशांतर कहलाती है । यह दोनों काल्पनिक रेखायें है जो वास्तविकता में मौजूद नहीं हैं। इसके साथ ही पृथ्वी के दो गोलार्द्ध हैं उत्तरी और दक्षिणी। इन्हीं अक्षांश और देशांतर रेखाओं तथा गोलार्द्ध के आधार पर पृथ्वी पर किसी देश, शहर या स्थान की अवस्थिति निर्धारित की जाती है।

किसी भी स्थान की स्थिति का भौगोलिक तथ्यों पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। जो स्थान भूमध्य रेखा के पास होते हैं वहां गर्मी ज्यादा होती है और साथ ही बारिश भी अधिक होती है। इसके विपरीत जो स्थान भूमध्य रेखा से दूर होते हैं या ध्रुवों के पास होते हैं वहां साल भर बर्फ जमी रहती है। पर्वतों के एक तरफ जहाँ बारिश होती है वहां घने जंगल पाए जाते हैं वहीँ दूसरी तरफ वृष्टि छाया प्रदेश होने से वनस्पतियों का नितांत अभाव होता है।

पारस्परिक क्रिया: भूगोल के अंतर्गत पारस्परिक क्रिया का अध्ययन किया जाता है. मनुष्य और उसके पर्यावरण के मध्य का पास्परिक अन्तर्सम्बन्ध और उनकी व्याख्या भूगोल के अंतर्गत की जाती है. मिस सेम्पुल ने भूगोल को परिभाषित करते हुए कहा है कि मनुष्य का पर्यावरण किस प्रकार मनुष्य के व्यवहार को किस प्रकार स्पष्ट रूप से नियंत्रित करता है। वहीँ पर जेम्स फेयरग्रीव भी भूगोल को परिभाषित करते हुए अपना मत देते हैं कि "भूगोल प्राकृतिक निर्जीव तत्वों तथा सजीव तत्वों के सिद्धांत एवं क्रियाओं के पारस्परिक सम्बन्ध का विज्ञान है." परिभाषा से स्पष्ट है कि भूगोल को पारस्परिक सम्बन्ध अर्थात एक दूसरे को प्रभावित करने तथा एक दूसरे से प्रभावित होने से सम्बंधित विषय के रूप में देखा गया है. निर्जीव वस्तुओं में पृथ्वी, प्राकृतिक घटनाएँ जैसे वर्षा, तूफ़ान, वायु का चलना, सूर्योदय या सूर्यास्त, तापमान परिवर्तन, वायुदाब, मौसम परिवर्तन, जलवायु, ज्वालाम्मुखी, भूकंप, अपरदन, निक्षेपण इत्यादि का सजीव तत्वों जैसे मनुष्य, अन्य जीव-जन्तु या पौधों के जैविकीय और व्यावहारिक क्रियाओं पर किस प्रकार प्रभाव पड़ता है या ये जीवधारी इन निर्जीव चीजों को किस प्रकार प्रभावित करते हैं, भूगोल इसी पारस्परिक क्रिया का अध्ययन है। इसके अलावा भूगोल यह भी स्पष्ट करता है कि यह समस्त भूमंडल का अध्ययन है तो इसे किसी भी सीमा में बांधा नहीं जा सकता है ।उतन यह जितना मनुष्य और उसके सामजिक वातावरण से सम्बंधित है वहीँ यह उसी तरस से प्रकृति और प्राकृतिक वातावरण से भी

सम्बंधित है अतः: इसे मानव और प्राकृतिक वातावरण दोनों के बीच में होने वाली पारस्परिक क्रिया और प्रतिक्रिया के अध्ययन के रूप में देखा जाता है।

मापनी: किसी भी वस्तु का फोटो उस वस्तु के वास्तविक आकर से छोटा या बड़ा हो सकता है परन्तु उस वस्तु की वास्तविक आकृति तथा फोटो में अंकित आकृति एक जैसी होती है ।यही कारण है कि जब हमकिसी परिचित व्यक्ति, वास्तु या स्थान को तस्वीर में देखते हैं तो तुरत पहचान लेते हैं। हम जन भी किसी चीज़ की फोटो लेते हैं तो उस वास्तविक वस्तु के सभी भाग या अंग एक ही अनुपात में छोटे अथवा बड़े होकर फोटो फिल्म पर छप जाते हैं अतः आकार में अंतर आ जाने के बाद भी फोटोग्राफ में पहचान लेते हैं क्योंकि इसमें उसकी आकृति शुद्ध होती है। यह अनुपात ही मापनी कहलाता है। यदि यह अनुपात अशुद्ध हो जाए अर्थात फोटोग्राफ में किसी वस्तु के भाग और अनुपात भिन्न हो जायें या स्वतंत्र रूप से घट या बढ़ जायें तो उस फोटोग्राफ के द्वारा वास्तविक आकृति को पहचानना मुश्किल हो जाता है। मानचित्रों की रचना में इस अनुपात या मापनी का विशेष महत्व होता है।

मानचित्र में प्रदर्शित किन्हीं दो बिन्दुओं के बीच की दूरी तथा उन बिन्दुओं के बीच की धरातल पर वास्तविक दूरी के मध्य के अनुपात को उस मानचित्र को मापनी कहते हैं । उदाहरणस्वरुप- किसी मानचित्र पर दो बिन्दुओं के मध्य की दूरी 2 सेमी है तथा इन्हीं दोनों बिन्दुओं की धरातल पर मापी दूरी 200 मीटर है तो यह स्पष्ट है कि मानचित्र और धरातल पर मापी गयी दूरियों में 2 तथा 20000 सेमी का अनुपात है। यही अनुपात उस मापनी का अनुपात कहा जाएगा। अन्य शब्दों में मापनी का अभिप्राय यह अनुपात है जिसमें धरातल की दूरियों को छोटा करके मानचित्र पर प्रदर्शित किया जाता है।

हमारी पृथ्वी इतनी विशाल है कि इसके आकार के बराबर आकार वाला कोई मानचित्र बनाना अथवा ऐसे मानचित्र को एक दृष्टि में पढ़ना असंभव है। मापनी वह युक्ति है जिसके द्वारा समस्त पृथ्वी अथवा उसके किसी भाग को आवश्यकतानुसार आकार वाला मानचित्र की सहायता से धरातल पर स्थानों के बीच की वास्तविक दूरियाँ ज्ञात की जा सकती है। मापनी के महत्व को इसी बात से समझा जा सकता है कि बिना मापनी केवल अनुमान से बनाए गए किसी मानचित्र को मानचित्र की संज्ञा दी जाती है।

दूरी और परिवर्तन: जैसा की उपरोक्त में लिखा है कि पृथ्वी पर कुछ काल्पनिक रेखाओं का जाल है। इन रेखाओं को अक्षांश और देशांतर के नाम से जानते हैं जो क्रमशः पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण जाती हैं। भूमध्य रेखा से 0° से 90° तक उत्तरी गोलार्द्ध और भूमध्य रेखा के नीचे का 0° से 90° दक्षिणी ध्रुव तक दक्षिणी गोलार्द्ध कहलाता है। इस प्रकार 280 डिग्री अक्षांश होते हैं। उत्तरी गोलार्द्ध में 23°26' उ. कर्क रेखा और 66°33'44" उ. उपध्रुव वृत और दक्षिणी गोलार्द्ध में में 23°26' द. मकर रेखा और 66°33'44" द. उपवृत कहते हैं।2 डिग्री अक्षांशों के चाप की दूरी लगभग 222 किमी होती है जो पृथ्वी की गोलाई के कारण भूमध्य रेखा से ध्रुवों तक भिन्न है। भूमध्य रेखा से ध्रुवों की ओर जाने पर इन अक्षांशों में दिन और रात की अवधि में परिवर्तन होता है। इन अक्षांशों में मध्य रेखा की वृहद् वृत होता है। अन्य अक्षांश नहीं होते हैं। यह परिवर्तन पृथ्वी के अपने अक्ष पर 23.5° झुके होने के कारण होता है। देशांतर कुल 360 डिग्री हैं। 2" देशांतर की भूमध्य रेखा पर दूरी 222.32 किमी है जो ध्रुवों की ओर कम होती जाती है।ध्रुवों पर यह 0 किमी हो जाती है। अतः देशांतर रेखायें भी 360 होती हैं।

सूर्य पूर्व में उदय होता है और पृथ्वी पश्चिम से पूर्व अपनी धुरी पर घूम रही है अतः पूर्व का समय आगे और पश्चिम का समय पीछे रहता है। इसी कारण पृथ्वी के सभी स्थानों पर भिन्न-भिन्न अक्षांशों पर समय भी अलग-अलग रहता है। 25° देशांतर पर 2 घंटे का अंतर आ जाता है। 90° देशांतर पर 6 घंटे और 280° देशांतर पर 22 घंटे और 360° देशांतर पर 24 घंटे का अंतर होता है। 280° पूर्व और पश्चिम देशांतर पर 24 घंटे अर्थात 2 दिन-रात का अंतर हो जाता है।

अभ्यास प्रश्न

6. अक्षांश और देशांतर क्या हैं?
7. जेम्स फेयरग्रीव ने भूगोल को किस रूप में परिभाषित किया है ?
8. मापनी क्या है?
9. हर 25° देशांतर पर समय में कितना अंतर आ जाता है ?

1.6 भूगोल शिक्षण के लक्ष्य और उद्देश्य

किसी भी विषय के शिक्षक के लिए उस विषय के लक्ष्यों और उद्देश्यों के बारे में जानना अत्यन्त आवश्यक है। तभी शिक्षक समझ पाएगा कि वह शिक्षण के द्वारा किन लक्ष्यों और उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास कर रहा है। यदि लक्ष्य एवं उद्देश्य पूर्व निर्धारित ना हों तो व्यवहार परिवर्तन किस दिशा में जा रहा है यह सकारात्मक है या नकारात्मक, इसका निर्धारण मुश्किल हो जाएगा। शिक्षण के लक्ष्य को परिभाषित करते हुए भट्टाचार्य लिखते हैं "दीर्घ काल में जो व्यवहारगत परिवर्तन होते हैं या जिन अभिक्षमताओं की प्राप्ति या योग्यताओं की उपलब्धि किसी विषय के अध्ययन से हो पाती है,जिनकी प्रप्तिके लिए ही उस विषय को पढाया जाता है। अतः उन्हें शिक्षण के लक्ष्य की संज्ञा दी जाती है। किसी एक या दो पाठ या प्रकरण को पढ़ने या सिखने के बाद इन बिन्दुओं तक पंहुचना संभव नहीं हो पाता है।" राजस्थान शिक्षा बोर्ड, अजमेर ने माध्यमिक स्तर पर भूगोल शिक्षण के लक्ष्यों को स्पष्ट किया है जो निम्नवत हैं।

1. भूगोल के विद्यार्थियों को उस विश्व मंच के बारे में स्पष्ट जानकारी दी जा सकती है जिस पर उत्तम जीवन, भोजन, वस्त्र, तथा आवास जैसी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के परिप्रेक्ष्य में मानव जीवन के नाटक का सञ्चालन होता है। भूगोल के शिक्षण के माध्यम से विद्यार्थियों के दृष्टिकोण को व्यापक बनाया जा सकता है जो मानवसेवा, सद्भावना, कल्याण और मानवता रक्षा से जुड़ा है। इसे यूनेस्को से प्रकाशित 'भूगोल सम्बन्धी शिक्षण सुझाव' में भी सिकार किया गया है।
2. भूगोल का ज्ञान प्रकृति के साथ मानवीय समायोजन तथा मानव पर्यावरण अंतर्क्रियात्मक सम्बन्ध के मामले में यथार्थ अवबोध को विकसित करने में मदद करता है। और यह भूगोल का लक्ष्य भी है

3. भूगोल शिक्षण का लक्ष्य मानव जीवन में उन्नति तथा प्रगति के लिए किए जाने वाले प्रयास, उपलब्धि, विश्व में विकसित हो रहीं विविध समस्याओं ततः उनके समाधान आदि के प्रति जागरूकता को विकसित करना है।
4. विद्यार्थियों में उन गुणग्रहण क्षमता को विकसित करना है जिसके द्वारा स्थानीय स्तर से लेकर अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक निरंतर आवश्यक पारस्परिक सहयोग की प्रवृत्ति तथा उसकी आवश्यकता का अनुधावन करना भूगोल शिक्षण का एक और लक्ष्य है।
5. भूगोल अध्यापन का लक्ष्य विश्व ले विभिन्न कक्षेत्रों तथा प्रदेशों के निवासियों के विविध तथा विचित्र जीवनयापन प्रणालियों,आचार-विचार, आदत, व्यवहार, परम्पराओं तथा विश्व धरोहरों के प्रति सहानुभूति के भाव को जगाना है।
6. भूगोल शिक्षण के माध्यम से विभिन्न राष्ट्रों के मध्य बंधुत्व की भावना विकसित करते हुए उनमें सम्पूर्ण विश्व को एक मानने की भवनको विकसित करना।
7. भूगोल शिक्षण के माध्यम से ऐसी चिंतन प्रक्रिया और इच्छाशक्ति को विकसित करना जिससे किसीभी नवीन परिस्थिति में तथ्यों को प्राप्त करना, विश्लेषित करना और निष्कर्ष तक विद्यार्थी स्वयं पंहुच सकें।
8. भूगोल शिक्षण राष्ट्रीय तथा विश्व के सन्दर्भ में बुद्धिमतापूर्ण नागरिकता के गुणों कोविक्सित करने की आकांक्षा को पूर्ण करने का प्रयास करता है।जिसके फलस्वरूप समाज सम्पन्न, समुन्नत और सुदृढ बनता है।

उद्देश्य:

प्रो. होल्ट्ज़ के भूगोल शिक्षण अधिगम के उद्देश्यों को मुख्य रूप से दो भागों में बाँटा है, व्यावहारिक और सांस्कृतिक उद्देश्य।

1. व्यावहारिक उद्देश्य- (i) स्थलरुप सम्बन्धी ज्ञान की प्राप्ति (ii) व्यवसाय कृषि तथा उद्योग-धंधे आदि के बारे में ज्ञान प्राप्ति (iii) जीवन को ठीक से से समझने के लिए विभिन्न प्रदेशों की भौगोलिक परिस्थितियों की सूझ प्राप्ति (iv) समाचार पात्र तथा पुस्तकों में आने वाले भौगोलिक सन्दर्भों के स्पष्टीकरण की क्षमता अर्जित करना (v) पर्यटन सम्बन्धी इच्छा का विकास।
2. सांस्कृतिक उद्देश्य- (i) स्वदेश प्रेम की भावना की उत्पत्ति (ii) प्राकृतिक सौंदर्य ज्ञान एवं यथार्थ की अनुभूति (iii) वसुधैव कुटुम्बकम की भावना,सद्भावना,सहयोग और सहानुभूति का विकास (iv) मानव और पृथ्वी के अंतर्संबंधों के आधार पर विश्व के पदार्थों का मूल्यांकन करने की क्समता का अर्जन (v) भौगोलिक परिस्थितियों के अनुसार मानव जीवन में अनुकूलन के महत्व एवं आवश्यकता को समझ पाना।

   इन उद्देश्यों के आधार पर भूगोल शिक्षण के उद्देश्य निम्नवत निर्धारित किए जा सकते हैं-

   1. विद्यार्हियों का मानसिक शक्तियों का विकास इस प्रकार से करना कि उनमें तर्क-शक्ति, कल्पनाशीलता,निरिक्षण करने की शक्ति और निर्णय लेने की योग्यता का विकास करना।
   2. देश-प्रेम के साथ-साथ विश्व-बन्धुत्व की भावना जागृत करना।

3. भूगोल शिक्षण द्वारा विद्यार्थियों में देश-विदेश के निवासियों के प्रति प्रेम और सहानुभूति की उत्पत्ति।
4. अपने देश और दुसरे देशों की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, समस्याओं का अध्ययन करते हुए विद्यार्धियों में विवेकपूर्ण दृष्टिकोण विकसित करना।
5. मानव और उससे सम्बंधित वातावरण पर भौगोलिक परिस्थितियों के प्रबह्व को स्पष्ट करना।
6. विद्यार्थियों में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं के प्रति रूचि उत्पन्न करना।भावी नागरिकों को प्राकृतिक संसाधनों का उचित उपयोग के साथ मितव्ययता सीखाना।
7. भूगोल के माध्यम से विद्यार्थियों को जीविकोपार्जन के योग्य बनाना।
8. विद्यार्थियों में प्रकृति के प्रति प्रेम उत्पन्न करना तथा पर्यावरण संरक्षण के प्रति प्रेरित करना।
9. विश्व रंगमंच की कल्पना करना।
10. विद्यार्थियों को जनतांत्रिक मूल्यों की जानकारी देना और उन्हें बेहतर नागरिक बनाना।

अभ्यास प्रश्न

10. किसी भी विषय के शिक्षण में लक्ष्य का क्या अर्थ है?
11. प्रो. होल्ट्ज़ के अनुसार शिक्षा के व्यावहारिक उद्देश्य क्या हैं

1.7 सारांश

भूगोल ने अपने वर्तमान रूप की प्राप्ति के लिए एक लम्बी दूरी तय की है। एक विषय के रूप में यह जितना प्राचीन है उतना ही नवीन भी। मनुष्य एक ज्ञान वान प्राणी है और अपने इसी ज्ञान के आधार पर वह नित नए अध्याय भूगोल में जोड़ रहा है ।। विद्यालयी पाठ्यचर्या में भूगोल एक महत्वपूर्ण विषय है जिसके द्वारा विभिन्न लाख्श्यों और उद्देश्यों के प्राप्ति का प्रयास किया जाता है और एक अध्यापक के लिए इसकी जानकारी आवश्यक है।

1.8 शब्दावली

1. भूगोल: भूगोल वह विज्ञान है जो पृथ्वी की सतह के विभिन्न भौतिक, जैविक और सांस्कृतिक सुविधाओं के विवरण, वितरण और पारस्परिक क्रिया से संबंधित है।
2. मापनी: मानचित्र में प्रदर्शित किन्हीं दो बिन्दुओं के बीच की दूरी तथा उन बिन्दुओं के बीच की धरातल पर वास्तविक दूरी के मध्य के अनुपात को उस मानचित्र को मापनी कहते हैं।

3. अक्षांश: भूपृष्ठ पर विषुवत रेखा के उत्तर या दक्षिण में एक याम्योत्तर पर किसी भी बिंदु की दूरी जो पृथ्वी के केंद्र से नापी जाती है और अंशों, मिनटों और सेकंड में व्यक्त की जाती है, अक्षांश कहलाती है
4. देशांतर: किसी स्थान की कोणीय दूरी जो प्रधान याम्योत्तर (0 डिग्री या ग्रीनविच) के पूर्व व पश्चिम में होती है देशांतर कहलाती है।
5. कर्क रेखा: उत्तरी गोलार्द्ध में 23°26' पर जाने वाली काल्पनिक रेखा को कर्क रेखा कहते हैं।
6. मकर रेखा: दक्षिणी गोलार्द्ध में में 23°26' पर जाने वाली काल्पनिक रेखा को मकर रेखा कहते हैं।

1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. इराटस्थनीज ने भूगोल को "पृथ्वी वर्णन" या "भू-विवरण" का अध्ययन माना है।
2. मानव और उसके समाज की विषद विवेचना भूगोल में की जाती है। मानवीय क्रियाकलाप और उनका समाज किसी विशेष भौगोलिक दशा में किस प्रकार होगा इसका वर्णन भूगोल करता है। अतएव यह कहा जा सकता है कि भूगोल की प्रकृति सामाजिक भी है।
3. इरटास्थनीज ने सबसे पहले ज्योग्राफिका शब्द का प्रयोग किया था।
4. भूगोलवेत्ता इब्नखातून ने दो प्रकार के भौगोलोक वातावरण- मरूउद्यानीय और मरूस्थलीय, का प्रभाव मानव जीवन पर देखा।
5. सर्वप्रथम भारत के विश्वविद्यालयों में अलीगढ़ विश्वविद्यालय में भूगोल का अध्यापन प्रारंभ हुआ था।
6. भूपृष्ठ पर विषुवत रेखा के उत्तर या दक्षिण में एक याम्योत्तर पर किसी भी बिंदु की दूरी जो पृथ्वी के केंद्र से नापी जाती है और अंशों, मिनटों और सेकंड में व्यक्त की जाती है, अक्षांश कहलाती है और इसी तरह किसी स्थान की कोणीय दूरी जो प्रधान याम्योत्तर (0 डिग्री या ग्रीनविच) के पूर्व व पश्चिम में होती है देशांतर कहलाती है।
7. जेम्स फेयरग्रीव ने भूगोल को परिभाषित करते हुए कहा है कि "भूगोल प्राकृतिक निर्जीव तत्वों तथा सजीव तत्वों के सिद्धांत एवं क्रियाओं के पारस्परिक सम्बन्ध का विज्ञान है."
8. मापनी का अर्थ वह अनुपात है जिसमें धरातल की दूरियों को छोटा करके मानचित्र पर प्रदर्शित किया जाता है।
9. हर 25° देशांतर पर 2 घंटे का अंतर आ जाता है।
10. दीर्घ काल में जो व्यवहारगत परिवर्तन होते हैं या जिन अभिक्षमताओं की प्राप्ति या योग्यताओं की उपलब्धि किसी विषय के अध्ययन से हो पाती है,जिनकी प्रप्तिके लिए ही उस विषय को पढाया जाता है। अतः उन्हें शिक्षण के लक्ष्य की संज्ञा दी जाती है।
11. प्रो. होल्ट्ज़ के अनुसार शिक्षा के व्यावहारिक उद्देश्य- (i) स्थलरुप सम्बन्धी ज्ञान की प्राप्ति (ii) व्यवसाय कृषि तथा उद्योग-धंधे आदि के बारे में ज्ञान प्राप्ति (iii) जीवन को ठीक से से समझने के लिए विभिन्न प्रदेशों की भौगोलिक परिस्थितियों की सूझ प्राप्ति (iv) समाचार पात्र तथा पुस्तकों में

आने वाले भौगोलिक सन्दर्भों के स्पष्टीकरण की क्षमता अर्जित करना (v) पर्यटन सम्बन्धी इच्छा का विकास हैं।

1.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Kaur, B. (2020). Teaching of Geography New Trends & Innovations. New Delhi: Deep & Deep Publications PVT. LTD.
2. Varma, O.P. (2024). Geography Teaching. New Delhi: Sterling Publishers Pvt. Ltd.
3. भट्टाचार्य, जी.सी. (n.d.). भूगोल अध्यापन. आगरा: विनोद पुस्तक मंदिर.
4. सिंह, एच.एन. (2024). भूगोल शिक्षण. आगरा: अग्रवाल पब्लिकेशनस.

1.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. भौगोलिक ज्ञान की प्रकृति क्या है ? वर्णन करें।
2. भूगोल के बदलते मानदंडों/प्रतिमानों पर प्रकाश डालें।
3. किसी भी विषय के शिक्षण से पूर्व लक्ष्यों और उद्देश्यों का निर्धारण क्यों आवश्यक है? भूगोल शिक्षण के लक्ष्य और उद्देश्यों की विस्तृत विवेचना करें।

इकाई 2 - भूगोल में कौशलों (अवलोकन, तथ्यों का अभिलेखन एवं प्रस्तुतीकरण) का विकास; भूगोल शिक्षण में उपागम (आगमनात्मक, निगमनात्मक, अन्तर-अनुशासनत्मक, रचनात्मक इत्यादि), रणनीतियां (सहयोगपूर्ण, योजना, समस्या समाधान, प्रयोगात्मक, विवरणात्मक इत्यादि) और संसाधन (मानचित्र, रेखाचित्र, उपग्रह से भेजे गए चित्र, आकाशीय चित्र)

Developing Skills (Observation, Recording and Interpretation of Phenomena etc.) in Geography. Approaches (inductive, Deductive, Inter-disciplinary, Constructive etc.), Strategies and Resources (Maps, Diagrams, Satellite images, Aerial Photographs etc.) in teaching of Geography

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 भूगोल में कौशलों का विकास
2.4 भूगोल शिक्षण में उपागम
2.5 भूगोल शिक्षण की रणनीतियां
2.6 भूगोल शिक्षण में संसाधन
2.7 सारांश
2.8 शब्दावली
2.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.10 संदर्भ ग्रंथ सूची
2.11 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

भूगोल के शिक्षकों के लिए यह जानना आवश्यक है कि इस विषय में विभिन्न कौशलों का प्रयोग किस प्रकार किया जाता है । भूगोल एक प्रायोगिक विषय है अतः इसमें विभिन्न घटनाओं और प्रयोगों का क्रियान्वयन, संपादन, अवलोकन और उनका अभिलेखन और प्रस्तुतीकरण करना एक शिक्षक को आना चाहिए तभी वे विद्यार्थियों में इन कौशलों का विकास कर पाएंगें इसके अतिरिक्त भूगोल अध्यापन में किन उपागमों और रणनीतियों का प्रयोग एक अध्यापक अपनी कक्षा में कर सकता है यह भी अध्यापक को पता होना चाहिए। अंत में अपनी कक्षा में किन-किन संसाधनों का प्रयोग एक अध्यापक कर सकता है। यह पाठ इन्हीं बिन्दुओं का वर्णन करता है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के अध्ययन के उपरांत विद्यार्थी

1. भूगोल से सम्बंधित विभिन्न कौशलों का विकास किस प्रकार किया जा सकता है, बता सकेंगे। विभिन्न।
2. विभिन्न उपागमों से जुडी सावधानियों और लाभ तथा सीमाओं का वर्णन कर सकेंगे।
3. विभिन्न रणनीतियों का प्रयोग अपनी कक्षा में शिक्षण के दौरान कर सकेंगे ।
4. विभिन्न भौगोलिक संसाधनों की व्याख्या कर सकेंगे तथा उनका प्रयोग अपनी कक्षा में कर सकेंगे ।

2.3 भूगोल में कौशलों का विकास

भौगोलिक कौशल हमें भौगोलिक दृष्टि से सोचने और समझने के लिए आवश्यक तकनीकी और उपकरण प्रदान करते हैं । भूगोल के विशिष्ट दृष्टिकोण में पृथ्वी के भौतिक और और मानवीय प्रतिरूपों और प्रक्रियाओं को समझने हेतु ये केन्द्रीय भूमिका निभाते हैं । भूगोल में सीखे गए ये कौशल मात्र कक्षाओं तक ही नहीं बल्कि दैनिक जीवन में भी अत्यन्त लाभकारी सिद्ध होते हैं । जैसे कौशल के रूप में अवलोकन का प्रयोग मात्र कक्षाओं तक ही सीमित होकर नहीं रह जाता है बल्कि छात्र इनका प्रयोग दैनिक जीवन में भी करते हैं । भौगोलिक ज्ञान को प्राप्त, व्यवस्थित और फिर उसके उपयोग को हम विभिन्न परिस्थितियों में कर पाते हैं भूगोल के पर्यावरणीय और सामजिक मुद्दों के ज्ञान का प्रयोग दैनिक निर्णय और सामुदायिक गतिविधियों में किया जा सकता है।

अवलोकन: भूगोल का जन्म मानव की जिज्ञासु प्रवृति तथा उसके प्रेक्षण कर सकने की क्षमता से हुआ है. मानव की प्रकृति में किसी भी वस्तु या घटना का निरीक्षण करना है. मनुष्य ने अपने आस-पास के क्षेत्र, वहाँ के लोगों, प्राकृतिक घटनाओं तथा वातावरण का अवलोकन कर उसकी व्याख्या करने से भूगोल का

उदभव हुआ. अवलोकन वह कौशल है जो अधिगम को सरल बनाता है क्योंकि जब विद्यार्थी स्वयं अवलोकन करता है तो वह शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में अधिक तल्लीन हो जाता है। अवलोकन कौशल के उपयोग से विद्यार्थी किसी घटना के कारणों और परिणामों की जाँच और व्याख्या कर सकते हैं और भौगोलिक दृष्टिकोण के साथ आगे के परिणामों पर चर्चा कर सकते हैं। आगे यदि अगर कोई मिलती जुलती स्थिति उनके समक्ष आती है तब वे पूर्व में किए अवलोकन से संबंधों को स्थापित करते हुए उससे प्राप्त परिणामों के आधार पर नवीन स्थिति के विषय में किसी निष्कर्ष पर पंहुच सकते हैं। और इसके आधार पर वे अपने व्यवहार का परिमार्जन कर सकता हैं कि इन स्थितियों में उनका क्या व्यवहार होना चाहिए।

तथ्यों का अभिलेखन एवं प्रस्तुतीकरण: भूगोल में मुख्य रूप से हर एक स्तर पर जिन तथ्यों के अभिलेखन एवं प्रस्तुतीकरण में कौशलों के विकास पर जोर दिया जाता है वह इस प्रकार से हैं।

मानचित्रण- दूरी, अक्षांश और देशांतर, मापक, कम्पास दिशा, क्षेत्र गणना, बेयरिंग, प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक सुविधाओं के स्थान, ऊंचाई का निर्धारण, नक्षा निर्माण, मौसम मानचित्र, कार्टोग्राम्स इत्यादि का अभिलेखन एवं प्रस्तुतीकरण।

रेखांकन: डंडाकृति, वृताकृति, प्रतिशत डंडाकृति, स्कैटरग्राफ, डॉट वितरण, जलवायु रेखांकन इत्यादि का अभिलेखन एवं प्रस्तुतीकरण।

तालिका: तालिकाओं के लिए पैटर्न, साधारण गणना हेतु मध्यमान, मध्यांक, बहुलांक, प्रतिशत, आवृति के रूप में तथ्यों का अभिलेखन एवं प्रस्तुतीकरण।

विसुअल्स: चित्र, कार्टून, रेखाचित्रों का अभिलेखन और प्रस्तुतीकरण।

तथ्यों के अभिलेखन और प्रस्तुतीकरण में कई श्रेणियां होती हैं जिनका वर्णन किया जा रहा है;

(i) भौगोलिक संसाधन व्याख्या कौशल: भौगोलिक संसाधन व्याख्या कौशल के अंतर्गत नक्शों, चित्रों, सांख्यिकी, ग्राफ, पाठ, नमूनों, प्रतिरूपों (मॉडल), भाषण, सर्वेक्षण, फिल्म्स, विडियो क्लिप, Geographical Information System (GIS) द्वारा प्राप्त सूचनाओं अभिलेखन और प्रस्तुतीकरण किया जाता है।

(ii) भौगोलिक संसाधन निर्माण कौशल: इसमें स्थानिक सूचनाओं, स्केच, नक्शों, रेखांकन, तालिकाओं का निर्माण, गणना प्रदर्शन, GIS का प्रयोग सूचनाओं के प्रस्तुतीकरण के लिए किया जाता है।

(iii) भौगोलोक सूचनाओं का अभिलेखन और प्रस्तुतीकरण निबंध, पैराग्राफ, दृश्यों, फिल्म, भाषण, खेल, पहेली, ब्लॉग, ग्राफ़िक्स, मॉडल्स के रूप में करना।

(iv) सर्वेक्षणों, प्रश्नावलियों, फील्ड स्केचिंग , मापन, अवलोकन से प्राप्त सूचनाओं का अभिलेखन, प्रस्तुतीकरण करना।

अभ्यास प्रश्न

1. अवलोकन अधिगम को किस प्रकार सरल बनता है?

2. GIS का पूरा नाम क्या है?
3. तालिका निर्माण कौशल में विद्यार्थियों को क्या सीखाया जा सकता है?

2.4 भूगोल शिक्षण में उपागम

भूगोल शिक्षण में कक्षा में कई उपागमों का प्रयोग किया जाता है जिससे शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को सरल, रोचक बनाया जा सके और विषय तथा प्रकरण के उद्देश्यों को भी प्राप्त किया जा सके । कुछ उपागमों का विवरण नीचे वर्णित हैं।

2.4.2 आगमनात्मक उपागम

भूगोल शिक्षण की विभिन्न उपागमों में एक उपागम आगमनात्मक है। इस उपागम में विद्यार्थी "विशिष्ट से सामान्य" की ओर अग्रसर होते हैं। आगमनात्मक में उदाहरण पहले बताए जाते हैं और कई उदाहरणों के आधार पर विद्यार्थी कुछ प्रश्नों के माध्यम से स्वयं निष्कर्ष पर पंहुचते हैं। शिक्षक उदाहरणों को बताने के पश्चात् भी यदि विद्यार्थियों को निष्कर्ष तक पहुँचने में यदि कोई समस्या होती है तो शिक्षक विद्यार्थियों को नियमों, सिद्धांतों, संकल्पनाओं और तथ्यों को स्पष्ट करता है। उपर्युक्त कथनों से स्पष्ट है कि इस उपागम में कई उदाहरणों के आधार पर किसी सामान्य नियम, सिद्धांतों, संकल्पनाओं और तथ्यों पर पहुँचता है। उदाहरणस्वरुप- शिक्षक भारत के मानचित्र में उड़ीसा को दिखाते हुए वहाँ के लोगों के मुख्य व्यवसाय के विषय में प्रश्न पूछ सकता है। उनका मुख्य भोजन क्या है ? और प्रश्न वह तमिलनाडु, केरल, पश्चिमी बंगाल को दिखाते हुए पूछ सकता है। इससे विद्यार्थी स्वयं इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि किसी स्थान की भौगोलिक स्थिति का वहाँ के भोजन और व्यवसाय पर क्या असर पड़ता है।

इस उपागम में विद्यार्थी रुचिपूर्ण तरीके से ज्ञान प्राप्त करते हैं। इस उपागम का प्रयोग तभी सफल हो सकता है जब दिए गए उदाहरण विद्यार्थियों के मानसिक स्तर, अवस्था और पिछली कक्षा में अर्जित ज्ञान से संबंधित हो। और इस हेतु अध्यापक को यह प्रयास करना चाहिए कि वह विद्यार्थियों के मानसिक स्तर, अवस्था और पिछली कक्षा में अर्जित ज्ञान के विषय में पूरी जानकारी रखे। इस प्रकार इस विधि में शिक्षक की अग्रणी भूमिका है। शिक्षक को कक्षा में प्रयाप्त संख्या में दृष्टान्त देने चाहिए जिससे विद्यार्थी निष्कर्ष पर पंहुच सकें। शिक्षक द्वारा उदाहरणों का चयन और उसके पश्चात् उदाहरणों का सही रूप में प्रस्तुतीकरण अत्यंत आवश्यक है। सही रूप से सही संक्या में दृष्टान्त न होने पर विद्यार्थी कई बार गलत निष्कर्ष पर पंहुच जाते हैं। इसके साथ ही शिक्षक को कक्षा में निष्कर्ष पर पंचुचने हेतु विद्यार्थियों को पर्याप्त समय देना चाहिए क्योंकि उतावलेपन में विद्यार्थी गलत निष्कर्ष पर जा सकते हैं।अतः इस उपगाम्के प्रयोग के लिए अध्यापक का कुशल होना आवश्यक है। भूगोल में जब विद्यार्थियों को कोई भौगोलिक नियम या सिद्धांत पढ़ना हो तो ऐसी स्थिति में आगमनात्मक उपागम का प्रयोग करना उत्तम होता है। हालांकि यह उपागम अधिक समय लेता है और इस उपागम का प्रयोग करने में शिक्षकों को अधिक समय देना पड़ता है और श्रम करना पड़ता है। परन्तु इस उपागम का यह लाभ है किविद्यार्थी भी इसमें सक्रीय रहते हैं, मानसिक क्रियायें करते हैं और निष्कर्ष पर पंचुचने का प्रयास करते हैं। उनका नवीन ज्ञान उनके

पूर्व ज्ञान पर आधारित होता है अतः ज्ञान एक कड़ी के रूप में जुड़ता चला जाता है। इस विधि द्वारा अर्जित ज्ञान को विद्यार्थी जल्दी नहीं भूलता क्योंकि वह स्वयं के प्रयास से निश्चित तथ्य तक पहुँचता है।

लाभ:

1. विद्यार्थी केवल नियम या सिद्धांत ही नहीं सीखते पर सूचनाओं का किस प्रकार सामान्यीकरण किया जा सकता है यह भी सीख जाते हैं।
2. इस विधि में विद्यार्थी स्वयं निष्कर्षों तक पहुँचते हुए सीखते हैं अतः प्राप्त ज्ञान अपेक्षाकृत स्थायी होता है।
3. रटने की प्रवृति को इस उपागम के माध्यम से हतोत्साहित किया जा सकता है।
4. भौगोलोक नियमों और सिद्धांतों के शिक्षण हेतु सर्वश्रेष्ठ विधि है।
5. विद्यार्थियों का आत्मविश्वास बढ़ता है।
6. ज्ञान एक कड़ी के रूप में पूर्व में अर्जित ज्ञान से जुड़ जाता है।
7. विद्यार्थी सक्रीय भूमिका में होते हैं।यह छात्र केन्द्रित शिक्षण अधिगम से जुड़ा है।
8. विद्यार्थियों में चिंतन और कल्पनाशीलता का विकास होता है।

सीमायें:

1. शिक्षकों हेतु यह समय-साध्य और श्रम-साध्य विधि है।
2. छोटी कक्षओंके विद्यार्थियों के साथ इस उपागम का प्रयोग नहीं किया जा सकता क्योंकि मानसिक स्तर पर वे इतने विकसित नहीं होते हैं ।
3. शिक्षक का कुशल होना आवश्यक है क्योंकि दृष्टान्तों के अपर्याप्त और भ्रामक होने की दशा में विद्यार्थी किसी निष्कर्ष तक नहीं पहुँच सकते।

2.4.2. निगमनात्मक उपागम

निगमनात्मक उपागम आगमनात्मक उपागम के विपरीत होता है। इसमें सामान्य से विशिष्ट की ओर जाते हैं। आगमनात्मक उपागम में "विशिष्ट से सामान्य" की ओर जाते हैं पर निगमनात्मक उपागम में "सामान्य से विशिष्ट" की ओर जाने का प्रयास शिक्षकों के द्वारा किया जाता है। शिक्षक सामान्य नियम को स्पष्ट करने के पश्चात् कुछ विशिष्ट उदाहरणों को विद्यार्थियों के सामने प्रस्तुत करता है जैसे शिक्षक पहले तथ्यों, नियमों, सिद्धांतों या संकल्पनाओं को विद्यार्थियों को बताता है और तद्पश्चात उन तथ्यों, नियमों, सिद्धांतों या संकल्पनाओं के पक्ष में उदाहरणों को प्रस्तुत किया जाता है। उदाहरणतः- शिक्षक अपनी कक्षा में सामान्य नियम बताता है कि भौगोलिक स्थिति व्यक्ति के खाद्य सम्बन्धी आदतों को प्रभावित करती है और फिर इस सम्बन्ध में कुछ समुद्र तटीय देशों द्वीपों, और स्थानों का उदहारण देता है कि उन प्रदेश में रहने वालों का मुख्य खाद्य पदार्थ मछली और अन्य जलीय जीव हैं । इससे विद्यार्थी इन उदाहरणों से सिद्धांत को सत्यापित कर लेते हैं।

इसमें उदाहरणों को देने के पश्चात् सामान्य नियम की पुष्टि की जाती है। अतः इस उपागम में पहले नियमों को बताने के पश्चात् तर्कों या प्रमाणों के द्वारा नियमों की पुष्टि की जाती है। भूगोल शिक्षण-अधिगम में निगमन को आगमनात्मक उपागम के पूरक के रूप में देखा जाता है। जिसमें पहले विशिष्ट उदाहरणों को दिया जाता है तद्पश्चात सामान्य सिद्धांत और नियम बताए जाते हैं और फिर उन नियमों या सिद्धांतों की पुष्टि के लिए पुनः उदाहरण देते हैं इससे विद्यार्थी स्वयं सिद्धांतों और उदाहरणों के मध्य सम्बद्धता स्थापित करता है।

लाभ:

1. ज्ञान के प्रयोग और परीक्षण हेतु यह विधि सर्वोत्कृष्ट है।
2. इस विधि में श्रम तथा समय की बचत होती है जो आगमनात्मक में नहीं है। शिक्षक का कार्य सरल हो जाता है।
3. प्रारंभिक कक्षाओं में भी इसका प्रयोग आसानी से हो जाता है।
4. अधिक संख्या में दृष्टान्तों की आवश्यकता नहीं होती है। नियम या सिद्धांत स्पष्ट करने के पश्चात् दो-तीन दृष्टान्त भी पर्याप्त होते हैं।

सीमायें:

1. यह विधि रटने को कई बार प्रश्रय देती है। विद्यार्थी सिद्धांत या नियम याद कर लेते हैं और उससे सम्बंधित उदाहरणों को रट लेते हैं तो शिक्षक के लिए यह समझना कठिन हो जाता है कि विद्यार्थी ने संकल्पना को ग्रहण किया है या सिर्फ रटकर काम चला रहा है।
2. विद्यार्थियों को अपने विचार प्रकट करने का अवसर नहीं मिलता है। विद्यार्थी कक्षा में मिले ज्ञान पर आश्रित हो जाते हैं स्वयं के द्वारा कोई प्रयास नहीं करते हैं।

2.4.3 अन्तर-अनुशासनत्मक उपागम

भूगोल अपने स्वभाव से अंतरानुशासनात्मक विषय है। अपने विषय क्षेत्र, विधियों, विषय वस्तु, के आधार पर यह विज्ञान और सामाजिक विज्ञान दोनों में सम्मिलित होता है अर्थात यह वैज्ञानिक और मानवीय दोनों है । यही कारण है कि इस विषय को पढ़ने में भी अंतर-अनुशासनात्मक उपागम को अपनाए जाने की आवश्यकता है। इससे एक विषय या एक क्षेत्र में अर्जित ज्ञान को दुसरे क्षेत्र में प्रयोग में लाना आसान हो जाता है। भूगोल प्रत्यक्ष रूप में भौतिक, रासायनिक, जीव विज्ञानं से सम्बंधित है और इसके साथ ही इतिहास, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, वाणिज्य, राजनीति शास्त्र, नृविज्ञान, मनोविज्ञान आदि जैसे विषयों से सम्बंधित है। तो अंतर-अनुशासनात्मक उपागम का प्रयोग भूगोल के ज्ञान को अन्य विषयों के लिए स्थान्तरित करने में और अन्य विषयों में अर्जित ज्ञान को भूगोल में अपनाये जाने में सहायक सिद्ध होगा। हमारे यहाँ विद्यालयों में शिक्षण के क्षेत्र में सबसे बड़ा दुर्भाग्य यही है कि हम विभिन्न विषयों में शिक्षण के द्वारा सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास कभी नहीं करते हैं। अंतर-अनुशासनात्मक उपागम अपनाने से यह लाभ होता है कि विद्यार्थी विषयों के मध्य के संयोजन को समझ पाते हैं और यह भी समझये हैं की कोई भी विषय कम महत्वपूर्ण नहीं हॉट है। विद्यार्थी जब एक विषय का दुसरे विषय से

सम्बन्ध स्थापित करनासीख जाते हैं तो वह आगे चल कर उपयुक्त विषय का वास्तविक जीवन से भी सहसम्बन्धित कर लेते हैं जो किसी भी शिक्षा का लक्ष्य है। यह अंतर-अनुशासनात्मक उपागम विभिन्न विषयों की जानकारी ही नहीं देता बल्कि शिक्षण को सरल, सहज एवं प्रभावकारी बनता है

लाभ:

1. अंतर-अनुशासनात्मक उपागम का प्रयोग एक विषय में अर्जित ज्ञान को विभिन्न अन्य विषयों में हस्तांतरित करता है जिससे अधिगम कठिन नहीं रह जाता है। जैसे- चट्टानों के रासायनिक विघटन या अम्ल वर्षा को रसायन विज्ञान से जोड़ कर पढ़ाया जा सकता है।
2. यह ज्ञान की अखंडता और समृद्धता का पोषण करता है।
3. शिक्षण प्रभावी और रोचक बनता है।
4. विद्यार्थी अर्जित ज्ञान का प्रयोग अपने दीनिक जीवन में करने में सफल होते हैं।
5. विद्यार्थी तार्किक रुप से कार्य-कारण सम्बन्ध स्थापित करने में सफल होते होते हैं।
6. इससे विषयों की अधिकता को कम किया जा सकता है।
7. विद्यार्थियों के दिमाग से बेवजह के भर को कम करता है क्योंकि विद्यार्थी किसी संकल्पना को दोहराने के मनोवैज्ञानिक दबाव से बाख जाते हैं।
8. विद्यार्थी प्रत्येक विषय को बराबर का महत्व देते हैं किसी भी विषय को बड़ा या छोटा मानाने की भावना नहीं रहती है।

सीमायें:

1. सभी पाठ में इस उपागम का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।
2. इस उपागम की सफलता शिक्षक के कौशल पर निर्भर करती है कि वह किस सफलता के साथ अंतर-अनुशासनात्मक उपागम का प्रयोग कर सकता है।

2.4.4 रचनात्मक उपागम

शिक्षण-अधिगम किसी भी विषय से सम्बंधित हो उसमें रचनात्मकता आवश्यक होती है। भूगोल भी इससे इतर नहीं है। रचनात्मक उपागम में विद्यार्थी की पूर्व समझ और सामाजिक स्थान के मध्य के सहसंबंधों के आधार पर उसको सक्रिय रखते हुए प्रकरणों के अध्ययन और उनसे समबधित नवीन अर्थ निर्माण पर बल देता है। शिक्षक प्रयास करता है कि वह विद्यार्थी के मष्तिष्क को सक्रिय रखते हुए उसको सूचनाएं प्रदान करता है और साथ ही यह भी प्रयास करता है कि विद्यार्थी का मस्तिष्क उन सूचनाओं की व्याख्या सही-सही कर सके। इसमें विद्यार्थी कक्षा में बिना किसी तयारी के नहीं आते बल्कि उसे प्रकरण से सम्बंधित विषय ज्ञान होता है और उसी को आधार बनाते हुए शिक्षक नए ज्ञान को उसे नवीन जानकारियां देता है जिसके आधार पर कुछ अर्थपूर्ण नए ज्ञान का सृजन अपने मस्तिष्क में करता है और इतना ही नहीं बल्कि उसको अपने जीवन में प्रयुक्त भी करता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि यह ज्ञान की रचना करने का एक उपागम है जो सक्रिय होने के साथ-साथ जटिल भी है। फोस्नोट (2996) में बताया की इस

उपागम के प्रयोग से विद्यार्थी शिक्षक द्वारा दिए जा रहे ज्ञान को निष्क्रिय रूप से प्राप्त नहीं करता है और न ही इस उपागम के प्रयोग में शिक्षक कक्षा का प्रबंधक और सूचनाएं देने वाला बन कर रह जाता है। यह शिक्षण- अधिगम की मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है।

पियाजे, डीवी, लेव व्यगोत्स्की, ब्रूनर, उसूबेल, ने इस उपागम को कक्षाकक्ष में प्रयुक्त किए जाने पर बल दिया है और किस प्रकार इसे कक्षा में प्रयोग किया जा सकता है इस पर सुझाव भी दिया है।

इस उपागम को प्रयोग में लाते समय निम्न सावधानियों को अपनाया जाना चाहिए।

1. शिक्षक को कक्षा में पूरी तरह से तैयार होकर आना चाहिए और बच्चों को भी पहले से मानसिक रूप से तैयार कर देना चाहिए जिससे वे निश्चित प्रकरण के लिए तैयार रहें।
2. कक्षा का वातावरण लोकतांत्रिक होना चाहिए जिससे विद्यार्थी खुलकर अपने विचारों को व्यक्त कर सकें, वार्तालाप कर सकें, प्रश्नों को बिना झिझक के पूछ सकें, और अपने अनुभवों के विषय में बता सकें।
3. शिक्षक और विद्यार्थियों के मध्य अंतःक्रिया आवश्यक है ताकि उनके पूर्व ज्ञान और अनुभवों को परिमार्जन हो सके।
4. प्रश्न पूछने के पश्चात् शिक्षकों द्वारा विद्यार्थियों को पर्याप्त समय देना चाहिए जिससे वे सोच समझकर अपने विचार की संरचना बना उसको उत्तर में ढाल सकें।
5. विद्यार्थियों को सहयोगात्मक रूप से अध्ययन के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।
6. प्रकरणों से सम्बंधित पर्याप्त मात्रा में प्रमाण उपलब्ध कराना चाहिए जिससे विद्यार्थी ज्ञान को स्वयं के द्वारा मूल्यांकित कर सकें। और परिकल्पनाओं की सत्यता की स्वयं जाँच कर सकें।
7. विद्यार्थियों के वास्तविक अनुभव से सम्बंधित मुद्दे लेने चाहिए जिससे वे अपने दैनिक जीवन की समस्याओं को हल कर सकें।
8. शिक्षक द्वारा विद्यार्थियों को अवलोकन, परियोजना और प्रस्तुतीकरण में सम्मिलित रखना चाहिए।

लाभ:

1. विद्यार्थी सक्रिय रूप से शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में भाग लेते हैं।
2. विद्यार्थी नवीन ज्ञान का सृजन करते हैं तो इस उपागम के प्रयोग से अर्जित ज्ञान अपेक्षाकृत स्थायी होता है और इसके साथ ही विद्यार्थी स्वयं के जीवन में उस ज्ञान को प्रयोग में लाने में सफल होते हैं।
3. विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान पर यह उपागम केन्द्रित है अतः विद्यार्थी रूचि के साथ अध्ययन में भाग लेते हैं

सीमायें:

1. हमारे विद्यालयों में सभी शिक्षक इतने समर्थ नहीं होते इस उपागम का प्रयोग सफलतापूर्वक कर सकें।
2. इस उपागम की कोई विकसित कार्यविधि नहीं है जिससे शिक्षण किया जाये।

3. यह एक समय साध्य उपागम है।

अभ्यास प्रश्न

4. आगनात्मक उपागम क्या है?
5. निगमनात्मक उपागम किसे कहते हैं?
6. रचनात्मक उपागम के दो लाभ बतायें।

2.5 भूगोल शिक्षण की रणनीतियां

भूगोल शिक्षण के दौरान कक्षा में अध्यापन को सहज और गाह्य बनाने के लिए अनेक रणनीतियां उपयोग में लायी जाती हैं। विद्यार्थी पाठ में सक्रिय रूप से भाग लें इसके लिए शिक्षक कई प्रयास करते हैं। पहले कक्षाएं जहाँ अध्यापक केन्द्रित होती थीं वही आज छात्र केन्द्रित हो गयी हैं। ज्ञान को विद्यार्थियों पर आरोपित नहीं किया जा सकता बल्कि शिक्षकों को यह प्रयास करना चाहिए कि वे स्वयं सीखने की तरफ प्रेरित हों। इसके लिए शिक्षक निम्नांकित रणनीतियों को कक्षा में अपना सकते हैं।

2.5.2 सहयोगपूर्ण: सहयोगपूर्ण सीखना एक शिक्षण-अधिगम रणनीति है जिसमें विद्यार्थी सीखने में एक दूसरे का सहयोग करते हैं। यह माना जाता है कि दो सिर या दो मस्तिष्क एक सिर या मस्तिष्क से बेहतर होते हैं विशेष रूप से कक्षाओं में। इसमें विद्यार्थी साझा लक्ष्य के ऊपर समूह में कार्य करते हैं अर्थात यह एक पारस्परिक पद्धति है जिसमें छात्र समूह की भागीदारी होती है और जो एक-दुसरे का सहयोग कुछ प्रोजेक्ट्स में करते हैं और परिणामस्वरूप एक स्वस्थ वातावरण में सीखते हैं। सहयोगपूर्ण सीखने में एक ऐसी स्थिति दी जाती है जिसमें दो या दो से अधिक लोग साथ में सीखते या सीखने का प्रयास करते हैं। व्यक्तिगतरूप से सीखने के विपरीत जब लोग साथ में सीखते हैं तो ऐसे में वे एक दुसरे के कौशलों का लाभ उठाते हैं, कई संसाधनों का प्रयोग करते हैं, अधिक जानकारी हेतु एक दुसरे से प्रश् पूछते हैं, एक-दुसरे के कार्यों का मूल्यांकन करते हैं और एक दुसरे के कार्य की निगरानी भी करते हैं। जब कक्षा में सहकारी या सहयोगपूर्ण तरीके का प्रयोग सीखने हेतु किया जाता है तो छात्र विषय में और अधिक संलिप्त हो जाते हैं और सीखने हेतु और अधिक प्रेरित होते हैं।

सहयोगपूर्ण सीखने की रणनीति Lev Vygotsky के "zone of proximal development" पर आधारित है। हर एक कार्य मेड़ो भाग होते हैं; एक भाग वह जो छात्र स्वयं से पूरा कर सकता है तथा दूसरा भाग वह जिसे छात्र पूरा नहीं कर सकता है। इन्हीं दोनों क्षेत्रों में zone of proximal development होता है जिसमें किसी और के सहयोग या निर्देश से से छात्र कुछ कार्यों को पूरा कर सकता है, और इसमें छात्र एक दूसरे का सहयोग करते हैं। सहयोगी शिक्षण उस मॉडल पर कार्य करती है जहाँ यह माना जाता है कि एक जनसंख्या में जो आपस में अनुभवों को बाँटते हैं और विषम भूमिका

निभाते हैं वहाँ ज्ञान को बनाया जा सकता है। इस शिक्षण में सीखना के उन तरीकों और वातावरण पर निर्भर करता है जिसमें शिक्षार्थी एक समान कार्य में संलग्न रहते हैं और एक-दूसरे के कार्यों के लिए जवाबदेह भी रहते हैं। यह आमने-सामने के बातचीत पर आधारित होता है जिसमें विद्यार्थी अपने समूह के सभी सदस्यों के साथ विभिन्न बिन्दुओं पर विचार विमर्श करता है और यह समूह के प्रत्येक सदस्य पर लागू होता है। इस प्रकार सहयोगपूर्ण सीखने को एक ऐसे रणनीति के रूप में समझा जा सकता है जिसमें विद्यार्थियों का एक समूह एक साथ किसी समस्या के समाधान के लिए कार्य करता है। जैसे सहयोगपूर्ण सीखने में 5 छात्रों को एक विषय दिया जाए कि "किसी क्षेत्र विशेष में रहने वाली महिलाओं की आर्थिक, सामजिक, राजनितिक, पारिवारिक, और व्यक्तिगत समस्या का अध्ययन करें"। ऐसे में प्रत्येक छात्र एक विशेष समस्या को लेते हुए अध्ययन करे उसके बाद वे मिलें और उस समस्या पर समूह के अन्य सदस्यों के साथ विचार विमर्श करे और यह समूह के प्रत्येक छात्र के द्वारा किया जायेगा।

विभिन्न प्रकार का सहयोगपूर्ण अधिगम से विद्यार्थियों को सीखने कि ओर प्रेरित किया जा सकता है और उनके ज्ञान में वृद्धि की जा सकती है। सहयोगपूर्ण सीखने में सहयोगात्मक लेखन, वाद-विवाद, समूह परियोजनाओं, समूह विचार विमर्श, सामूहिक समस्या समाधान के तरीकों को शामिल किया जाता है। यह रणनीति छात्र-शिक्षक के पररम्परागत रिश्ते, शिक्षकों कि भूमिका और शिक्षण के तरीके को पुनर्परिभाषित करती है। यह तकनीक विद्यार्थी केन्द्रित है क्योंकि इसमें विद्यार्थी स्वयं सक्रीय रह कर सीखने की ओर अग्रसर रहते हैं। लोकतंत्र में यह एक आवश्यक कौशल और रणनीति है।

2.5.2 योजना विधि: योजना विधि प्रायोगिक कार्य पर आधारित विधि है। इस विधि में विद्यार्थियों को कोई समस्यापूर्ण कार्य दिया जाता है। विद्यार्थी शिक्षक की देख-रेख में प्रयोगशाला, पुस्तकालय इत्यादि का प्रयोग करते हुए उस समस्या को हल करने का प्रयास करते हैं।इस विधि में शिक्षक समस्या जुड़े उद्देश्यों को विद्यार्थियों को स्पष्ट कर देता है। योजना विधि में शिक्षक अपने देख-रेख में कार्य कराता है तो इसे एक निरीक्षित अधिगम विधि के रूप में देखा जा सकता है।

योजना विधि को विकसित करने का श्रेय किलपैट्रिक को जाता है। किलपैट्रिक ने योजना विधि को परिभाषित करते हुए कहा है कि "प्रोजेक्ट पुरे मन से किया जाने वाला एक सोदेश्यपूर्ण कार्य होता है जो सामाजिक वातावरण में सम्पन्न किया जाता है ।" किलपैट्रिक डीवी के सहयोगी थे अतः स्पष्ट है कि समाज और सामजिक वातावरण को क्यों उन्होंने इतनी महत्वपूर्ण स्थान दिया है इसके अलावा किलपैट्रिक ने विज्ञान को भी महत्वपूर्ण माना है जो उनके परिभाषा से स्पष्ट होता है। इस परिभाषा से स्पष्ट है कि योजना विधि में समस्या का चयन करते हुए उस समस्या के सामाजिक महत्व तथा उसकी उपादेयता पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

योजना विधि में की जाने वाली योजनायें दो प्रकार की हो सकती हैं – पहला वैयक्तिक और दूसरी सामाजिक। दोनों ही प्रकार की योजनाओं में शिक्षक के द्वारा दिए निर्देशों और उद्देश्यों पर विद्यार्थी कार्य करते हैं। यह विधि विद्यार्थियों के क्रियाओं को अधिक महत्व देती है तथा इसमें कार्य प्रणाली का

ज्ञान भी आसानी से प्राप्त किया जा सकता है । विद्यार्थियों के पास कार्य के निष्पन सम्बन्धी पर्याप्त स्वतंत्रता रहती है।

किसी भी समस्या को विद्यार्थियों को देने से पहले शिक्षकों को यह ध्यान रखना चाहिए कि समस्या विद्यार्थियों के तत्कालीन समस्याओं से सम्बंधित होनाचाहिए। तभी विद्यार्थी कार्य में रूचि लेंगे और उसे करेंगे। साथ ही शिक्षकों को सम्पूर्ण पाठ्यक्रम से ऐसे प्रश्नों को निकाल लेना चाहिए जिसे वह विद्यार्थियों को वह प्रोजेक्ट के रूप में दे सके। योजना विधि में शिक्षकों को समस्या देने के पाश्चा मात्र उसके उद्देश्यों को विद्यार्थियों को स्पष्ट करना चाहिए। उसके बाद का सारा कार्य विद्यार्थियों को स्वयं ही करना होता है। योजना विधि में शिक्षक विद्यार्थियों को किसी स्थान विशेष के कृषि उत्पादों का विवरण, मॉडल बनाने या मानचित्रण का कार्य, विद्यालय का सर्वेक्षण या प्लेन टेबल सर्वे द्वारा विद्यालय का नक्शा तैयार करने जैसा कोई कार्य दे सकते हैं।

किलपैट्रिक ने योजना विधि के चार चरण बताए हैं

1. योजना के उद्देश्यों का निर्धारण करना।
2. योजना का निर्माण करना।
3. योजना का क्रियान्वयन करना।
4. योजना का मूल्यांकन करना।

इस विधि का प्रयोग करते समय शिक्षकों को कुछ सावधानी रखने की भी आवश्यकता होती है।

1. शिक्षकों को चाहिए की समस्या देने के साथ ही स्पष्ट तरीके से उद्देशों को स्पष्ट कर देना चाहिए अन्यथा विद्यार्थी भ्रमित हो सकते हैं।
2. अध्यापक को यह सुनिश्चत करना चाहिए कि सामूहिक रूप से योजना दी गयी हो तो उसमें प्रत्येक छात्र को समान अवसर प्राप्त हो।
3. समस्याएँ बच्चों की मानसिक क्षमता के अनुसार ही देनी चाहिए। अगर विद्यार्थियों के स्तर के अनुसार समस्या का स्तर नहीं हुआ तो विद्यार्थी योजना जो क्रियान्वित नहीं कर पाएंगे।
4. योजना ऐसी होनी चाहिए कि विद्यार्थी उसे स्वाभाविक वातावरण में कर सकें।
5. योजना विद्यार्थियों के रूचि के अनुसार होनी चाहिए।सभी निर्देश योजना के प्रारंभ के पूर्व ही दे देना चाहिए।
6. शिक्षक को विद्यार्थियों के कार्यों की निगरानी रखनी चाहिए और यदि कहीं भी वो समस्या का अनुभव कर रहे हों तो उस समस्या का समाधान तुरत करना चाहिए।
7. योजना के द्वारा प्राप्त परिणामों को अंत में कक्षा में विचार विमर्श के आवारा मूल्यांकित किया जाना चाहिए।

लाभ:

1. विद्यार्थी केन्द्रित विधि है। विद्यार्थी स्वयं ही करके सीखते हैं।
2. अर्जित ज्ञान देर तक बना रहता है। विद्यार्थी जल्दी भूलते नहीं हैं
3. विद्यार्थियों में तर्कशीलता, सहयोग, आत्मविश्वास और धैर्य जैसे गुणों का विकास होता है।

4. विद्यार्थी योजना विधि को सामाजिक परिवेश में करते हैं तो ऐसे में उनमें सामाजिकता का विकास होता है।

सीमायें:

1. यदि शिक्षक या विद्यार्थियों में कौशल का अभाव है तो इस विधि का प्रयोग कभी सफल सिद्ध नहीं हो सकता। सभी अध्यापक इस विधि का प्रयोग सफलता पूर्वक नहीं कर सकते।
2. इस विधि के लिए विभिन्न प्रकार के शिक्षण अधिगम सामग्रियों की आवश्यकता होती है साथ ही पुस्तकालय इत्यादि की आवश्यकता होती है। भारत जैसे देश जहाँ साधनों का अभाव है इस विधि का प्रयोग संभव नहीं है।।
3. सभी कक्षाओं के लिए यह विधि उपयुक्त नहीं है।

2.5.3 समस्या समाधान विधि: समस्या समाधान विधि एक वैज्ञानिक विधि है। इस विधि में समस्या को लेते हैं और उसके समाधान पर पहुँचने का प्रयास करते हैं। भूगोल में किसी भौगोलिक समस्या का चयन किया जाता है और फिर उस भौगोलिक समस्या का समाधान तार्किक रूप से करते हैं।

समस्या समाधान विधि में किसी भी समस्या के समाधान के पांच चरण होते हैं। पहली समस्या के जन्म से शुरू होती है। तद्पश्चात उस समस्या के समाधान के लिए योजनाओं का निर्माण किया जाता है। अगले स्तर पर योजना से जुड़ी सामग्रियों का चयन किया जाता है। चौथे चरण में समाधान हेतु कई विकल्पों का चयन किया जाता है और अंतिम चरण पर विकल्पों पर उचित सामग्रियों के प्रयोग के पश्चात् सही विकल्प का चयन कर उसे निश्चित समस्या के समाधान के रूप में घोषित किया जाता है। इस विधि में समस्या का चयन विद्यार्थियों के दिनानुदिन की समस्याओं से किया जाता है। यदि समस्याएं विद्यार्थियों से सम्बंधित ना हुयी तो वे उसमें रूचि नहीं लेंगे और समस्या को समाधानित करने का उचित प्रयास नहीं करेंगे। जैसे- विद्यार्थियों को शहर का मानचित्र बनाने का कार्य एक समस्या के रूप में दिया जा सकता है। यह इस विधि का प्रथम चरण होगा। तद्पश्चात शिक्षक उद्देश्यों को स्पष्ट करते हुए द्वितीय चरण में योजना का निर्माण कर सकता है। उसके पश्चात् विद्यार्थी यह निर्धारित करेंगे की शहर का मानचित्र बनाने हेतु किस प्रक्षेप का प्रयोग होगा और विभिन्न स्ताहनों को किस प्रकार दर्शाया जाएगा। यह तृतीय चरण होगा। इस हेतु चौथे चरण में कई विकल्प होंगे। अंत में उन सभी विकल्पों से विद्यार्थी उचित रीति का चयन करते हुए शहर का मानचित्र तैयार करेंगे।

जैसा ऊपर वर्णित है, इसमें समस्या को कई चरणों में बाँट दिया जाता है और पूर्व ज्ञान के आधार पर, सम्बंधित साहित्य के माध्यम से, तर्क के द्वारा अथवा अवलोकन के द्वारा सही समाधान को ढूंढने का प्रयास किया जाता है।

यह विधि भी विद्यार्थी केन्द्रित विधि है तो विद्यार्थियों की रूचि, कक्षा, उम्र, विद्यार्थियों की संख्या के आधार पर समस्या का चयन करना आवश्यक होता है। इसको ध्यान में नहीं रक्खने पर यह विधि कभी सफल नहीं हो सकती है।

लाभ:

1. यह विधि छात्र-केन्द्रित विधि है अतः विद्यार्थी सक्रिय रूप में अध्ययन में सहभागिता करते हैं।
2. इसमें कई विद्यार्थी सहभागी रूप से समस्या के समाधान का प्रयास करते हैं अतः यह विधि सहभागिता पर भी बल देती है।
3. विद्यार्थी समस्या के समाधान हेतु स्वयं प्रयास करते हैं। अतः विद्यार्थी स्वयं इसमें रूचि लेते हैं। यह विधि स्व-अध्ययन को प्रोत्साहित करती है।

सीमायें:

1. प्रत्येक प्रकरण को इस माध्यम से नहीं पढाया जा सकता है।
2. इस विधि के प्रयोग के लिए अध्यापक का कुशल होना आवश्यक है। यदि अध्यापक में कौशल का अभाव है तो यह विधि कभी सफल नहीं हो सकती।
3. इस विधि में उचित शिक्षण अधिगम सामग्रियों का प्रयोग आवश्यक है इनके अभाव में यह विधि प्रयोग में नहीं आ सकती। साथ ही इन सामग्रियों के प्रयोग के साथ यह विधि समय साध्य. श्रम साध्य हो जाती है।

2.5.4 प्रयोगात्मक: भूगोल शिक्षण में प्रायोगिक रणनीतियों उतनी ही आवश्यक हैं जितनी किसी विज्ञान के विषय में होती हैं। क्योंकि अपनी प्रकृति में भूगोल वैज्ञानिक ही है। प्रायोगिक रणनीति का प्रयोग वैज्ञानिक प्रणाली पर आधारित प्रयोगों द्वारा होता है। इसमें अन्वेषणात्मक अधिगम का प्रयास किया जाता है जिसे विद्यार्थियों के द्वारा समस्या के समाधान हेतु अन्वेषण किया जाता है। विज्ञान विषयों की भांति भूगोल के लिए भी केवल पढना ही पर्याप्त नहीं होता बल्कि इसे भी करके सीखना पड़ता है। इसके लिए प्रायोगिक रणनीति का प्रयोग किया जाता है। इसमें 'करके सीखना' 'अवलोकन द्वारा सीखना', 'मूर्त से अमूर्त को सीखना' तथा 'ज्ञात से अज्ञात को सीखना' को आधार बनाते हुए ज्ञान दिया जाता है। विद्यार्थी जब भी कुछ स्वयं करके सीखते हैं तो वह उस ज्ञान को लम्बे समय तक याद रखते हैं। इस रणनीति के प्रयोग हेतु भूगोल के प्रयोगशाला और उपकरणों की आवश्यकता होती है जैसे- प्लेन टेबल, डम्पी लेवल, बैरोमीटर, स्प्रिट लेवल, लेवेलिंग स्टाफ, विभिन्न देशों के मानचित्र इत्यादि।

लाभ:

1. इस रणनीति के प्रयोग से विद्यार्थी करके सीखना' 'अवलोकन द्वारा सीखना', 'मूर्त से अमूर्त को सीखना' तथा 'ज्ञात से अज्ञात को सीखना' जैसे शिक्षण सूत्रों के आधार पर सीखते हैं।
2. इसमें विद्यार्थी की सभी ज्ञानेन्द्रियाँ सक्रिय रहती हैं जिससे ज्ञान सुगम तरीके से उन तक पंहुचता है।
3. इस रणनीति के तहत विद्यार्थी स्वयं ही प्रयोग करके सीखते हैं तो अर्जित ज्ञान अपेक्षाकृत अधिक स्थायी होता है।
4. विद्यार्थी रूचि लेते हैं अतः प्रक्रिया बोझिल नहीं होने पाती।

सीमायें:

1. यह रणनीति खर्चीली है अतः प्रत्येक विद्यालय में प्रयोग में नहीं लायी जा सकती है।

2. हर एक प्रकरण में इसका प्रयोग नहीं किया जा सकता है।
3. यह छोटी कक्षाओं में प्रयोग में नहीं लायी जा सकती क्योंकि बन विद्यार्थियों का मानसिक विकास उस स्तर पर नहीं हुआ रहता है।
4. किन कक्षाओं का आकार बड़ा हो उन कक्षाओं में इस रणनीति का प्रयोग करना असंभव सा होता है।
5. यह रणनीति समय साध्य भी है।
6. सभी विद्यार्थियों के साथ भी इस रणनीति का प्रयोग नहीं किया जा सकता क्योंकि उनकी कार्यक्षमता और मानसिक क्षमता समान नहीं होती।

2.5.5 विवरणात्मक: भूगोल अपने मूल प्रकृति में विवरणात्मक है अतः शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में रणनीति के तहत इसमें इसके विवरणात्मक रूप का प्रयोग हो सकता है। यह भूगोल शिक्षण में बहुत पहले से प्रयुक्त किया जाता रहा है। किसी भी स्थान की विशेषताओ, वहां का भौगोलिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक पहलुओं का विवरण विद्यार्थियों को दिया जाता रहा है। यह एक तरह से किसी प्रकरण से जुड़े तमाम पहलूओं के विशद वर्णन से जुड़ा है। इस विधि को परिभाषित करते हुए यह कहा जा सकता है कि यह वह कक्षा में प्रयुक्त की जाने वाली रणनीति है जिसमे किसी प्राकृतिक दृश्य, घटना, स्थलाकृति, तथ्य का शब्दों के माध्यम से विद्यार्थियों को बोधगम्य तरीके से वर्णन किया जाता है जिससे विद्यार्थी उस विशिष्ट दृश्य, घटना, स्थलाकृति, या तथ्य की सही जानकारी प्राप्त कर सकें।

इसमें शिक्षक रोचक तरीके से इन विवरणों को प्रस्तुत करता है और विद्यार्थी उसे ग्रहण करने का प्रयास करते हैं। इस रणनीति के माध्यम से विद्यार्थियों को उन क्षेत्रों की जानकारी दी जा सकती है जिन्हें विद्यार्थी स्वयं से ना देख पायें। जैसे शिक्षक कांगो बेसिन में रहने वाले आदिवासी जातियों का, या विभिन्न नदी घटी सभ्यताओं का विवरण प्रस्तुत कर सकते हैं। विवरण को गाह्य, रोचक और आकर्षक बनाने हेतु चित्रों, मान्चित्री, सम्बंधित वास्ताविक वस्तुओं, रेखाचित्र, प्रोजेक्टर, श्यामपट्ट एपीस्कोप इत्यादि को शिक्षक प्रयोग में ला सकते हैं। इसके माध्यम से विद्यार्थी रूचि लेते हुए अपनी कल्पना के माध्यम से उन परिस्थितियों को अनुभूत करने की कोशिश करते हैं। अतः इस माध्यम से बच्चों की कल्पना शक्ति का कास होता है।

इस रणनीति का प्रयोग करते समय कुछ सावधानियां भी बरतनी चाहिए वर्ना यह रणनीति मात्र कहानी का रुप लेकर रह जाएगी।

1. विवरण प्रस्तुत करते समय विद्यार्थियों की कक्षा, मानसिक स्तर रूचि को शयन में रखना आवश्यक होता है। विद्यार्थियों के स्तर के अनुसार ही विवरण देने के लिए प्रकरणों का चयन करना चाहिए।
2. वर्णन के साथ विभिन्न शिक्षण-अधिगम सामग्रियों का प्रयोग शिक्षक के द्वारा करना चाहिए तभी विद्यार्थी शिक्षक द्वार दी जानकारी को उस स्थिति, वास्तु के साथ जोड़ते हुए समझ पाएंगे।
3. कक्षा में दिया जाने वाला विवरण क्रमबद्ध होना चाहिए।

4. पर्याप्त संख्या में दृष्टान्तों का प्रयोग शिक्षक के द्वारा किया जाना चाहिए।
5. विवरण देने के दौरान प्रयुक्त किए जाने शब्दों या पदों को स्पष्ट कर देना चाहिए।
6. विवरण अधिक लम्बा नहीं होना चाहिए अन्यथा विद्यार्थी रूचि नहीं ले पाएंगे।
7. शिक्षक के द्वारा विवरण देने के पश्चात् विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करना चाहिए कि वे भी मिलती जुलती परिस्थिति या घटना का विवरण प्रस्तुत करें।

लाभ:

1. यह रणनीति प्रत्येक कक्षा स्तर पर प्रयोग में लायी जा सकती है परन्तु इसके लिए आवश्यक होता है कि उस निश्चित कक्षा के विद्यार्थियों के मानसिक स्तर के बारे में शिक्षक को जानकारी हो।
2. उन चीजों की जानकारी दी जा सकती है जो विद्यार्थी की पंहुच में नहीं हैं।
3. यह विद्यार्थियों में कल्पनाशीलता को बढ़ावा देती है

सीमायें:

1. लम्बा विवरण नीरस हो जाता है और विद्यार्थी रूचि नहीं लेते हैं।
2. सभी शिक्षक कुशलता से इस रणनीति का प्रयोग नहीं कर पाते हैं।
3. विषय से भटकने की संभावना इस रणनीति में बनी रहती है।

अभ्यास प्रश्न

7. सहयोगात्मक अधिगम रणनीति किसे कहते हैं?
8. योजना विधि किसने प्रस्तावित की थी?
9. विवरणात्मक रणनीति की दो सीमायें बतायें।

2.6 भूगोल शिक्षण में संसाधन

किसी भी शिक्षण के लिए संसाधन होने आवश्यक हैं। इन संसाधनों को हम शिक्षा अधिगम सामग्रियों के रूप में भी जानते हैं।भूगोल अध्यापन में इन संसाधनों का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। इनकी सहायता से भूगोल का शिक्षण सरल, वास्तविक, रोचक और सजीव बनता है। भूगोल के तथ्यों को पढ़ाने के लिए इन संसाधनों का प्रयोग अनिवार्य है क्योंकि तभी शिक्षण सामग्री का स्पष्टीकरण और प्रत्यक्षीकरण कराया जा सकता है। भूगोल शिक्षण में प्रयुक्त किए जाने वाले कुछ आवश्यक संसाधनों का वर्णन नीचे किया जा रहा है।

2.6.2 मानचित्र: भूगोल अध्ययन और अध्यापन के लिए मानचित्र अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है। भूगोल की कक्षा में मानचित्र होना अत्यन्त ही आवश्यक है। श्यामपट्ट के पश्चात् यह दूसरी आवश्यक शिक्षण सहायक सामग्री है। बिना मानचित्र का प्रयोग किए भूगोल का शिक्षण अपूर्ण और अर्थहीन है। भूगोल के अंतर्गत किसी स्थान की अवस्थिति, वहाँ की भौगोलिक स्थिति, मृदा, जलवायु, उच्चावच, जनसंख्या,

जनसंख्या घनत्व, आवागमन के साधनों इत्यादि को दर्शाने हेतु मानचित्रों का प्रयोग किया जाता है। यदि कहा जाए कि भूगोल की 95 प्रतिशत से ऊपर के विषवस्तु नान्चित्र पर आधारित हैं तो यह अतिशयोक्ति नहीं होगी। भूगोल में विविध प्रकार के मान चित्रों का प्रयोग किया जाता है तथा उनका विविध उपयोग किया जाता है। प्रयोग में लाए जाने वाले विभिन्न मानचित्रों में प्राकृतिक मानचित्र, भौतिक मानचित्र, भित्ति मानचित्र, आर्थोग्रफिकल मानचित्र, एटलस मानचित्र, सर्वेक्षण मानचित्र इत्यादि हैं। इन मानचित्रों का वर्णन आगे के अध्याय में किया जायेगा। इन विभिन्न प्रकार के मानचित्रों का प्रयोग धरातलीय बनावट को समझने के लिए, क्षेत्र विशेष में पायी जाने वाली जलवायु जानने के लिए,दो या अधिक स्थानों के मध्य दूरी का पता लगाने हेतु, दिशा निर्धारण हेतु, दो या दो से अधिक प्रदेशों के मध्य तुलना करने के लिए, जनसंख्या और जनसंख्या घनत्व जानने हेतु, क्षेत्र विशेष से सम्बंधित उद्योग धंधों के अध्ययन के लिए किया जाता है। मानचित्रों की सहायता से स्थान, स्थिति, प्राकृतिक वनस्पति, उच्चावच, मौसम और जलवायु से सम्बंधित बातों को अच्छी तरह से विद्यार्थियों को समझाया जा सकता है और शिक्षण अधिगम को सरल और सुगम बनाया जा सकता है।

किसी भी मानचित्र के लिए कुछ चीजें होनी अनिवार्य हैं। इनमें दिशा प्रदर्शक, मापक, संकेत, प्रक्षेप, अक्षांश और देशांतर रेखाजाल हैं। इनके अभाव में कोई भी मानचित्र मात्र चित्र बन कर रह जाता है।

दिशा प्रदर्शक: सभी मानचित्रों में दिशा प्रदर्शक होना अनिवार्य है। बिना दिशा प्रदर्शक के मानचित्र मात्र एक चित्र होता है। यदि मानचित्र को लटकाया जाए तो जो भाग ऊपर होता है वह उत्तर दिशा को दिखता है, नीचे वाला भाग दक्षिण दिशा को इंगित करता है, जो व्यक्ति मानचित्र देख रहा है उसके दायें हाथ की तरफ पूर्व और बाएं हाथ की तरफ मानचित्र का पश्चिम भाग होता है। सामान्य तौर पर हरेक मानचित्र में दिशा प्रदर्शक बना होता है। यदि किसी मानचित्र में दिशा पारदर्शक न दिखे तो भी यही तरीका मानचित्र पढने हेतु प्रयोग में लाया जाना चाहिए।

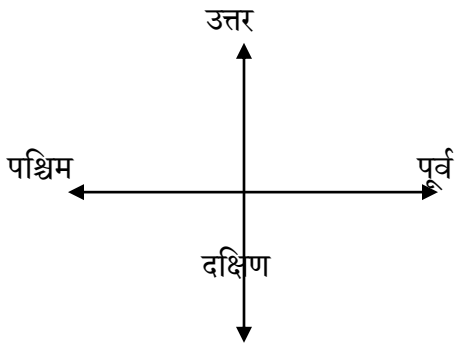

मापनी: दूसरी महत्वपूर्ण चीज़ मापनी है ।सम्भूर्ण भूतल को किसी छोटे आगाज पर जस का तस नहीं दिखाया जा सकता ऐसे में इस वास्तविक दूरी को कागज़ पर दिखाने के लिए मापक की आवश्यता होती है । यह एक काल्पनिक दूरी होती है जिसे वास्तविक दूरी के लिए मन जाता है -जैसे 2 सेमी.=20000 मी.। इसमें कागज़ का एक सेंटीमीटर धरातल का 20000 मीटर को प्रदर्शित करता है ।

संकेत: मानचित्र में हर एक चीज़ को विस्तार से लिखना संभव नहीं है । इसके लिए कुछ संकेतों का प्रयोग किया जाता है । संकेतों के प्रयोग से मानचित्र पर अधिक सूचनाओं को देना संभव हो जाता है । जैसे किसी भी स्थान की जनसंख्या और जनसंख्या घनत्व को दिखाने के लिए एक निश्चित अंतर पर जनसंख्या कम से अधिक होने पर विभिन्न रंगों के द्वारा रेखाओं के रूप में संकेतों का प्रयोग किया जाता है

चित्र संख्या-2

संकेत को दर्शाते हुए भारत का मानचित्र

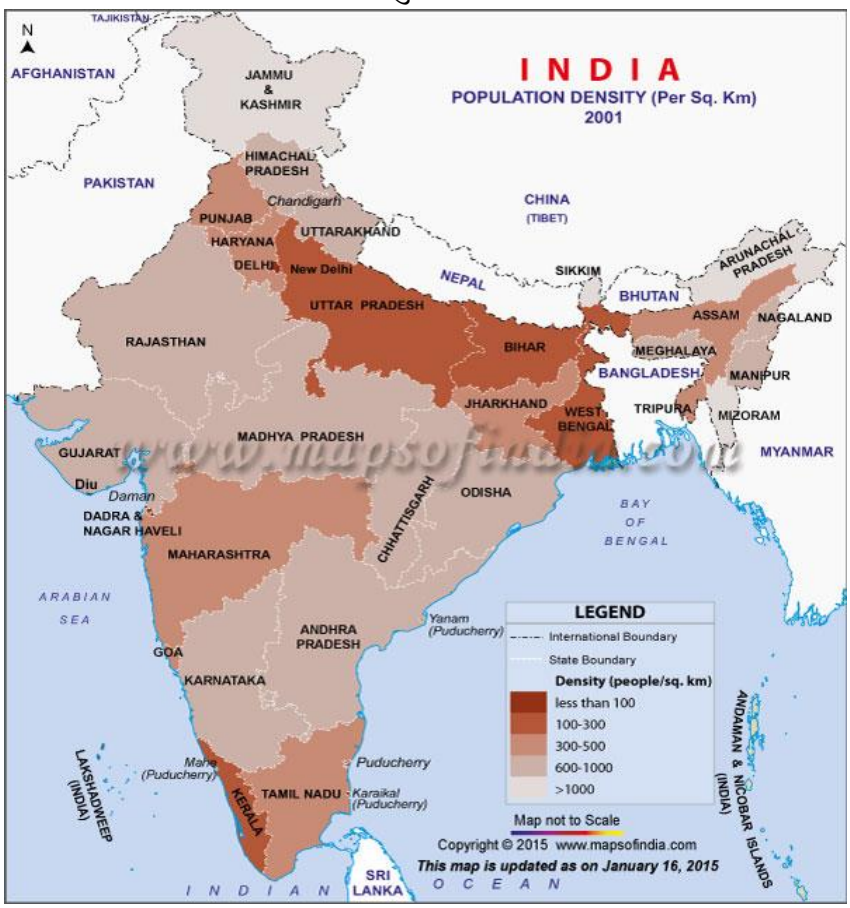

स्रोत: Credit: AdStock/Universal Images Group Universal Images Group Getty Images

जैसे उपर्युक्त चित्र (चित्र संख्या-2) में जनसंख्या और कन्संख्या घनत्व को दिखाया गया है। सामान्य तौर पर मानचित्रों में जिन संकेतों का प्रयोग किया जाता है उनमें मुख्य शहर, राजधानी, जलीय भाग, रेलवे स्टेशन, एअरपोर्ट, जलमार्ग, व्वायु मार्ग, सड़क मार्ग, खनिज संसाधन, वनस्पति इत्यादि आते हैं। मानचित्र में इनका अध्ययन करने के लिए संकेत सूचकों का प्रयोग करते हैं। जैसा उपर्युक्त चित्र में दायें कोने में जनसंख्या घनत्व को पढने के लिए दिया गया है।

प्रक्षेप: पृथ्वी का आकर नारंगी के समान है। पृथ्वी के विशेष आकार के लिए "Geoid" शब्द का प्रयोग किया जाता है। तो इस आकर को समतल कागज़ पर दिखाना मुश्किल है क्योंकिं ध्रुवों के पास वाला क्षेत्र संकरा होता है और भूमध्यरेखा के आस पास वाला क्षेत्र विस्तृत। भारत का मानचित्र बनाने के लिए अलग प्रक्षेप की आवश्यकता होती है और नार्वे का चित्र बनाने हेतु अलग प्रक्षेप आवश्यक होता है। अतः इन अलग अलग भागों को दिखाने के लिए अलग-अलग प्रक्षेपों का प्रयोग किया जाता है। साथ ही हर एक मानचित्र किसी निश्चित प्रक्षेप की सहायता से बनाना आवश्यक होता है।

अक्षांश-देशांतर रेखा जाल: अक्षांश और देशांतर रेखायें वह काल्पनिक रेखायें हैं जो मानचित्र पर क्रमशः उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम जाती हैं। वास्तविकता में ऐसी कोई भी रेखा पृथ्वी पर नहीं है पर विभिन्न स्थानों का पृथ्वी पर सही अवस्थिति दिखाने हेतु मानचित्र में अक्षांश और देशांतर रेखाओं का प्रदर्शन आवाश्यक होता है।

2.6.2 रेखा चित्र: रेखीय प्रवाह द्वारा बनाये गए चित्र को रेखाचित्र कहा जाता है। रेखाचित्र में किसी भी तथ्य या प्रदत्त को मूल रूप में न दिखाकर चित्रात्मक रूप में प्रदर्शित करने का प्रयास किया जाता है। यूँ तो रेखाचित्रों का प्रयोग लगभग हरेक विषय में किया जाता है परन्तु भूगोल में इसका विशेष महत्व है क्योंकि खाद्यान्न, जनसंख्या, वनस्पति, इत्यादि से सम्बंधित प्रदत्तों को रेखाचित्र के माध्यम से प्रदर्शित किया जाता है। भूगोल में मुख्य रूप से तीन विभिन्न रूपों में रेखाचित्रों का प्रयोग किया जाता है। पहला एक आयामी रेखाचित्र जिसमें रेखीय आरेख और डंडाकृति/दंडारेखों को सम्मिलित किया जाता है। दुसरे वर्ग में द्विआयामी रेखाचित्र आये हैं जिनमे आयताकार आरेख, वृतीय आरेख और वर्गाकार आरेख को लिया जाता है। तृतीय वर्ग में त्रिआयामी रेखाचित्र आते हैं जिनमे ब्लाक चित्र, स्फीयर आरेख, घनाभ चित्र इत्यादि सम्मिलित होते हैं।

इन रेखाचित्रों के साथ भो संकेतकों का प्रयोग किया जाता है क्योंकि रेखाचित्रों में भी सभी सूचनाएं यथावत रूप में लिखना संभव नहीं होता है। रेखाचित्रों का प्रयोग किसी भी सूचना को दर्शाने, दो प्रदेश में तुलना करने इत्यादि के लिए किया जा सकता है। रेखाचित्र पाठ को सरल और सुगम बनाते हैं ।उद्देश्यपूर्ण रूप से बना रेखाचित्र पाठ को आकर्षक बनता है तथा इसके द्वार बिना विस्तृत रूप में पढ़े मात्र

रेखाचित्र को देखने के बाद ही किसी निष्कर्ष पर पंहुचा जा सकता है। सुन्दर, स्पष्ट, प्रभावशाली, सरल, और संक्षिप्तता किसी भी रेखाचित्र की विशेषता होती है।

2.6.3 उपग्रह से भेजे गए चित्र:

उपग्रह से लिया चित्र वह चित्र है जो सम्पूर्ण पृथ्वी या उसके किसी एक भाग से सम्बंधित होता है। यह दृश्य प्रकाश छवियों, जल वाष्प छवियों या अवरक्त छवियों को दर्शाता हुआ हो सकता हैं। मानचित्रण, सांय, ख़ुफ़िया और मौसम विज्ञान में इन चित्रों का प्रयोग किया जाता है। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् दूरसंवेद के अंतरिक्ष युग का प्रारंभ हुआ। हवाई फोटोग्राफी की सबसे बड़ी सीमा यह थी कि विमानों को एक निधारित ऊंचाई से अधिक ऊपर के स्तर पर नहीं उड़ाया जा सकता। जिसके कारण किसी भी बड़े देश या प्रदेश का फोटो एक `फोटो में नहीं लिया जा सकता था। इस समस्या का समाधान ढूँढने के प्रयास में वैज्ञानिकों ने अन्तरिक्ष की और देखा। इस क्रम में विभिन्न देशों और वैज्ञानिकों ने कई प्रयास किये सबका उल्लेख करना यहाँ संभव नहीं है। 2957 में तत्कालीन सोयियत संघ ने 4 अक्टूबर को स्पुतनिक-I2 नाम के अपने प्रथम उपग्रह को अंतरिक्ष में छोड़ा।पृथ्वी के चारों तरफ परिक्रमा करते हुए इस उपग्रह से भेजे गए सारे रेडियो संकेत प्राप्त हुए। 5 मई 2962 को मरकरी मिशन में अमेरिका के अंतरिक्ष यात्री एलन बी. शेफर्ड ने 25 मिनट की अंतरिक्ष यात्रा में 250 उत्कृष्ट फोटो लिए जो मेघावरण से सम्बंधित थे। इसके बाद कई अंतरिक्ष यात्रियों ने सॅटॅलाइट की मदद से फोटो लिए। वर्तमान समय में विश्व के कई देशों ने अंतरिक्ष में अपने उपग्रह छोड़ रखे हैं और इन उपग्रहों के माध्यम से सॅटॅलाइट चित्र प्राप्त करते हैं जिनके द्वारा सैन्य, शांति, भौगोलिक हलचलों, महासागरीय घटनाओं इत्यादि से सम्बंधित सूचनायें प्राप्त होती रहती हैं। चित्र संख्या 2 उपग्रह के माध्यम से लिए गए भारत के मानचित्र को दर्शा रहा है।

चित्र संख्या-2
उपग्रह के माध्यम से लिया गया भारत का चित्र

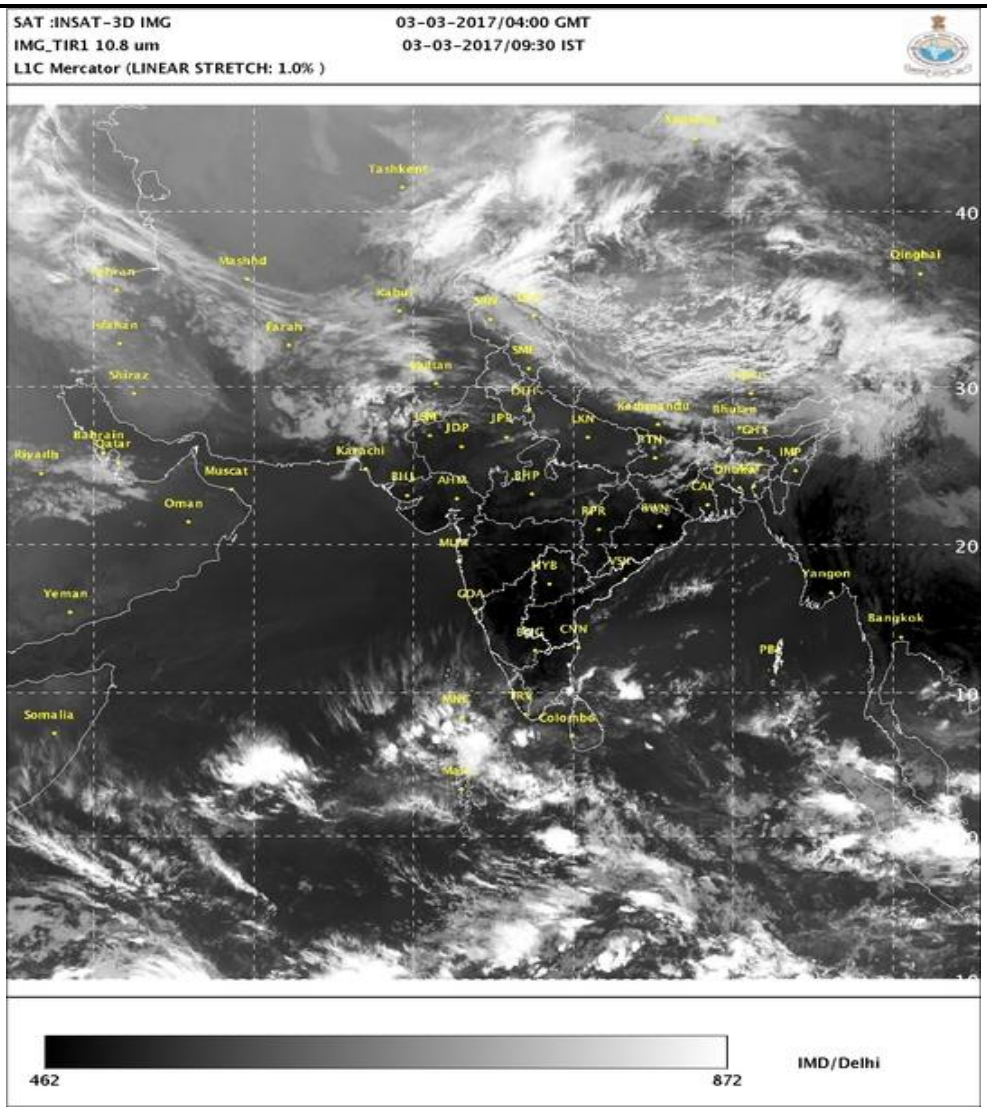

स्रोत: http://satellite.imd.gov.in/insat.htm

2.6.4 आकाशीय चित्र: आकाशीय चित्र अर्थात् एरियल फोटोग्राफी को हवाई चित्र भी कहते हैं। जैसा कि नाम से स्पष्ट है कि कुछ चित्र आकाश से या हवा में कैमरा का प्रयोग करके लेते हैं । एरियल फोटोग्राफी में पृथ्वी अथवा भूमि का चित्र किसी ऊँचे स्थान से या हवा/आकाश से प्रत्यक्ष नीचे का चित्र लिया जाता है. सामान्य तौर पर जिन भौगोलिक वस्तुओं या क्रियाकलापों का चित्र भू स्तर से नहीं लिया जा सकता है उनका चित्र लेने के लिए एरियल या आकाशीय चित्र का प्रयोग किया जाता है । इसमें इस्तेमाल होने वाला कैमरा भी भूमि आधारित संरचना के आधार पर कार्य नहीं करता है।

कैमरा के आविष्कार सन 2839 में हुआ था और कैमरा के आविष्कार के साथ ही फोटोग्राफी का जन्म हुआ। 2840 में एक फ्रांसीसी विद्वान जिनका नाम अर्गो था और जो पेरिस प्रयोगशाला के तात्कालिक निदेशक थे, ने स्थलाकृतिक सर्वेक्षण में फोटोग्राफी की संभावना स्पष्ट की थी। प्राप्त सूचनाओं के आधार पर यह माना जाताहै कि गैसपर नामक परसिया के फोटोग्राफर ने सबसे पहली बार 2858 में वायु फोटोचित्र खींचा था। इस वायु चित्र के लिए वे एक गुब्बारे में बैठकर 60मीटर की ऊँचाई तक उड़े थे. 2958 ई. में ही फ्रांस के लुसिदाल्ट नामक सर्वेक्षक ने धरातलीय सर्वेक्षण में पहली नार बैलून फोटोग्राफी का प्रयोग किया था। 2880 तक मौसम सम्बन्धी आंकड़ों की प्राप्ति के लिए पतंगों का प्रयोग किया जाने लगा था और पतंगों की सहायता से वायु चित्र लिए जाने लगे थे। सन 2882 में अंग्रेज मौसम विज्ञानी इ. डी. आर्चीबाल्ड (E. D. Archibald ने पतंग फोटोग्राफी के द्वारा सबसे पहले वायु फोटोचित्र खींचा था।

वायुयान का आविष्कार हांलाकि 2903 में हो गया था कैमरा के प्लेटफार्म के रूप में वायुयान का पहली बार प्रयोग 2909 में हुआ। इसके पश्चात् वायुयान वायव फोटोग्राफी के आम साधन बन गए। हवाई फोटोग्राफी को सबसे अधिक प्रोत्साहन द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान मिला।

अभ्यास प्रश्न

12. भूगोल के अंतर्गत मानचित्र का प्रयोग किसलिए किया जाता है?
13. रेखाचित्र मुख्य रूप से कितने प्रकार के होते हैं?
14. कैमरा प्लेटफार्म के रूप में वायुयान का सर्वप्रथम प्रयोग कब हुआ था?

2.7 सारांश

भूगोल के प्रभावी शिक्षण हेतु एक अध्यापक को सभी प्रकार के कौशलों, रणनीतियों, विधियों, तकनीकों का ज्ञान होना चाहिए। साथ ही किन संसाधनों के प्रयोग से वह अपने शैक्षिक लाख्यों को और भीं सुगमता से प्राप्त कर सकता है यह भी उसे जानना चाहिए। एक अध्यापक के पास ज्ञान हो परन्तु वह किस प्रकार से विद्यार्थियों को उस ज्ञान से लाभान्वित कर सकता है इसकी जानकारी नहीं हो तो वह सफल शिक्षक नहीं बन सकता है।

2.8 शब्दावली

1. आगमनात्मक उपागम: आगमनात्मक उपागम में विद्यार्थी "विशिष्ट से सामान्य" की ओर अग्रसर होते हैं। आगमनात्मक में उदाहरण पहले बताए जाते हैं और कई उदाहरणों के आधार पर विद्यार्थी कुछ प्रश्नों के माध्यम से स्वयं निष्कर्ष पर पंहुचते हैं।
2. निगमनात्मक उपागम: निगमनात्मक उपागम में सामान्य से विशिष्ट की ओर जाते हैं। शिक्षक सामान्य नियम को स्पष्ट करने के पश्चात् कुछ विशिष्ट उदाहरणों को विद्यार्थियों के सामने प्रस्तुत करता

है जैसे शिक्षक पहले तथ्यों, नियमों, सिद्धांतों या संकल्पनाओं को विद्यार्थियों को बताता है और तद्पश्चात उन तथ्यों, नियमों, सिद्धांतों या संकल्पनाओं के पक्ष में उदाहरणों को प्रस्तुत किया जाता है।

3. सहयोगपूर्ण सीखना: सहयोगपूर्ण सीखना एक शिक्षण-अधिगम रणनीति है जिसमें विद्यार्थी सीखने में एक दूसरे का सहयोग करते हैं। इसमें विद्यार्थी साझा लक्ष्य के ऊपर समूह में कार्य करते हैं अर्थात यह एक पारस्परिक पद्धति है जिसमें छात्र समूह की भागीदारी होती है
4. अक्षांश-देशांतर रेखा जाल: अक्षांश और देशांतर रेखायें वह काल्पनिक रेखायें हैं जो मानचित्र पर क्रमशः उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम जाती हैं। वास्तविकता में ऐसी कोई भी रेखा पृथ्वी पर नहीं है
5. रेखा चित्र: रेखीय प्रवाह द्वारा बनाये गए चित्र को रेखाचित्र कहा जाता है। रेखाचित्र में किसी भी तथ्य या प्रदत्त को मूल रूप में न दिखाकर चित्रात्मक रूप में प्रदर्शित करने का प्रयास किया जाता है।

2.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. अवलोकन वह कौशल में विद्यार्थी जब स्वयं अवलोकन करता है तो वह शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में अधिक तल्लीन हो जाता है और इससे अधिगम प्रक्रिया सरल हो जाती है।
2. Geographical Information System
3. तालिका निर्माण कौशल में तालिकाओं के लिए पैटर्न, साधारण गणना हेतु मध्यमान, मध्यांक, बहुलांक, प्रतिशत, आवृति के रूप में तथ्यों का अभिलेखन एवं प्रस्तुतीकरण इत्यादि सीखाया जाता है॥
4. भूगोल शिक्षण की विभिन्न उपागमों में एक उपागम आगमनात्मक है। इस उपागम में विद्यार्थी "विशिष्ट से सामान्य" की ओर अग्रसर होते हैं। आगमनात्मक में उदाहरण पहले बताए जाते हैं और कई उदाहरणों के आधार पर विद्यार्थी कुछ प्रश्नों के माध्यम से स्वयं निष्कर्ष पर पंहुचते हैं।
5. निगमनात्मक उपागम: निगमनात्मक उपागम में सामान्य से विशिष्ट की ओर जाते हैं। शिक्षक सामान्य नियम को स्पष्ट करने के पश्चात् कुछ विशिष्ट उदाहरणों को विद्यार्थियों के सामने प्रस्तुत करता है जैसे शिक्षक पहले तथ्यों, नियमों, सिद्धांतों या संकल्पनाओं को विद्यार्थियों को बताता है और तद्पश्चात उन तथ्यों, नियमों, सिद्धांतों या संकल्पनाओं के पक्ष में उदाहरणों को प्रस्तुत किया जाता है।
6. रचनात्मक उपागम के दो लाभ इस प्रकार हैं- (i) विद्यार्थी सक्रिय रूप से शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में भाग लेते हैं। (ii) विद्यार्थी नवीन ज्ञान का सृजन करते हैं तो इस उपागम के प्रयोग से अर्जित ज्ञान अपेक्षाकृत स्थायी होता है और इसके साथ ही विद्यार्थी स्वयं के जीवन में उस ज्ञान को प्रयोग में लाने में सफल होते हैं।

7. सहयोगात्मक शिक्षण वह शिक्षण-अधिगम रणनीति है जिसमें विद्यार्थी सीखने में एक दूसरे का सहयोग करते हैं। इसमें विद्यार्थी साझा लक्ष्य के ऊपर समूह में कार्य करते हैं अर्थात यह एक पारस्परिक पद्धति है जिसमें छात्र समूह की भागीदारी होती है
8. योजना विधि किलपैट्रिक ने प्रस्तावित की थी।
9. विवरणात्मक रणनीति में यदि पाठ में लम्बा विवरण हो तो पाठ नीरस हो जाता है और विद्यार्थी रूचि नहीं लेते हैं। और दूसरा सभी शिक्षक कुशलता से इस रणनीति का प्रयोग नहीं कर पाते हैं।
10. भूगोल के अंतर्गत विभिन्न प्रकार के मानचित्रों का प्रयोग धरातलीय बनावट को समझने के लिए, क्षेत्र विशेष में पायी जाने वाली जलवायु जानने के लिए,दो या अधिक स्थानों के मध्य दूरी का पता लगाने हेतु, दिशा निर्धारण हेतु, दो या दो से अधिक प्रदेशों के मध्य तुलना करने के लिए, जनसंख्या और जनसंख्या घनत्व जानने हेतु, क्षेत्र विशेष से सम्बंधित उद्योग धंधों के अध्ययन के लिए किया जाता है।
11. भूगोल में मुख्य रूप से तीन रेखाचित्र होते हैं- पहला एक आयामी रेखाचित्र जिसमें रेखीय आरेख और डंडाकृति/दंडारेखों को सम्मिलित किया जाता है। दुसरे वर्ग में द्विआयामी रेखाचित्र आये हैं जिनमे आयताकार आरेख, वृतीय आरेख और वर्गाकार आरेख को लिया जाता है। तृतीय वर्ग में त्रिआयामी रेखाचित्र आते हैं जिनमे ब्लाक चित्र, स्फीयर आरेख, घनाभ चित्र इत्यादि सम्मिलित होते हैं।
12. कैमरा के प्लेटफार्म के रूप में वायुयान का पहली बार प्रयोग 2909 में हुआ था।

2.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Kaur, B. (2020). Teaching of Geography New Trends & Innovations. New Delhi: Deep & Deep Publications PVT. LTD.
2. Varma, O.P. (2024). Geography Teaching. New Delhi: Sterling Publishers Pvt. Ltd.
3. भट्टाचार्य, जी.सी. (n.d.). भूगोल अध्यापन. आगरा: विनोद पुस्तक मंदिर.
4. सिंह, एच.एन. (2024). भूगोल शिक्षण. आगरा: अग्रवाल पब्लिकेशनस.

2.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. आगमनात्मक और निगमनात्मक उपागम किस प्रकार एक दूसरे से भिन्न हैं? विवेचना करें।
2. शिक्षण के दौरान रचनात्मक उपागम का प्रयोग किस प्रकार किया जा सकता है? इसके लाभ और सीमाओं पर भी प्रकाश डालें।
3. समस्या समाधान रणनीति की सावधानियों, लाभ तथा दोषों की चर्चा करें"
4. भूगोल शिक्षण में शामिल की जाने वाले संसाधनों का वर्णन करें।

इकाई 3 - अर्थशास्त्र: एक अनुशासन के रूप में अर्थशास्त्र का अर्थ, प्रकृति एवं क्षेत्र, अर्थशास्त्र के मूल संप्रत्यय: दुर्लभता तथा चयन, अवसर लागत, उत्पादकता, माँग, पूर्ति एवं बाजार क्रियाविधि, श्रम के भाग एवं विशिष्टता; अर्थशास्त्र शिक्षण के लक्ष्य एवं उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 एक अनुशासन के रूप में अर्थशास्त्र का अर्थ, प्रकृति एवं क्षेत्र
  3.3.1 अर्थशास्त्र की परिभाषा
  3.3.2 अर्थशास्त्र की प्रकृति
  3.3.3 अर्थशास्त्र का क्षेत्र
3.4 अर्थशास्त्र में मुख्य सिद्धान्त
  3.4.1 दुर्लभता एवं चयन
  3.4.2 अवसर लागत
  3.4.3 उत्पादकता
  3.4.4 माँग
  3.4.5 पूर्ति एवं बाजार क्रियाविधि
  3.4.6 श्रम के भाग और विशिष्टता
3.5 अर्थशास्त्र शिक्षण के लक्ष्य तथा उद्देश्य
3.6 सारांश
3.7 शब्दावली
3.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
3.10 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

मनुष्य की आवश्यकताएं अनंत हैं, मनुष्य की समस्त क्रियाएं उसकी आवश्कताओं से पैदा होती हैं। उसकी कुछ आवश्यकताएं ऐसी हैं, जिनकी संतुष्टि के लिए उसे आर्थिक प्रयत्नों की शरण लेनी पड़ती है। अर्थशास्त्र बहुत प्राचीन शास्त्र है, भारत में आज से लगभग 2300 वर्ष पूर्व चंद्रगुप्त मौर्य के शासन काल में आचार्य कौटिल्य ने संसार के समक्ष एक क्रमबद्ध अर्थशास्त्र प्रस्तुत किया जो आज भी कौटिल्य अर्थशास्त्र के नाम से सुविख्यात है, इसका तात्पर्य है कि इसके पूर्व भारतवर्ष में ऐसे शास्त्र का अस्तित्व रहा होगा। भारतवर्ष के लिए अर्थशास्त्र कोई नवीन विषय नहीं है परंतु जिस रूप में अर्थशास्त्र आज विकसित हुआ है उसका प्रादुर्भाव पाश्चात्य देशों में हुआ है। अर्थशास्त्र की जड़ें प्राचीन काल की सभ्यता में भी मौजूद थी लेकिन इस काल में अर्थशास्त्र राजनीति की विषय वस्तु थी। आज के वैज्ञानिक चमत्कारों से सुसमृद्ध औद्योगिक एवं व्यावसायिक युग के लिए तो यह एक बड़ा ही महत्वपूर्ण शास्त्र बन गया है।

अर्थशास्त्र के जनक एडम स्मिथ की पुस्तक "एन इंक्वायरी इंटू द नेचर एंड कौसेस ऑफ़ वेल्थ ऑफ़ नेशन" वर्ष 3776 ई॰ में प्रकाशित हुआ था। इसी समय से आधुनिक अर्थशास्त्र का जन्म माना जाता है। यद्यपि की लगभग एक शताब्दी तक इस विज्ञान को 'राजनीतिक अर्थव्यवस्था' (पॉलिटिकल इकोनॉमी) के नाम से संबोधित किया जाता था, परंतु इसी अवधि में कुछ अर्थशास्त्रियों ने इसे नए-नए नाम देने के प्रयास किए, जैसे – हॉर्न (Hearn) ने इसे 'प्लूटोलॉजी' (Plutology) अथवा 'धन का विज्ञान' तथा व्हेटले ने इसे कैटलाक्टिक (Catallactic) अर्थात 'विनिमय का विज्ञान' कह कर पुकारा। वर्ष 3890 में प्रोफेसर मार्शल ने अपनी सुविख्यात पुस्तक का नाम 'अर्थशास्त्र का सिद्धांत' (प्रिंसपल ऑफ़ इकोनामिक्स) रखा। मार्शल ने अर्थशास्त्र का 'राज्य अर्थव्यवस्था' जैसा नाम उचित नहीं समझा। इनके बाद सभी अर्थशास्त्रियों ने अर्थशास्त्र शब्द को स्वीकार किया और तब से यह नाम चला आ रहा है। समय तथा सभ्यता के विकास के साथ अर्थशास्त्र में अनेक रूपांतरण तथा परिवर्तन हुए हैं। मानव ज्ञान की अनेक शाखाएं हैं। अर्थशास्त्र उनमें से ज्ञान की एक अत्यंत महत्वपूर्ण तथा उपयोगी शाखा है। सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में अर्थशास्त्र को एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। आज अर्थशास्त्र एक अत्यंत जीवन उपयोगी और विशाल विषय है।

अब यह निर्विवाद रुप से स्वीकार किया जाता है कि सामाजिक विज्ञान के सभी क्षेत्रों में अर्थशास्त्र ही एक ऐसा विज्ञान है जिसकी गणना सामाजिक कल्याण व मानवीय प्रगति के लिए, प्रथम पंक्ति में की जाती है। अर्थ विज्ञान का प्रयोग, विश्व की अर्थव्यवस्थाओं के तीव्र विकास और संपूर्ण मानव जाति की भूख, निर्धनता, बेरोजगारी आदि संकटों से मुक्त करने के लिए किया जा रहा है। मानवीय उपभोग के विभिन्न व विविध क्षेत्रों से लेकर उत्पादन, विनिमय, वितरण, राजस्व, राज्य-प्रशासन, करारोपण, नियोजन, उद्योग, व्यापार, बैंकिंग, बीमा, आयात-निर्यात, लोक-कल्याण इत्यादि कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जो अर्थविज्ञान से प्रभावित न हो। इसके अतिरिक्त बहुत सी ऐसी आर्थिक समस्याएं हैं, जो अर्थव्यवस्था में आर्थिक संगतों के रुप में उभरती रहती हैं जैसे - मुद्रा-प्रसार, खाद्यान्न की कमी, आर्थिक निष्क्रियता तथा मंदी, बेरोजगारी, जनसंख्या विस्फोट, प्रतिकूल भुगतान संतुलन इत्यादि इस प्रकार की हैं

कि उन्हें उचित आर्थिक पृष्ठभूमि के बिना, न तो भली प्रकार समझा जा सकता है और न उनका सही व संतोषप्रद समाधान ही ढूंढा जा सकता है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप -

1. अर्थशास्त्र का अर्थ अपने शब्दों में बता सकेंगे एवं परिभाषित कर सकेंगे।
2. अर्थशास्त्र के विभिन्न परिभाषाओं में अन्तर कर सकेंगे।
3. अर्थशास्त्र की प्रकृति का वर्णन कर सकेंगे।
4. अर्थशास्त्र के कार्य क्षेत्रों की व्याख्या कर सकेंगे।
5. अर्थशास्त्र के दुर्लभता एवं चयन के सिद्धान्त को स्पष्ट कर सकेंगे।
6. अवसर लागत का अर्थ, विशेषताओं एवं सीमाओं का वर्णन कर सकेंगे।
7. उत्पादकता के अर्थ की व्याख्या एवं उसके विभिन्न सूत्रों में अन्तर कर सकेंगे।
8. माँग को परिभाषित कर सकेंगे और माँग के प्रकारों में विभिन्नता कर सकेंगे।
9. पूर्ति को अपने शब्दों में व्यक्त कर सकेंगे तथा पूर्ति को प्रभावित करने वाले तत्व को अभिव्यक्त कर सकेंगे।
10. श्रम तथा उसके भाग या विशिष्टता का वर्णन कर सकेंगे।
11. अर्थशास्त्र शिक्षण के लक्ष्यों और उद्देश्यों को स्पष्ट कर सकेंगे।

3.3 एक अनुशासन के रूप में अर्थशास्त्र का अर्थ, प्रकृति एवं क्षेत्र

मनुष्य की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के क्रम में आर्थिक समस्या किसी न किसी रूप में व हर युग में अर्थात आदिमानव से लेकर आधुनिक मानव तक के सामने उपस्थित रही है। 38वीं शताब्दी की औद्योगिक क्रांति ने सारे यूरोप में तहलका मचा दिया। उत्पादन, व्यापार, उद्योग तथा वाणिज्य के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए और राज्य के परंपरागत कार्यों में मौलिक संशोधन हुए आर्थिक अध्ययन के क्षेत्र में 'राजनैतिक अर्थव्यवस्था' के स्थान पर "अर्थशास्त्र" का अध्ययन प्रारंभ हुआ। आधुनिक अर्थशास्त्र एक परिवर्तनशील एवं विकासशील विज्ञान है समस्याओं के उचित तथा संतोषप्रद निदान हेतु अर्थशास्त्र की एक सर्वसम्मत परिभाषा की खोज निरंतर जारी है।

3.3.1अर्थशास्त्र की परिभाषा

ऐतिहासिक एवं तुलनात्मक अध्ययन की दृष्टि से व सुविधा एवं तर्कपूर्ण विवेचना हेतु अर्थशास्त्र की परिभाषाओं को निम्नलिखित वर्गों में विभाजित किया जा सकता है :-

1. **धन केंद्रित परिभाषा -** 38वीं शताब्दी के अंत तथा 39वीं शताब्दी के आरंभ में अनेक विद्वानों तथा लेखकों का मत था कि अर्थशास्त्र धन का विज्ञान है। इसमें एडम स्मिथ, जे॰ बी॰ से, वाकर इत्यादि अर्थशास्त्रियों को रखा जाता है, इन विद्वानों को क्लासिकी अर्थशास्त्री कहते हैं। एडम स्मिथ के अनुसार "अर्थशास्त्र राष्ट्रों के धन के स्वरुप तथा कारणों की खोज से संबंधित है अर्थात अर्थशास्त्र धन का विज्ञान है." इसी प्रकार जे॰ बी॰ से के अनुसार " अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जो धन का अध्ययन करता है." वाकर द्वारा लिखित पुस्तक "पॉलिटिकल इकनॉमी" (3883) में भी यही मत है कि "राजनीतिक अर्थशास्त्र या अर्थशास्त्र ज्ञान के उस अंश का नाम है जिसका संबंध धन से है।"

   अर्थशास्त्रियों ने उपर्युक्त परिभाषाओं की कटु आलोचना की क्योंकि यह परिभाषा 'धन' पर अत्यधिक बल देती है तथा धन को साधन के स्थान पर है साध्य मान लिया गया है। अतः उन्होंने अर्थशास्त्र को घृणित शास्त्र, रोटी मक्खन का विज्ञान, कुबेर का शास्त्र आदि की संज्ञा दे डाला है। धन संबंधी परिभाषाओं में "आर्थिक मानव" की कल्पना की गई है, जो मानव को सदभावनाओं, प्रेम, सहानुभूति, देशभक्ति आदि से दूर करता था जबकि यही वास्तविक जीवन और उद्दात जीवन की परिचायक हैं। इन आलोचनाओं के कारण उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में धन संबंधी परिभाषा का का परित्याग कर दिया गया।

2. **कल्याण केंद्रित परिभाषा -** अर्थशास्त्रियों के दृष्टिकोण में में परिवर्तन स्वरूप 'धन' की जगह अर्थशास्त्र को "मानव कल्याण" से जोड़ा जाने लगा। इसके **प्रमुख प्रणेता अल्फ्रेड मार्शल** थे, इसमें मार्शल, पीगू एवं कैनन आदि अर्थशास्त्रियों के परिभाषाओं को सम्मिलित किया जाता है, मार्शल ने यह विचार प्रदान किया कि धन्य 'साध्य' नहीं है बल्कि वह एक 'साधन' मात्र है, इन्होंने धन की अपेक्षा **"मानव कल्याण"** पर अधिक बल दिया है, इनके के अनुसार "अर्थशास्त्र मानव जीवन के सामान्य व्यवसाय का अध्ययन करता है। इसमें व्यक्तिगत तथा सामाजिक क्रियाओं के उस भाग की जांच की जाती है जिसका भौतिक सुख के साधनों की प्राप्ति और उपभोग से बहुत घनिष्ठ संबंध है।"

   तथा **प्रोफेसर पीगू** के शब्दों में, "अर्थशास्त्र आर्थिक कल्याण का अध्ययन है और आर्थिक कल्याण का वह भाग है जिसका मुद्रा के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष मापदंड से संबंध स्थापित किया जा सकता है।" कल्याण प्रकृति में परिमाणात्मक तथा गुणात्मक दोनों होता है। वस्तु एवं सेवाओं का उपभोग, प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि, आदि कल्याण के परिमाणात्मक पहलू हैं जबकि शांति से रहना, अवकाश का आनंद लेना, ज्ञान अर्जित करना कल्याण के गुणात्मक पहलू हैं। कल्याण के विज्ञान के रूप में अर्थशास्त्र का संबंध केवल परिमाणात्मक कल्याण से ही माना गया क्योंकि उसे मुद्रा में मापा जा सकता है। केवल भौतिक वस्तुओं का ही समावेश, मानव कार्यों को आर्थिक तथा अनार्थिक क्रियाओं में विभक्त करना, धन रूपी अपर्याप्त पैमाना, साधारण तथा असाधारण वर्गों में विभक्त करना, इत्यादि उचित नहीं होने के कारण इसकी आलोचना की जाती है और अर्थशास्त्र के वैज्ञानिक आधार को कमजोर करती है।

3. **दुर्लभता केंद्रित परिभाषा** – अर्थशास्त्र की कल्याण की परिभाषा ने कल्याण के केवल भौतिक पहलुओं की ही व्याख्या किया, परंतु लोगों को भौतिक वस्तुओं तथा अभौतिक सेवाओं दोनों की आवश्यकता होती है। **प्रोफेसर रॉबिन्स** ने धन संबंधी परिभाषाओं की तीव्र आलोचना की और 3932 में अर्थशास्त्र की नवीन परिभाषा प्रस्तुत की जो दुर्लभ साधनों की परिभाषा के नाम से जानी गई उनके अनुसार, "अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जो साध्य और स्वल्प साधनों का वैकल्पिक उपयोगों की दृष्टि से मनुष्य के आचरण का अध्ययन करता है।" इस परिभाषा ने आधुनिक अर्थशास्त्रियों के विचारधारा में पर्याप्त उथल-पुथल मचा दी और अधिकांश अर्थशास्त्री प्रोफेसर रॉबिन्स के अनुयायी हो गए। व्यक्ति अथवा समाज के पास उपलब्ध संसाधन दुर्लभ होते हैं, लोग अपने लक्ष्यों को इन संसाधनों के वैकल्पिक प्रयोग से प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं जो वह उपयुक्त चयन के द्वारा करते हैं। अतः अर्थशास्त्र को दुर्लभता तथा चयन का विज्ञान कहा गया, दुर्लभता तथा चयन के विज्ञान के रूप में अर्थशास्त्र मानवीय व्यवहार के उद्देश्यों व दुर्लभ साधनों के संबंधों का अध्ययन करता है जिनका वैकल्पिक प्रयोग किया जा सकता है।

   दुर्लभ साधनों की परिभाषा सर्वमान्य है क्योंकि प्रत्येक राष्ट्र के सम्मुख दुर्लभ साधनों के उचित आवंटन हेतु चयन की समस्या है लेकिन ध्यान पूर्वक विचार करें तो ज्ञात होगा कि रॉबिन्स का यह दृष्टिकोण स्थैतिक था जबकि उन्हें आर्थिक समस्या का गत्यात्मक दृष्टिकोण लेना चाहिए था, तर्क पूर्ण होते हुए भी इस परिभाषा में अभाव दिखता है जिसके कारण कुछ समय से 'दुर्लभता' का स्थान "विकास" ने ले लिया है।

4. **आवश्यकता दमन केंद्रित परिभाषा** – भारत के **प्रोफेसर जे० के० मेहता** ने भारतीय दर्शन के परिप्रेक्ष्य में भौतिकवाद से हटकर आध्यात्मिकता प्रभावित होकर निम्नलिखित परिभाषा दी – "अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जिसके अंतर्गत उन मानवीय क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है जो कि आवश्यकताविहीनता की दशा प्राप्त करने के लिए की जाती है। संपूर्ण मानवीय व्यवहार का सार्वभौमिक उद्देश्य आवश्यकताओं का दमन करना ही है।" भारतीय दर्शन में भौतिकवाद को महत्व नहीं दिया जाता है तथा ऐसा वर्णन प्राप्त होता है कि जीवन का सुख प्राप्त करने हेतु भौतिक आवश्यकताओं का दमन किया जाना चाहिए। इस प्रकार की परिभाषाओं को व्यापक समर्थन नहीं मिलता क्योंकि यह अर्थशास्त्र के आधारभूत तत्व 'आवश्यकता आर्थिक क्रियाओं की जननी है' के विपरीत कार्य करती है।

5. **विकास केंद्रित परिभाषा -** आधुनिक युग में अर्थशास्त्र की एक ऐसी परिभाषा की आवश्यकता है जो न केवल सीमित साधनों के वितरण पर ही जोर दे, बल्कि साधनों के **विकास तथा वर्धन** अर्थात **आर्थिक विकास** पर भी बल दे। किस प्रकार साधनों को और बढ़ाया जाए और अधिकतम संतुष्टि प्राप्त की जा सके। इसी संदर्भ में **प्रोफ़ेसर सेम्युलसन** ने विकास केंद्रित निम्न परिभाषा दी - "अर्थशास्त्र यह अध्ययन करता है कि व्यक्ति अथवा समाज, धन के प्रयोग अथवा बिना प्रयोग के यह चयन करते हैं कि दुर्लभ साधनों को, जिनके वैकल्पिक प्रयोग हो सकते हैं,

किस प्रकार एक समय में विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन में लगाया जाए एवं समाज के लोगों एवं वर्गों में इनका वितरण उपभोग के लिए अभी एवं भविष्य में कैसे किया जाए।"

आर्थिक संवृद्धि तथा विकास में सरकार की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई इसीलिए अर्थशास्त्र अब केवल व्यक्तिगत निर्णय लेने तथा संसाधनों के प्रयोग तक ही सीमित नहीं रह गया है। किसी व्यक्ति को अपनी आवश्यकताओं की तुष्टि करने के योग्य बनाने के लिए यह आवश्यक है कि संपूर्ण अर्थव्यवस्था में संवृद्धि होनी चाहिए तथा संवृद्धि के लाभों को व्यक्ति/नागरिकों में वितरित करने के लिए उपयुक्त साधन ढूंढने चाहिए। समय के साथ वस्तुओं के उत्पादन तथा उपभोग को सम्मिलित कर इसके क्षेत्र में विस्तार किया गया ताकि अर्थव्यवस्था में संवृद्धि तथा विकास हो सके इसीलिए अर्थशास्त्र को संवृद्धि तथा विकास का विज्ञान कहा गया है। बीसवीं शताब्दी के अंत में अर्थशास्त्रियों ने भावी पीढ़ियों के कल्याण तथा पर्यावरण की सुरक्षा के लिए धारणीय विकास से जोड़ना आरंभ कर दिया है इसीलिए अर्थशास्त्र को धारणीय विकास का विज्ञान भी कहा जाने लगा है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि आधुनिक अर्थशास्त्र पूर्व के अर्थशास्त्र से अधिक व्यापक हो गया है। पहले अर्थशास्त्र केवल प्राप्त साधनों के वैकल्पिक प्रयोग में चयन पर बल देता था जबकि आधुनिक अर्थशास्त्र में इसका संबंध समाज के संपूर्ण साधनों का वैकल्पिक प्रयोगों में विवेकपूर्ण आवंटन, समाज के उत्पादन का व्यक्तियों एवं समाज के वर्गों में उचित वितरण, अर्थव्यवस्था की क्षमताओं एवं अक्षमताओं तथा तरीकों से भी है जो एक समय पश्चात उत्पादन व वितरण दोनों में परिवर्तन लाते हैं।

3.3.2 अर्थशास्त्र की प्रकृति

किसी भी विषय या शास्त्र की प्रकृति के ज्ञान को दो भागों में विभक्त किया जाता है - एक विज्ञान और दूसरा कला। अर्थशास्त्र की प्रकृति से आशय है कि अर्थशास्त्र विज्ञान है या कला अथवा दोनों ही।

अर्थशास्त्र विज्ञान के रुप में : अर्थशास्त्र एक विज्ञान है, यह निम्नलिखित तर्कों के आधार पर कही जा सकता है:-

- अर्थशास्त्र मानव ज्ञान की वह शाखा है, जिसमें तथ्यों का क्रमबद्ध रुप से संग्रह, वर्गीकरण एवं विश्लेषण किया जाता है।
- अर्थशास्त्र के भी निश्चित सिद्धान्त एवं नियम होते हैं।
- आर्थिक नियमों एवं सिद्धान्तों के निर्माण में अर्थशास्त्र वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग करता है।
- जिस प्रकार भौतिक विज्ञानों में सम्बन्धित तथ्यों के सही मापन के लिए मापदण्ड होता है, उसी प्रकार अर्थशास्त्र में भी मानव उद्देश्यों तथा प्रवृत्तियों के मापन के लिए मुद्रा का मापदण्ड होता है।

- मनुष्य के व्यवहार की सामान्य प्रवृत्तियों और उसके पीछे प्रेरित उद्देश्यों का अध्ययन किया जाता है। अर्थशास्त्र के सिद्धान्त विज्ञान के समान ही सर्वव्यापी एवं सार्वभौमिक होते हैं। जैसे- माँग व उत्पत्ति का नियम, उपयोगिता ह्रास नियम इत्यादि।
- विज्ञान के समान अर्थशास्त्र में भी भविष्यवाणी करने की क्षमता होती है।
- सभी सामाजिक विज्ञानों में केवल अर्थशास्त्र ही एक ऐसा विज्ञान है जो मुद्रा के मापदण्ड के आधार पर सबसे निश्चित विज्ञान माना जाता है।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि अर्थशास्त्र का समावेश एक विज्ञान की श्रेणी में किया जाता है। लेकिन विज्ञान दो प्रकार के होते हैं - **प्रथम**- वास्तविक विज्ञान तथा **द्वितीय** - आदर्श विज्ञान। इस विषय पर अर्थशास्त्री लम्बे समय से दो अलग-अलग सम्प्रदायों में बँट गए हैं। इंग्लैण्ड के प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के अनुसार अर्थशास्त्रियों को आर्थिक विषयों पर उनके औचित्य अथवा अनौचित्या पर कोई मत देने का अधिकार नहीं है। ठीक इसके विपरीत जर्मनी के ऐतिहासिक सम्प्रदाय के अनुसार अर्थशास्त्रियों को आर्थिक मामलों के औचित्य अथवा अनौचित्य पर अपनी स्पष्ट राय व्यक्त करने का अधिकार है क्योंकि अर्थशास्त्री अपने आप को नीतिशास्त्र से अलग नहीं कर सकते हैं।

रॉबिन्स और उनके अनुयायियों का स्पष्ट मत है कि आर्थिक विषयों के इन दोनों पहलुओं- ''क्या है'' और 'क्या होना चाहिए' - को एक दूसरे से अलग रखा जाना चाहिए। विशुद्ध वैज्ञानिक दृष्टि से अर्थशास्त्री को यह जोखिम नहीं उठानी चाहिए, इस प्रकार ''एक अर्थशास्त्री को एक विशुद्ध वैज्ञानिक की तरह से कार्य करना है तो उसे न तो परामर्श देना और न ही कल्याण के सम्बन्ध में चिन्ता करनी होगी।'' अर्थात ''अर्थशास्त्री का कार्य केवल विश्लेषण करना है, निदान करना नहीं।'' आधुनिक अर्थशास्त्रियों का एक बड़ा वर्ग स्वीकारता है कि यह वास्तविक विज्ञान के साथ-साथ कल्याणकारी विज्ञान भी है क्योंकि यह विवेचना भी करता है और इसका उत्तरदायित्व भी है कि वह उदाहरण के तौर पर बताए कि क्या होना चाहिए? कैसा होना चाहिए? मानव कलयाण के लिए आर्थिक नियोजन कैसे किया जाए? इत्यादि। आर्थिक निष्कर्षो में व्यावहारिकता लाने के लिए नितान्त आवश्यक है कि अर्थशास्त्र तथा नीतिशास्त्र में सीधा सम्बन्ध हो क्योंकि इस विषय का सम्बन्ध मावन कल्याण से माना जाता है।

उपर्युक्त विवेचनोपरांत यह कहा जा सकता है कि **अर्थशास्त्र वास्तविक विज्ञान के साथ-साथ आदर्श विज्ञान भी है।** अतः अर्थशास्त्री का कार्य केवल व्याख्या या खोज करना ही नहीं, बल्कि समर्थन एवं निन्दा करना भी है।

अर्थशास्त्र कला के रुप में : कला शब्द से आशय किसी अध्ययन के व्यावहारिक पक्ष से लगाया जाता है, यह किसी उद्देश्य को प्राप्त करने की सर्वोत्तम विधि को व्यक्त करती है अर्थात वस्तुओं को प्रस्तुत करने का ढंग। जिस प्रकार विज्ञान एक क्रमबद्ध ज्ञान संग्रह है, उसी प्रकार कला एक क्रमबद्ध क्रिया है। **प्रो0 केन्ज** के शब्दों में, ''कला एक निश्चित उद्देश्य की प्राप्ति के लिए, नियमों की प्रणाली है।'' अर्थशास्त्र एक कला है, इस सम्बन्ध में दिए जाने वाले प्रमुख तर्क निम्नलिखित हैं :-

- अर्थशास्त्र को एक सामाजिक व मानव विज्ञान होने के कारण उसे उद्देश्यों की अच्छाई-बुराई के साथ समाज के समक्ष उत्पन्न होने वाली आर्थिक समस्याओं को कल्याणकारी रुप में हल करना होता है।
- अर्थशास्त्र केवल ज्ञानदायक न होकर फलदायक भी है इसीलिए उसका कलात्मक स्वरुप हमें आदर्शो को प्राप्त करने में सहायक होता है।
- आज विश्व के अधिकांश राष्ट्र आर्थिक नियोजन की प्राप्ति हेतु आर्थिक विकास की विभिन्न योजनाओं निर्माण कर रहे हैं। इन योजनाओं को कार्यरुप में परिणित करने के लिए अर्थशास्त्री व्यावहारिक नीतियाँ बनाते हैं।
- अनेक आर्थिक नीतियाँ विशुद्ध आर्थिक होती हैं, विज्ञान से सर्वश्रेष्ठ हल नहीं निकाला जा सकता।
- अर्थशास्त्र की अनेक समस्याओं का हल केवल आर्थिक पहलूओं को ध्यान में रखकर नहीं प्राप्त किया जा सकता है, बल्कि ऐतिहासिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, मनोविज्ञान आदि पर भी निर्भर करती है।
- अर्थशास्त्र अधिकतम संतुष्टि एवं कल्याण की स्थिति प्राप्त करने हेतु मानव द्वारा सम्पन्न की जाने वाली आर्थिक क्रियाओं एवं व्यवहारों की विवेचना करके कुछ व्यावहारिक रीतियाँ एवं नियम सुझाता है।
- मानव, समाज व राष्ट्र के असीमित आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सीमित साधनों से किस प्रकार अधिकतम संतुष्टि एवं कल्याण के साम्य बिन्दु तक पहुँचा जा सकता है।
  निष्कर्षतः यह **कला** को भी प्रदर्शित करता है।

अर्थशास्त्र विज्ञान तथा कला दोनों है :- वास्तविकता तो यह है कि प्रत्येक विज्ञान के कलात्मक तथा व्यावहारिक दोनों ही पक्ष होते है। प्रत्येक कला का सैद्धान्तिक तथा वैज्ञानिक पहलू भी होता है एक सिक्के के दो पहलुओं के रुप में प्रो0 बई के शब्दों में, "विशुद्ध विज्ञान उपकरणों की व्यवस्था करता है तथा व्यावहारिक विज्ञान उन उपकरणों की सहायता से समस्याओं का समाधान करता है, दोनों एक दूसरे के पूरक हैं।'' अर्थशास्त्रियों ने विशुद्ध अर्थशास्त्र के साथ व्यावहारिक अर्थशास्त्र के विकास की ओर बहुत अधिक ध्यान दिया है, वर्तमान समय में तो व्यावहारिक अर्थशास्त्र विशुद्ध अर्थशास्त्र से भी अधिक लोकप्रिय बन गया है। अतः अर्थशास्त्र एक वास्तविक और आदर्श विज्ञान होने के साथ ही साथ कला भी है। कला एक पुल के समान है जिसके माध्यम से वास्तविक विज्ञान और आदर्श विज्ञान का मिलन होता है।

3.3.3 अर्थशास्त्र का क्षेत्र

प्राचीन काल में अर्थशास्त्र का विषय क्षेत्र बहुत ही सीमित था, मध्यकाल में थोड़ा विस्तार हुआ लेकिन आधुनिक काल में तीव्र गति से समाज के निर्माण व परिवर्तन से अर्थशास्त्र के क्षेत्र विषय सामग्री तथा स्वरुप में भी परिवर्तन होने के साथ-साथ विकासवादी व कल्याणकारी भी हो गया; इस दृष्टि से अर्थशास्त्र एक सामाजिक व मानवीय विज्ञान है, जिसकी विषय-वस्तु का सीधा सम्बन्ध विकास व स्थिरता के साथ-साथ मानव के सामाजिक कल्याण, लक्ष्यों को प्राप्त करने एवं सीमित साधनों के उचित उपयोग और आवण्टन पर आधारित हो।

अर्थशास्त्र की वह विषय-सामग्री जिसे 'आर्थिक क्रिया' कहा जाता है, पाँच भागों में विभक्त किया जाता है, जो निम्नलिखित हैः- **(3) उपभोग**: आधुनिक अर्थशास्त्रियों के अनुसार उपभोग अर्थशास्त्र का अत्यन्त महत्वपूर्ण विभाग है। आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु उपभोग का कम करना ही उपभोग का दूसरा नाम है। उपभोग के अन्तर्गत मानव की आवश्यकताओं, उनके लक्षण, वर्गीकरण, सन्तुष्टी आदि विधि का अध्ययन किया जाता है। **(2) उत्पादन**: अर्थशास्त्र के दूसरे प्रमुख क्षेत्र उत्पादन का अभिप्राय, मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए, वस्तु की उपयोगिता में की जाने वाले खाली वृद्धि से है। अर्थात उपयोगिता की वृद्धि ही उत्पादन का अन्य नाम है। उत्पादन के साधनों में भूमि, श्रम, पूँजी, संगठन तथा साहस की विशेषताओं, लक्षण, महत्व, कार्यक्षमता, उत्पत्ति के नियम व विभिन्न समस्याओं का अध्ययन करते है। **(3) विनिमय**: दो या दो से अधिक व्यक्तियों अथवा पक्षों के बीच वस्तुओं व सेवाओं के ऐच्छिक, वैधानिक और पारस्परिक आदान-प्रदान को विनिमय कहते हैं। विनिमय के अन्तर्गत प्रमुख समस्या मूल्य-निर्धारण है, शेष अतिरिक्त द्रव्य, साख, अधिकोषण, बाजार, व्यापार बैंकिंग आदि का भी अध्ययन करते हैं। **(4) वितरण**: उत्पत्ति के विभिन्न साधनों के सहयोग से जो संयुक्त उत्पत्ति होती है, उनका विभिन्न साधनों में बँटना ही वितरण कहलाता है। इसके अन्तर्गत लगान, मजदूरी, ब्याज, लाभ इत्यादि का निर्धारण व समस्या समाधान का अध्ययन किया जाता है। **(5) राजस्व**: वर्तमान युग में सरकार का दायित्व मात्र जन-सुरक्षा तथा कानून-व्यवस्था तक सीमित नहीं रह गया है बल्कि 'जन-कल्याण' महत्वपूर्ण दायित्व माना जाता है। राजस्व में राज्य, सरकार व सार्वजनिक संस्थाओं के आय और व्यय तथा उनके साधनों का अध्ययन करते हैं। इसके अन्तर्गत लोक व्यय, लोक आय, लोक ऋण, वित्तीय शासन आदि की समस्याएँ आती हैं।

अर्थशास्त्र के उपर्युक्त वर्णित विभागों या क्षेत्रों को पृथक-पृथक समझना भूल होगी क्योंकि यह विभाजन अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से किया गया है। अर्थशास्त्र के पाँचों विभाग या क्षेत्र एक-दूसरे से घनिष्ठ रुप से सम्बन्धित हैं, किसी एक क्षेत्र या विभाग को समझने के लिए शेष क्षेत्र या विभाग समझना जरुरी है।

अभ्यास प्रश्न

1. अर्थशास्त्र की परिभाषाओं को कितने वर्गों में विभाजित किया जा सकता है ?

2. अर्थशास्त्र की प्रकृति अंततः क्या है ?
3. अर्थशास्त्र के प्रमुख क्षेत्र क्या-क्या हैं ?

3.4 अर्थशास्त्र के मूल संप्रत्यय

3.4.1 दुर्लभता तथा चयन

ब्रिटेन के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री **लॉर्ड रॉबिंस** ने सन 3932 में अर्थशास्त्र की परिभाषा अपनी महान पुस्तक **"नेचर एंड सिग्निफ़िकेंस ऑफ इकोनॉमिक्स साइंस"** में दी, जिसमें इन्होंने अर्थशास्त्र के प्रचलित स्वरूप के दृष्टिकोण को चुनौती दी। प्रोफेसर रॉबिंस ने **'कल्याण'** संबंधी परिभाषाओं के दोषों को व्यक्त करते हुए न तो **धन** पर ही अधिक बल दिया और न तो **मानव कल्याण** पर ही, बल्कि इन्होंने मानव की असीमित आवश्यकताओं का सीमित साधनों से संबंध स्थापित करने का प्रयत्न किया । उनके मतानुसार **"भौतिक"** शब्द ने अर्थशास्त्र को अनावश्यक रूप से सीमित कर दिया है और अर्थशास्त्र की **"कल्याण"** की धारणा मैं व्यापकता और सूक्ष्मता नहीं है। उनका दृढ़ विश्वास है कि उनकी परिभाषा में कोई त्रुटि नहीं पाई जाती। रॉबिंस ने अर्थशास्त्र की परिभाषा इस प्रकार की है :

"अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जो अनेक उद्देश्यों और उनके सीमित एवं वैकल्पिक उपयोगों वाले दुर्लभ साधनों के परस्पर संबंधों के रूप में मानव व्यवहार का अध्ययन करता है।"

प्रोफेसर रॉबिंस ने अर्थशास्त्र की परिभाषा को एक वैज्ञानिक तथा तर्कपूर्ण रूप प्रदान किया तथा उन्होंने आर्थिक तथा अनार्थिक क्रियाओं के विभेद को अस्वीकार किया। प्रोफेसर रॉबिंस द्वारा दी गई उक्त वर्णित परिभाषा काफी प्रचलित रही है और यह अर्थशास्त्र का सार और इसके सारे सिद्धांतों की आधारभूमि मानी जाती है। इस परिभाषा में तीन मूल तत्व पाए जाते हैं, अर्थशास्त्र का संपूर्ण ढांचा इन तीन तत्वों पर ही आधारित है :-

प्रथम- उद्देश्य या असीमित आवश्यकताएं :- परिभाषा में जो शब्द "उद्देश्य" आया है, उसका अर्थ मानवीय इच्छाएं तथा आवश्यकताएं हैं। पहला महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि मानव की आवश्यकताएं अनगिनत अथवा असीमित हैं, मनुष्य किसी भी तरह इन सबकी पूर्ति नहीं कर सकता। यदि कोई एक आवश्यकता संतुष्ट होती है तो तुरंत कोई दूसरी आवश्यकता का जन्म हो जाता है। आवश्यकता की इस असीमितता के कारण मनुष्य अपनी संपूर्ण आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकता है और इसी कारण मनुष्य को आवश्यकताओं के बीच चयन करना पड़ता है।

दूसरा - दुर्लभ साधन :- दूसरा तथ्य यह है कि हमारे पास अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जो साधन है, वह दुर्लभ अथवा सीमित हैं और उन्हें प्राप्त करने हेतु कीमत अथवा परिश्रम या दोनों क्रमशः देना या करना पड़ता है। जब हम कहते हैं कि साधन दुर्लभ है, तो हमारा अभिप्राय केवल उसकी मात्रा से नहीं है। जैसे - चावल, गेहूं, कोयला आदि पदार्थ अत्यधिक मात्रा में उपलब्ध है, परंतु हमारी मांग इनकी पूर्ति से कहीं अधिक है। इस परिभाषा में दुर्लभ शब्द का अर्थ सापेक्ष रूप में लिया गया है, न है कि निरपेक्ष रूप में, अर्थात मांग की तुलना में पूर्ति का कम होना, क्योंकि यदि मान लिया जाय कि किसी वस्तु

की पूर्ति कम हो, परंतु उसकी मांग बिल्कुल ही न हो, तो ऐसी वस्तु को भी दुर्लभ नहीं कहा जाएगा; उदाहरण के लिए यद्यपि अच्छे अंडों की तुलना में गंदे अंडे कम संख्या में होते हैं, परंतु उनको दुर्लभ नहीं कहा जाएगा क्योंकि इन अंडों की मांग नहीं होती। इसी प्रकार विश्व बाजार में करोड़ों टन अनाज उपलब्ध होने पर भी इन्हें दुर्लभ माना जाएगा क्योंकि इनकी मांग पूर्ति की अपेक्षा कहीं अधिक होती है अर्थात दो तथ्यों से आर्थिक समस्या उत्पन्न होती है। जब आवश्यकताओं की तुलना में साधन दुर्लभ है तो मनुष्य को यह चुनाव करना पड़ता है कि किस आवश्यकताओं की तुष्टि की जाए और किसको असंतुष्ट छोड़ दिया जाए।

तृतीय - साधनों के वैकल्पिक उपयोग :- तीसरा तथ्य यह है कि हमारे सभी साधन केवल अल्प अथवा दुर्लभ ही नहीं हैं, बल्कि प्रत्येक साधन के अनेक वैकल्पिक उपयोग भी हैं अर्थात उनमें से प्रत्येक का हम अनेक प्रकार से व भिन्न-भिन्न कार्यों में प्रयोग करते हैं। जब आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु साधनों का अनेक वैकल्पिक उपयोग करते हैं तो उपलब्ध दुर्लभ साधनों को आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रयोग में लाने हेतु चुनाव या चयन करना पड़ता है।

दुर्लभता तथा चयन केन्द्रित विवरण स्पष्ट है कि

1. असीमित आवश्यकताओं तथा सीमित साधनों और उनके अनेक उपयोगों के बीच मानव को निर्णय अथवा चुनाव अथवा "चयन" करना पड़ता है, इसी **"चयन करने की क्रिया"** को ही प्रोफेसर राबिंस ने **"आर्थिक समस्या"** कहा है। जब तक यह तीनों परिस्थितियां उत्पन्न नहीं होती हैं तब तक कोई आर्थिक समस्या उत्पन्न नहीं होगी।
2. प्रभावपूर्ण विधि से **'चयन'** करने के लिए किसी न किसी प्रकार की **"मूल्यांकन क्रिया"** का होना आवश्यक है ताकि उन साधनों का प्रयोग अत्यंत आवश्यक उद्देश्यों के लिए ही सीमित किया जा सके। यह मूल्यांकन क्रिया ही अर्थशास्त्र की विषय सामग्री है।

इस प्रकार दुर्लभता एवं चयन केंद्रित परिभाषा ने अर्थशास्त्र के 'भौतिक कल्याण' पर आधारित ढांचे को तोड़कर एक नया स्वरूप प्रदान किया। साध्य अच्छे हैं या बुरे, इसका अर्थशास्त्र से कोई संबंध नहीं है। जहां कहीं भी साध्य अनेक हैं तथा साधन न्यून हैं, वहां अर्थशास्त्र का सीधा संबंध है। कोई संदेह नहीं है कि यह परिभाषा सार्वभौमिक है तथा सभी देशों में समान भाव से लागू होती है।

दुर्लभता केंद्रित परिभाषा में भी त्रुटि है, परंतु प्रोफेसर रॉबिंस की परिभाषा अर्थशास्त्र को तार्किक और वैज्ञानिकता के आधार को मजबूत करती है। परंतु वास्तव में एक प्रावैगिक या गत्यात्मक समस्या के प्रति दुर्लभता केंद्रित परिभाषा का दृष्टिकोण अत्यंत स्थैतिक प्रतीत होता है। अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है और इसमें उस चयन की समस्या का अध्ययन करना चाहिए जिसमें जब एक व्यक्ति द्वारा चयन समाज के अन्य व्यक्तियों पर प्रभाव डालता है अर्थात जिस आर्थिक समस्या का सामाजिक पक्ष हो, उसमें यह प्रभावी सिद्ध होगी।

दुर्लभता केंद्रित परिभाषा से यह महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकलता है कि "अर्थशास्त्र चयन का विज्ञान है", जब कभी भी आवश्यकताओं की तुलना में साधन सीमित पाए जाते हैं, तब चयन की समस्या उत्पन्न

होती है। अतः प्रोफेसर रॉबिंस का यह कथन उपयुक्त व तर्कसंगत प्रतीत होता है कि "जब लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए समय और साधन सीमित हैं तथा साधन वैकल्पिक रूप में प्रयोग किए जाने योग्य हैं और लक्ष्य महत्वानुसार विभेदित किए जाने योग्य हैं, तब मानव व्यवहार आवश्यक रूप से चयन का रूप धारण कर लेता है।" अतः स्पष्ट रूप में कहा जा सकता है कि **अर्थशास्त्र चयन का विज्ञान है।**

3.4.2 अवसर लागत

अर्थशास्त्र का मौलिक सिद्धान्त है कि आर्थिक साधन आवश्यकताओं की तुलना में सीमित होते हैं। अतः किसी वस्तु के उत्पादन का अर्थ है ''दूसरी वस्तु या वस्तुओं के उत्पादन से वंचित होना।'' बेन्हम के शब्दों में ''अवसर लागत या वैकल्पिक लागत वह लागत है जो किसी वस्तु के स्थान पर उन्हीं साधनों की मात्रा से सर्वश्रेष्ठ वैकल्पिक वस्तु का उत्पादन किया जा सके।'' इस धारणा के अनुसार किसी वस्तु की लागत उस वस्तु को उत्पादित करने के लिए किसी अन्य वस्तु का त्याग है जो उन्हीं साधनों से बनाई जा सकती थी जिससे वस्तु बनाई गई है। **उदाहरणार्थ -** (अ) जिन साधनों जैसे-लकड़ी, बढ़ई का श्रम आदि से मेज का निर्माण किया गया, उन्हीं साधनों से कुर्सी का भी निर्माण हो सकता था। अतः मेज निर्माण का विकल्प त्याग (अवसर लागत) हुआ कुर्सी। **(ब)** किसान जब किसी खेत में कपास के बजाय गेहूँ उगाता है तो गेहूँ उगाने का विकल्प त्याग (अवसर लागत) हुआ कपास जो उस खेत में उगाई जा सकती थी। **(स)** एक कृषि मजदूर गाँव को छोड़कर शहर में किसी कारखाने में 5000 रुपये की नौकरी करने लगता है तो यहाँ पर उस मजदूर की अवसर लागत या विकल्प त्याग की वह राशि है जो वह गाँव में मजदूरी करके कमा रहा था।

वैकल्पिक अथवा अवसर लागत में वस्तु या सेवा के सर्वश्रेष्ठ विकल्प की लागत देखी जाती है और उत्पादन की दृष्टि से साधनों की मात्रा में अन्तर हो सकता है परन्तु कुल लागत में अन्तर नहीं होना चाहिए।

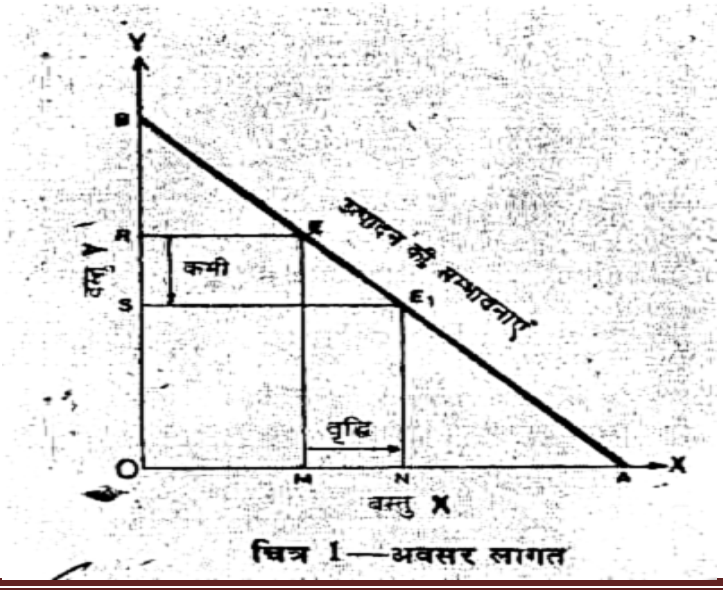

चित्र 1—अवसर लागत

अवसर लागत को हम चित्र द्वारा भी स्पष्ट कर सकते हैं। माना AB रेखा दो वस्तुओं X और Y के उत्पादन की विभिन्न सम्भावनाओं को प्रदर्शित करती है। उत्पादक के पास साधनों की मात्रा निश्चित है जिनसे दो वस्तुओं X और Y का उत्पादन किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में यदि उत्पादक X वस्तु का उत्पादन बढ़ाना चाहता है तो उसे Y वस्तु के उत्पादन में कमी करनी पड़ेगी। चित्र से स्पष्ट है कि X वस्तु की MN मात्रा में वृद्धि करने के लिए Y वस्तु की RS मात्रा कम करनी पड़ती है, यही अवसर लागत है। X वस्तु की MN मात्रा की अवसर लागत = Y वस्तु की RS मात्रा में कमी।

अवसर लागत इस बात पर निर्भर करती है, उत्पादन के किसी एक विशेष साधन में विशिष्टता का कितना गुण है। यदि कोई साधन किसी कार्य के लिए पूर्ण रूप से विशिष्ट है, अर्थात् उसका प्रयोग किसी दूसरे कार्य में नहीं किया जा सकता है तो उस साधन की अवसर लागत शून्य होगी। परन्तु यदि कोई साधन अविशिष्ट है अर्थात् उसका दूसरा प्रयोग सम्भव है तो अवसर लागत अवश्य होगी।

अवसर लागत की विशेषताएँ :- (3) प्रथम विशेषता प्रो0 बेन्हम के अनुसार ''हस्तान्तरण की धारणा इस दृष्टि से लाभदायक है कि इस बात पर प्रकाश डालती है कि किसी उद्योग में उत्पादन की मात्राएँ परिवर्तित होने पर लागत में किस सीमा तक तथा क्यों परिवर्तन होता है।'' (2) लगान का आधुनिक सिद्धान्त इस अवसर लागत के तथ्य पर आधारित है तथा लगान का आधुनिक सिद्धान्त यह बताता है कि लगान अवसर लागत के ऊपर अतिरेक है। (3) अवसर लागत की व्याख्या वास्तविक लागत के रूप में और मुद्रा के रूप में की जा सकती है। (4) अवसर लागत की धारणा सभी प्रकार के साधनों तथा सभी प्रकार के उद्योगों पर समान रूप से लागू होती है। (5) यदि किसी साधन का एक ही प्रयोग सम्भव है अर्थात् वह पूर्णतया विशिष्ट है तो उसके दूसरे उपयोग के अभाव में उस साधन की अवसर लागत शून्य होगी। (6) मुद्रा के रूप में अवसर लागत को व्यक्त करते समय इसमें ''स्पष्ट लागतें तथा अव्यक्त लागतें'' दोनों को शामिल किया जाता है। (7) अवसर लागत उत्पादन के किसी साधन की विशिष्टता के गुण पर निर्भर करती है कि उस साधन में विशिष्टता का कितना गुण मौजूद है। (8) यह तथ्य उत्पत्ति के सीमित साधनों के वितरण में सहायक है। अवसर लागत के सिद्धान्त के अनुसार सीमित साधन, जो अनेक वैकल्पिक प्रयोगों में माँगा जाता है, को एक चुने गये प्रयोग में कम से कम इतना अवश्य मिलना चाहिए जितना उसे श्रेष्ठतम वैकल्पिक प्रयोग में मिल रहा है। अतः अवसर लागत का तथ्य साधनों के वितरण की क्रिया को सफल बनाना है।

अवसर लागत की सीमाएँ :- (3) अवसर पर लागत का विचार विशिष्ट साधनों के सन्दर्भ में लागू नहीं होता है। (2) अवसर लागत की धारणा का आधार यह है कि उत्पादन के साधनों में गतिशीलता में कोई कमी नहीं होती है और उत्पादन के साधन किसी कार्य के लिए कोई पसंदगी नहीं रखते हैं। (3) अवसर लागत की धारणा का एक आधार पूर्ण प्रतियोगिता है जबकि पूर्ण प्रतियोगिता व्यावहारिक जीवन में नहीं पायी जाती है।

3.4.3 उत्पादकता

उत्पादकता का अर्थ है कि उत्पादन के किसी साधन के प्रयोग से वस्तु की कितनी मात्रा उत्पन्न की जा सकती है। **उदाहरण - (अ)** 5 लोहारों ने कितनी तलवारें बनाई? **(ब)** किसान ने 30 एकड़ भूमि पर कितनी उपज पैदा किया? उत्पादकता की धारणाएँ:- किसी उत्पत्ति साधन की उत्पादकता का अर्थ दो सन्दर्भों में लिया जा सकता है- (3) भौतिक उत्पादकता और (2) आगम उत्पादकता

किसी साधन की भौतिक उत्पादकता उस साधन द्वारा उत्पादित वस्तु की भौतिक मात्राओं द्वारा मापी जाती है। जब इस भौतिक उत्पादकता को मुद्रा में व्यक्त कर दिया जाता है तो हमें आगम उत्पादकता प्राप्त हो जाती है।

यदि हम केवल उत्पादन मात्रा ही देखें तो वह पदार्थ अथवा भौतिक उत्पादकता होती है, जो निम्न प्रकार की होती है:-

(3) औसत भौतिकता उत्पादकता (APP) - हम जानते हैं कि

$$\text{औसत उत्पादकता} = \frac{\text{कुल उत्पादकता (TP)}}{\text{साधन विशेष की उत्पादन में लगी इकाइयों की संख्या (n)}}$$

इसे साधन की औसत उत्पादकता द्वारा जाना जाता है। उदाहरण- 7 बढ़ई यदि एक दिन में 7 कुर्सियाँ बनाते हैं तो औसत भौतिक उत्पादकता एक (3) कुर्सी होगी।

(2) सीमान्त भौतिक उत्पादकता (MPP) - अन्य साधनों के स्थिर रहने की दशा में परिवर्तनशील साधन की एक अतिरिक्त इकाई प्रयोग करने पर कुल उत्पादकता (TP) में जो वृद्धि होती है उसे उस साधन की सीमान्त उत्पादकता कहते हैं। दूसरे शब्दों में, किसी साधन की एक अतिरिक्त इकाई के प्रयोग से कुल भौतिक उत्पादकता में जो वृद्धि होती है, उसे उस साधन की सीमान्त भौतिक उत्पादकता (MPP) कहते हैं। उदाहरण - एक कृषि फार्म पर 30 की जगह 32 श्रमिक कर दिये जाएं तो गेहूँ की उपज 50 कुन्तल से 65 कुन्तल हो जाए तो सीमान्त भौतिक उत्पादकता 35 कुन्तल होगी।

(3) औसत आगम उत्पादकता (ARP) - कुल उत्पादन मात्रा को बेचकर जो कुल आय प्राप्त होती है, उसको उत्पादन के साधन की मात्रा से भाग दिया जाता है, औसत आगम उत्पादकता कहलाती है। औसत आगम द्वारा भी जाना जाता है।

$$\text{औसत आगम उत्पादकता (ARP)} = \frac{\text{कुल आगम (TR)}}{\text{साधन की इकाइयों की संख्या (n)}}$$

औसत आगम उत्पादकता (ARP) को एक अन्य प्रकार से भी परिभाषित किया जा सकता है – **ARP = APP × AR** या औसत आगम उत्पादकता = औसत भौतिक उत्पादकता × औसत आगम अथवा कीमत शाब्दिक भाषा में, औसत आगम उत्पादकता, औसत भौतिक उत्पादकता तथा वस्तु कीमत (अर्थात् औस आगम) के गुणनफल के बराबर होती है।

(4) सीमान्त आगम उत्पादकता (MRP) - अन्य उत्पत्ति के साधनों के स्थिर रहने की दशा में परिवर्तनशील साधन की एक अतिरिक्त इकाई के प्रयोग से कुल आगम में जो वृद्धि होती है उसे उस साधन की सीमान्त आगम उत्पादकता (MRP) कहा जाता है।

सीमान्त आगम उत्पादकता (MRP) को एक अन्य रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है:- **MRP = MPP × MR** अर्थात् सीमान्त आगम उत्पादकता = सीमान्त भौतिक उत्पादकता × सीमान्त आगम । शाब्दिक भाषा में, सीमान्त आगम उत्पादकता, सीमान्त भौतिक उत्पादकता तथा सीमान्त आगम के गुणनफल के बराबर होती है।

(5) सीमान्त उत्पादकता का मूल्य (VMP) - सीमान्त उत्पादकता का मूल्य, सीमान्त भौतिक उत्पादकता तथा औसत आगम के गुणनफल के बराबर होता है।

MRP = MPP × MR अर्थात् सीमान्त आगम उत्पादकता = सीमान्त भौतिक उत्पादकता × सीमान्त आगम

अर्थात् यदि सीमान्त भौतिक उत्पादता को बाजार कीमत के साथ गुणा किया जाय तो सीमान्त उत्पादकता का मूल्य प्राप्त होता है। उदाहरण - यदि कपड़े की कीमत 50 रुपये मीटर है और सीमान्त भौतिक उत्पादकता 32 इकाईयाँ हैं तो सीमान्त उत्पादकता का मूल्य (VMP) = 32 × 50 = 600 रुपये होगी। औसत आय उत्पादकता तथा सीमान्त आय उत्पादकता में परस्पर सम्बन्ध वही है जो औसत और सीमान्त मात्राओं का होता है। सम्बन्ध इस प्रकार का है कि यदि औसत मात्रा बढ़ रही है तो सीमान्त मात्रा उससे अधिक होती है। यदि औसत मात्रा स्थिर रहे तो सीमान्त मात्रा उसके समान होती है। यदि औसत मात्रा घट रही है तो सीमान्त मात्रा उससे कम होती है। यही सम्बन्ध सीमान्त आय उत्पादकता और औसत आय उत्पादकता में है।

3.4.4 माँग

किसी वस्तु की कीमत उस वस्तु की माँग व पूर्ति पर निर्भर करती है। माँग के नियम से तात्पर्य है कि वस्तुओं की माँग किस प्रकार निर्धारित होती है? अर्थशास्त्र में माँग तथा पूर्ति के विचार अत्यन्त महत्वपूर्ण है। माँग की कुछ परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं -

- **पेंसन** के शब्दों में ''माँग केवल एक प्रभावपूर्ण इच्छा है। इसमें तीन बातें सम्मिलित होती है -(3) किसी वस्तु को प्राप्त करने की इच्छा (2) उसे क्रय करने के साधन एवं (3) इन साधनों से वस्तु क्रय करने के लिए प्रयोग की तत्परता।''
- **वॉघ** के शब्दों में ''किसी वस्तु की माँग उसकी कीमत और उस मात्रा का सम्बन्ध होती है जो कीमत विशेष पर खरीदी जाएगी।''
- **बेन्हम** के अनुसार ''किसी दिए हुए मूल्य पर वस्तु की माँग उस परिमाण को कहते हैं जो उस मूल्य पर एक निश्चित समय में क्रय की जाती है।

इन परिभाषाओं के आधार पर, माँग के अन्तर्गत निम्नलिखित तत्व निहित है - (3) किसी वस्तु को प्राप्त करने की प्रभावपूर्ण इच्छा का होना। (2) क्रय या इच्छा को पूर्ण करने के लिए पर्याप्त साधन का होना आवश्यक है। (3) साधनों को व्यय करने की तत्परता होना चाहिए। (4) वस्तु की इच्छा का कीमत-विशेष से सम्बन्धित होना अर्थात् एक निश्चित मूल्य का होना आवश्यक है, यदि मूल्य विहीन इच्छा है तो उसे माँग नहीं कहा जायेगा। (5) माँग का सम्बन्ध एक निश्चित या विशेष समय के साथ होना आवश्यक है।उदाहरण- अनाज मण्डी में 500 टन चावल की माँग है यह माँग नहीं कहा जायेगा। यदि कहा जाय कि अनाज मण्डी में प्रतिमाह 500 टन चावल, रुपये 800 प्रति कुन्तल की दर से माँग है तो इसे माँग कहा जायेगा।

माँग के प्रकार :- माँग तीन प्रकार की होती हैं, जो निम्नलिखित है- (3) मूल्य माँग, (2) आय माँग तथा (3) आड़ी माँग

3. मूल्य माँग:- ''यदि अन्य बातें समान रहे तो मूल्य माँग किसी वस्तु की उन मात्राओं को बताती है जो विभिन्न मूल्यों पर उपभोक्ता द्वारा एक निश्चित समय में माँगी जाती है।'' अर्थात् यदि अन्य बातें समान रहे से अर्थ यह है कि हम यह मान लेते हैं कि उपभोक्ताओं की आय, उनकी रुचियों, उनके फैशनों एवं अन्य सम्बन्धित वस्तुओं के मूल्यों में कोई परिवर्तन नहीं होता है।

2. आय माँग:- आय माँग रेखा को जर्मन अर्थशास्त्री ऐंजिल के नाम पर 'ऐंजिल रेखा' भी कहते हैं। आय माँग की परिभाषा इस प्रकार से की जाती है - ''यदि अन्य बातें समान रहे तो आय माँग से अर्थ वस्तु की उन मात्राओं से है जो कि आय के विभिन्न स्तरों पर उपभेक्ताओं द्वारा क्रय की जाती है।'' अर्थात् अन्य बातों के समान रहने का अर्थ यह है कि उपभोक्ता की रुचि, स्वभाव, फैशन सम्बन्धित वस्तुओं के मूल्यों आदि में कोई परिवर्तन न हो। निम्न कोटी की वस्तुएँ- कुछ वस्तुएँ ऐसी होती हैं जिनकी माँग आय के बढ़ने पर घटती है। ऐसी वस्तुओं को आर्थिक दृष्टि से निम्न कोटि की वस्तु कहा जाता है।

3. आड़ी या प्रत्युत्तर माँग:- ''यदि अन्य बातें समान रहें तो आड़ी या प्रत्युत्तर माँग से अभिप्राय किसी वस्तु की उन विभिन्न मात्राओं से होता है जिन्हें उपभोक्ता किसी अन्य सम्बन्धित वस्तु के विभिन्न मूल्यों पर प्रति समय-इकाई क्रय करता है। इसकी व्याख्या इस प्रकार से की जा सकती है कि किसी वस्तु की माँग तथा अन्य सम्बन्धित वस्तुओं के मूल्य के बीच दो प्रकार के सम्बन्ध हो सकते हैं-

(3) एक वस्तु के मूल्य में कमी दूसरी सम्बन्धित वस्तु की माँग में कमी कर दे। इन वस्तुओं को स्थानापन्न वस्तु कहा जाता है। जैसे यदि चाय का मूल्य बढ़ जाय तो लोग काफी पीने लगेंगे।

(2) दूसरा सम्बन्ध यह हो सकता है कि एक वस्तु के मूल्य में कमी दूसरी वस्तु की माँग में वृद्धि कर दे। इस प्रकार की वस्तुओं को पूरक वस्तु कहा जाता है। जैसे यदि पेन (कलम) का मूल्य बढ़ जाय तो स्याही की माँग घट जायेगी और यदि पेन का मूल्य कम हो जाय तो स्याही की माँग बढ़ जायेगी।

कुछ अन्य प्रकार की माँग:- **(3) संयुक्त माँग -** जब दो या दो से अधिक वस्तुएं किसी संयुक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिए एक साथ माँगी जाय तो उसे संयुक्त माँग कहा जायेगा। जैसे- कार तथा पेट्रोल की एवं पेन तथा स्याही की माँग आदि। **(2) व्युत्पन्न माँग -** जब एक वस्तु की माँग इसलिए की जाए कि उसकी सहायता से दूसरी वस्तुओं का उत्पादन किया जाय तो उसे व्युत्पन्न माँग कहते हैं। जैसे- श्रम की माँग

करना। **(3) सामूहिक माँग -** ऐसी वस्तु की माँग करना जिसका प्रयोग अनेक कार्यों में किया जाता है। जैसे - कोयला तथा बिजली की माँग करना।

माँग को प्रभावित करने वाल तत्त्व- यह निम्नलिखित है - (3) उपभोक्ता की आय (2) उपभोक्ता की क्रयशक्ति (3) आय व धन का असमान वितरण (4) स्थानापन्न एवं पूरक वस्तुओं का मूल्य (5) रुचि व फैशन (6) सामाजिक रीति-रिवाज (7) जनसंख्या (8) वस्तुओं के मूल्य में उतार-चढ़ाव (9) बचत तथा उपभोग की प्रवृत्ति (30) बाजार में उपभोक्ताओं की संख्या (33) बाजार व व्यापार में समृद्धि व मन्दी (32) ऋतु और मौसम अर्थात् जलवायु में परिवर्तन (33) जनसंख्या के आन्तरिक संरचना में परिवर्तन (34) बाजार की अवस्था या चक्रीय परिवर्तन (35) संयुक्त माँग वाली वस्तुओं के मूल्य में परिवर्तन।

3.4.5 पूर्ति एवं बाजार क्रियाविधि

पूर्ति से तात्पर्य किसी वस्तु की उन मात्राओं से है जो विभिन्न कीमतों पर बाजार में बिक्री के लिए प्रस्तुत की जाती है। यदि अन्य परिस्थितियाँ समान रहे, तो विभिन्न कीमतों पर वस्तु की भिन्न-भिन्न मात्राएँ बेचने के लिए तैयार होंगे अर्थात् विभिन्न कीमतों पर वस्तु की कि गई पूर्ति मात्रा भिन्न-भिन्न होगी। दूसरे शब्दों में, किसी समय विशेष में एक निश्चित कीमत पर वस्तु की जिस मात्रा को उत्पादक बाजार में बेचने को तैयार रहता है वह पूर्ति कहलाती है। पूर्ति कीमत पर निर्भर करती है। नियस के अनुसार यदि अन्य बातें समान रहें तो वस्तु की कीमत बढ़ने पर पूर्ति बढ़ जाती है और कीमत घटने पर पूर्ति घट जाती है।

वस्तु की पूर्ति और स्टाक या भंडार में अन्तर है। स्टाक से अभिप्राय वस्तु की कुल मात्रा से है जो विक्रेता के पास होती है और पूर्ति वह मात्रा है जो वह विशेष समय पर किसी निश्चित पर बेचने को तैयार होता है। जो वस्तुएँ शीघ्र नष्ट होने वाली हैं (जैसे-फल, दूध, सब्जी इत्यादि) तो उनकी पूर्ति व स्टाक में प्रायः अन्तर नहीं होता लेकिन जो वस्तुएँ शीघ्र नष्ट नहीं होती तो उनकी कीमत अनुकूल न होने पर उनकी पूर्ति, स्टाक की तुलना में कम की जा सकती है।

पूर्ति से अभिप्राय है कि दी हुई कीमत पर फर्म अथवा विक्रेता वस्तु की कितनी मात्रा बेचने के लिए प्रस्तुत करेगा अर्थात् पूर्ति की धारणा तभी लागू होगी जब फर्म का स्वयं कीमत पर कोई प्रभाव न हो। अतः पूर्ति की धारणा केवल पूर्ण प्रतियोगिता की दशा में ही लागू होती है।

पूर्ति का नियम:- अन्य बातें समान रहने पर, वस्तु की कीमत वृद्धि पूर्ति को बढ़ायेगी तथा वस्तु कीमत में कर्मी पूर्ति को घटायेगी। इस प्रकार वस्तु कीमत तथा वस्तु पूर्ति में प्रत्यक्ष तथा सीधा सम्बन्ध पाया जाता है। फलन के रूप में

$$S = f(P)$$

जहाँ S वस्तु की पूर्ति तथा P वस्तु का मूल्य है जिसका अभिप्राय है कि किसी वस्तु का पूर्ति फलन, वस्तु पूर्ति तथा उसके मूल्य के मध्य बढ़ता सम्बन्ध स्पष्ट करता है।

नियम की मान्यताएँ:- (3) स्थानापन्नों की कीमतों में कोई परिवर्तन नहीं होता। (2) उत्पत्ति के साधनों की कीमतें स्थिर रहती है। (3) तकनीकी ज्ञान का स्तर स्थिर रहता है। (4) प्राकृतिक दशाएँ समान रहती है।

(5) सरकारी नीति अपरिवर्तनीय होनी चाहिए। (6) क्रेता तथा विक्रेता की रुचि, आदत, फैशन आदि में परिवर्तन नहीं होना चाहिए।

पूर्ति तालिका एवं पूर्ति रेखा :- विभिन्न कीमतों पर बाजार में वस्तु की बेची जानी वाली मात्राओं को यदि तालिका में व्यक्त कर दिया जाय तो इसे पूर्ति तालिका कहते हैं। यह दो प्रकार की होती है- **(अ) व्यक्तिगत पूर्ति तालिका:-** यह तालिका एक विक्रेता के पूर्ति फलन को स्पष्ट करती है। एक विक्रेता किसी समयावधि विशेष में विभिन्न कीमतों पर वस्तु की जितनी मात्रा बाजार में बेचने को तैयार रहता है, उसे यदि तालिका के रूप में प्रदर्शित किया जाय तो इसे हम व्यक्तिगत पूर्ति तालिका कहते हैं। **(ब) बाजार पूर्ति तालिका:-** बाजार के सभी विक्रेता मिलकर विभिन्न कीमतों पर बाजार में कुल कितनी मात्रा बेचने को तैयार है।

तालिका - 3

वस्तु कीमत प्रति इकाई	व्यक्तिगत पूर्तियाँ			बाजार पूर्ति X+Y+Z
	विक्रेता X	विक्रेता Y	विक्रेता Z	
40	20	20	30	50
50	40	30	40	330
60	60	50	50	360
70	80	80	70	230
80	300	330	90	300
90	320	330	330	360

तालिका में बाजार पूर्ति तीनों विक्रताओं द्वारा विभिन्न कीमतों पर प्रस्तुत की जाने वाली कुल वस्तु मात्रा को बताती है। तालिका यह स्पष्ट करती है कि जब वस्तु की कीमत बढ़ती है, तब वस्तु की पूर्ति की गयी मात्रा में भी वृद्धि होती है, इसके विपरीत, वस्तु की कीमत घटने पर पूर्ति मात्रा में भी कमी होती है।

पूर्ति रेखा की मान्यताएँ:- मान लिया जाता है कि (3) उत्पादन साधनों का मूल्य स्थिर है। (2) पूर्ति रेखा एक स्थिर अवस्था को व्यक्त करती है, यह एक समयावधि में पूर्ति में परिवर्तनों को व्यक्त नहीं करती है। (3) कीमत में प्रत्येक परिवर्तन (सूक्ष्म) पूर्ति को परिवर्तित नहीं करता है, बल्कि पूर्ति में परिवर्तन के लिए मूल्य में एक निश्चित परिवर्तन आवश्यक है। (4) क्रेताओं और विक्रताओं की आय स्थिर रहती है। (5) क्रेताओं और विक्रेताओं की रुचियों और पसन्द में कोई परिवर्तन नहीं होता है। (6) तकनीकी ज्ञान में कोई परिवर्तन नहीं होता है।

पूर्ति को प्रभावित करने वाल वाले तत्व:- किसी वस्तु की पूर्ति अनेक तत्वों पर निर्भर करती है। फलन के रूप में **S = f (P, S, N, X, T……..)**

जहाँ S = वस्तु की पूर्ति, P = वस्तु की कीमत, S = उपादानों की पूर्ति, N = प्राकृतिक साधन/तत्व, X = सरकारी नीति, T = तकनीकी ज्ञान.....इत्यादि। **(3) वस्तु की कीमत-** अन्य बातों के स्थिर रहने पर

वस्तु के मूल्य में परिवर्तन होने पर वस्तु की पूर्ति में भी परिवर्तन होता है। **(2) उपादानों की पूर्ति-** यदि उत्पादन साधनों का मूल्य बढ़ जायेगा तो उत्पादन लागत भी बढ़ जायेगी, फलस्वरूप उत्पादन कम अथवा दुर्लभ होगा अर्थात् पूर्ति कम हो जायेगी। **(3) प्राकृतिक तत्व-** उत्पादन प्राकृतिक तत्वों से भी प्रभावित होता है। समयानुकूल एवं पर्याप्त वर्षा जहाँ उत्पादन में वृद्धि तथा अकाल, बाढ़, सूखा आदि दैवी विपत्तियाँ उत्पादन में कमी करेंगे। **(4) सरकारी नीति-** सरकारी कर नीति किसी उद्योग विशेष की पूर्ति को प्रभावित करती है। सरकार पर नीति के अन्तर्गत संरक्षण देती है उत्पादन प्रोत्साहित तथा जिन उद्योगों पर अधिक कर लगाया जाता है उनका उत्पादन हतोत्साहित होगा। **(5) तकनीकी ज्ञान-** तकनीकी विकास में अधिक उचित पैमाने के आकार का प्रयोग करते हुए उद्योग अपने उत्पादन में, लागत को घटाते हुए, वृद्धि कर सकते हैं। **(6) समझौता-** कभी-कभी बड़े उत्पादक किसी वस्तु की कम पूर्ति करने के लिए समझौता भी कर लेते हैं। **(7) युद्ध तथा राजनीतिक उथुल-पुथल** के कारण भी पूर्ति प्रभावित होती है।

3.4.6 श्रम के भाग और विशिष्टता

अर्थशास्त्र के अन्तर्गत जिस कार्य को करने के बदले आर्थिक प्रतिफल प्राप्त होता है, उसे श्रम कहते हैं। अतः इस प्रकार मजदूर, मैनेजर, वकील, नौकर, डॉक्टर, इन्जीनियर, अध्यापक आदि सभी के आर्थिक प्रयत्न श्रम के अन्तर्गत आ जाते हैं। श्रम की प्रमुख परिभाषाएं निम्नलिखित हैं :-

- **मार्शल** – "श्रम से अभिप्राय मनुष्य के आर्थिक कार्य से है, चाहे वह हाथ से किया जाय या मस्तिष्क से।''
- **पीगू -** "वह प्रारिश्रमिक (या सेवा) जिसे द्रव्य द्वारा मापा जाता है, श्रम कहलाता है।''
- **टॉमस -** "सभी प्रकार का मानव श्रम चाहे वह शारीरिक हो या मानसिक, परन्तु जो पारिश्रमिक प्राप्त करने के आषा से किया जाता है, अर्थषास्त्र में श्रम कहलाता है।''
- **बेन** – "आर्थिक विष्लेषण की दृष्टि से श्रम मानव की सेवाएँ हैं, उनकी उत्पत्ति को निर्मित करने वाली क्रियाएँ- शारीरिक अथवा मानसिक या दोनों ही हो सकती हैं।''
- **जेवन्स -** "श्रम वह मानसिक व शारीरिक प्रयत्न है, जो अंषतः या पूर्णतः, कार्य से प्राप्त होने वाले सुख के अतिरिक्त, अन्य किसी आर्थिक उद्देष्य से किया जाता है।''

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि श्रम में निम्न लक्षणों का होना आवश्यक है :- (3) श्रम में केवल मानवीय प्रयत्न सम्मिलित किए जाते हैं; (2) श्रम के अन्तर्गत शारीरिक तथा मानसिक श्रम दोनों प्रकार के प्रयास शामिल किए जाते हैं; (3) श्रम में केवल उन्हीं प्रयासों को रखा जाता है जिनका उद्देश्य आर्थिक होता है; एवं (4) श्रम के द्वारा भौतिक तथा अभौतिक दोनों प्रकार के पदार्थों का निर्माण होता है।

श्रम के सजीव व सक्रिय साधन होने के कारण उत्पादन की गुणवत्ता तथा मात्रा को प्रभावित करता है, जिससे अल्पकाल एवं अति अल्पकाल में भी परिवर्तित करके उत्पादन की मात्रा (पूर्ति) व

बाजार की माँग में सामन्जस्य पैदा किया जा सकता है। श्रम को हम तीन श्रेणियों में विभक्त करते हैं :- (3) कुशल श्रम, (2) अर्द्ध कुशल श्रम तथा (3) अकुशल श्रम।

श्रम के प्रकार या विशिष्टीकरण :- श्रम के मुख्य रुप से तीन प्रकार बताए जाते हैं:- (3) उत्पादक तथा अनुत्पादक श्रम, (2) कुशल तथा अकुशल श्रम तथा (3) शारीरिक तथा मानसिक श्रम।

(3) उत्पादक तथा अनुत्पादक श्रम:- इसके सम्बन्ध में अर्थशास्त्रियों में मतभेद रहा है; जैसे- (3) फ्रांस के फिजियोक्रेट्स अर्थशास्त्रियों के अनुसार केवल कृषक का श्रम ही उत्पादक होता है; अन्य सभी श्रम को अनुत्पादक मानते हैं। (2) आधुनिक अर्थशास्त्री उन सभी प्रयासों को उत्पादक श्रम मानते हैं जिनसे उपयोगिता का सृजन होता है। यहाँ उपयोगिता से तात्पर्य- 'आवश्यकता पूर्ति की शक्ति से है।' अतः वह सब श्रम, जो आवश्यकता की पूर्ति करता है, उत्पादक श्रम होगा।

प्रो. टामस ने 'उपयोगिता सृजन' के स्थान पर 'मूल्य सृजन' का प्रयोग किया है क्योंकि कई वस्तुओं या कार्यों की उपयोगिता बहुत अधिक हो सकती है परन्तु उसमें मूल्य या बाजार भाव का अभाव हो सकता है। अतः वह अनुत्पादक श्रम है। जैसे- माता द्वारा शिशु का कार्य।

किसी भी प्रकार द्वारा किए गए श्रम, जिसके उत्पादन को कीमत में मापा जा सके, उसे उत्पादक श्रम कहते हैं तथा जिस श्रम में उत्पादन अथवा कीमत में नहीं मापा जा सकता, उसे अनुत्पादक श्रम कहते हैं। जैसे- गृह में गृहणियों का कार्य।

(2) कुशल तथा अकुशल श्रम:- कुशल श्रम उस श्रम को कहते हैं जिसे करने हेतु विशेष प्रशिक्षण एवं ज्ञान की आवश्यकता होती है। जैसे- ड्राइवर, पायलट, इन्जीनियर, डॉक्टर, शिक्षक इत्यादि का श्रम कुशल श्रम है तथा जिस श्रम हेतु विशेष प्रशिक्षण व ज्ञान की आवश्यकता नहीं होती है, उसे अकुशल श्रम कहते हैं। जैसे- चपरासी, कुली, चौकीदार, घरेलू नौकर आदि का श्रम अकुशल श्रम कहा जाएगा।

विशेष प्रशिक्षण व ज्ञान के अभाव में अकुशल श्रमिकों की पूर्ति अधिक होती है लेकिन कुशल श्रमिकों की अपेक्षा अकुशल श्रमिकों की मजदूरी कम होती है।

(3) शारीरिक तथा मानसिक श्रम:- शारीरिक श्रम वह श्रम है जिसमें बुद्धि व विवेक की अपेक्षा शारीरिक कार्य द्वारा पारिश्रमिक प्राप्त होता है; जैसे- धोबी, कुली, नाई इत्यादि का शारीरिक श्रम। मानसिक श्रम वह श्रम है जिसमें शारीरिक श्रम की अपेक्षा बुद्धि व विवेक द्वारा पारिश्रमिक प्राप्त होता है; जैसे- वकील, इन्जीनियर, डॉक्टर, शिक्षक इत्यादि के श्रम द्वारा प्राप्त पारिश्रमिक।

अभ्यास प्रश्न

4. प्रसिद्ध अर्थशास्त्री लॉर्ड रॉबिंस की दुर्लभता सम्बन्धी परिभाषा दीजिए एवं परिभाषा के प्रमुख तीन मूल तत्वों को बताइए।
5. अवसर लागत की एक परिभाषा प्रस्तुत करें।
6. उत्पादकता का अर्थ उदाहरण सहित प्रस्तुत करें।
7. माँग की परिभाषा में कौन-कौन तत्व मौजूद हैं ?

8. पूर्ति को प्रभावित करने वाले तत्वों का वर्णन कीजिए।
9. श्रम के मुख्य प्रकारों या विशिष्टता को बताइये ?

3.5 अर्थशास्त्र शिक्षण के लक्ष्य तथा उद्देश्य

शिक्षा एक मानवजन्य और मानवीय प्रक्रिया है और इसका प्रत्येक शैक्षणिक कार्य किसी न किसी लक्ष्य या उद्देश्य की ओर निर्दिष्ट होता है। छात्र विद्यालय में जीवन की उपयोगी बातें सीखता है तथा व्यक्तिगत व सामाजिक जीवन में वह एक उत्पादक इकाई के रूप में आजीवन कार्य करता है । शिक्षण के सार्थक लक्ष्यों व उद्देश्यों के आधार पर वह जीवन के विभिन्न व विविध पक्षों को समझता है और उनमें नवीन अनुभवों को सम्मिलित कर व्यावहारिक कुशलता अर्जित करता है। अर्थशास्त्र के शिक्षक को यह ज्ञात होना चाहिए कि वह अर्थशास्त्र के किन उद्देश्य व लक्ष्यों को सम्मुख रखकर इस विषय की शिक्षा दे तथा अर्थशास्त्र के शिक्षण से छात्रों में समाजोनुकूल वांछीत परिवर्तन करने के साथ-साथ बालक की अंतर्निहित शक्तियों का विकास करते हुए उसके बहुमुखी व्यक्तित्व का निर्माण कर सके। सामान्य रूप में लक्ष्य एवं उद्देश्य को समानार्थी समझा जाता है लेकिन इनमें में अन्तर है । लक्ष्य सामान्य एवं विशिष्ट दो प्रकार के होते हैं। विशिष्ट लक्ष्य ही उद्देश्य कहलाते हैं । विशिष्ट उद्देश्यों को सामान्य की अपेक्षा प्राप्त करना अधिक सरल होता है। सामान्य उद्देश्य आदर्शवादी होते हैं जबकि विशिष्ट उद्देश्य यथार्थवादी होते हैं लेकिन सुविधा की दृष्टि से यहाँ हम इन्हें समानर्थी रखते हैं। अर्थशास्त्रियों एवं शिक्षाशास्त्रियों के अनुसार अर्थशास्त्र शिक्षण के लक्ष्य एवं उद्देश्य निम्नलिखित हैं :-

- विद्यार्थी को विश्व के आर्थिक एवं भौगोलिक परिस्थितियों से अवगत कराना,
- विद्यार्थी को देश के आर्थिक एवं भौगोलिक परिस्थितियों से अवगत कराना,
- विद्यार्थी को आर्थिक पदों से परिचित कराना,
- विद्यार्थी को आर्थिक पदों के विषय में प्रत्यय निर्मित करने योग्य बनाना,
- विद्यार्थी को आर्थिक सिद्धांतों का ज्ञान कराना,
- विद्यार्थी को आर्थिक प्रक्रियाओं से परिचित कराना,
- विद्यार्थी में आर्थिक चेतना का विकास करना,
- विद्यार्थी में सामाजिक चेतना का विकास करना,
- विद्यार्थी में राष्ट्र की आर्थिक स्थिति तथा समस्याओं का ज्ञान कराना,
- विद्यार्थी में आर्थिक सुनागरिकता का विकास करना,
- विद्यार्थी में आर्थिक कुशलता एवं मित्तव्ययिता के भाव का विकास करना,
- विद्यार्थी को एक कुशल उपभोक्ता के रूप में निर्माण करना,

- विद्यार्थी में आर्थिक एवं सामाजिक उत्तरदायित्व एवं स्वावलंबन की भावना जागृत करना,
- विद्यार्थी में वैज्ञानिक युग के अनुकूल आर्थिक रुप से वैज्ञानिक एवं तार्किक दृष्टिकोण का विकास करना,
- विद्यार्थी में राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण का विकास करना,
- विद्यार्थी में राज्य तथा समाज की आर्थिक संरचना का ज्ञान कराना,
- विद्यार्थी को मुद्रा का व्यवहारिक जीवन में प्रयोग का प्रशिक्षण देना,
- विद्यार्थी में आर्थिक एवं सामाजिक सह-अस्तित्व एवं सद्भावना का विकास करना,
- विद्यार्थी में आर्थिक व सामाजिक मुद्दों से संबंधित तर्क एवं निर्णय शक्ति का विकास करना,
- विद्यार्थी को आर्थिक रूप से अनुशासित जीवन व्यतीत करने योग्य बनाना,
- विद्यार्थी में उपयुक्त व्यवसाय अपनाने की योग्यता का विकास करना,
- विद्यार्थी को दैनिक जीवन की आर्थिक क्रियाओं एवं समस्याओं से अवगत कराना,
- विद्यार्थी में अर्थशास्त्र विषय के प्रति रुचि जागृत करना,
- विद्यार्थी को दैनिक जीवन की आर्थिक समस्याओं को समझने में समर्थ बनाना,
- विद्यार्थी में आर्थिक तथ्यों के प्रति रुचि जागृत करना,
- विद्यार्थी को अर्थशास्त्र संबंधी उच्च स्तर का ज्ञान प्राप्त करने के लिए तैयार करना,
- विद्यार्थी को आर्थिक जीवन की राष्ट्रीय एवं सामाजिक समस्याओं एवं उनके समाधानों से अवगत कराना,
- विद्यार्थी में कुशल उत्पादक, कुशल वितरक एवं कुशल प्रशासक के गुणों का विकास करना,
- विद्यार्थी में व्यापक राष्ट्रीय दृष्टिकोण विकसित करना,
- विद्यार्थी के वर्तमान वैज्ञानिक युग के अनुकूल सामाजिक-आर्थिक बौद्धिक और मानसिक शक्तियों का विकास करना,
- विद्यार्थी को उच्च शिक्षा और विशेषकर अर्थशास्त्र की उच्च शिक्षा के लिए तैयार करना,
- विद्यार्थी में भविष्य की आर्थिक समस्याओं के प्रति अवबोध एवं पूर्वानुमान करने की योग्यता विकसित करना,
- विद्यार्थी को सामाजिक परिस्थितियों व घटनाओं के मूल में निहित आर्थिक तत्वों के प्रति आलोचनात्मक दृष्टि उत्पन्न करने योग्य बनाना,

- विद्यार्थी में उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के दृष्टिकोण के आधार पर विश्व के अन्य राष्ट्रों की आर्थिक समस्याओं तथा उनकी समाधान विधियों को समझकर अपने राष्ट्र की आर्थिक समस्याओं को सुलझाने के प्रति व्यावहारिक दृष्टि पैदा करना,
- विद्यार्थी में प्रजातंत्रात्मक पद्धति की सफलता के प्रति प्रत्येक नागरिक को आर्थिक रूप में सचेष्ट बनाना,
- विद्यार्थी को एक महत्वपूर्ण उत्पादन इकाई के रूप में ढालना,
- विद्यार्थी में देश प्रेम एवं स्वस्थ्य अंतर्राष्ट्रीयता का भाव उत्पन्न करना, एवं
- विद्यार्थी में प्रदत्त आँकड़ों के प्रति आलोचनात्मक दृष्टि से समझने की क्षमता पैदा करना इत्यादि।

3.6 सारांश

मानव ज्ञान की अनेक शाखाएं हैं। अर्थशास्त्र उनमें से ज्ञान की एक अत्यंत महत्वपूर्ण तथा उपयोगी शाखा है। अर्थशास्त्र बहुत प्राचीन शास्त्र है, भारतवर्ष के लिए अर्थशास्त्र कोई नवीन विषय नहीं है परंतु जिस रूप में अर्थशास्त्र आज विकसित हुआ है उसका प्रादुर्भाव पाश्चात्य देशों में हुआ है। अर्थशास्त्र की जड़ें प्राचीन काल की सभ्यता में भी मौजूद थी लेकिन इस काल में अर्थशास्त्र राजनीति की विषय वस्तु थी। आज के वैज्ञानिक चमत्कारों से सुसमृद्ध औद्योगिक एवं व्यावसायिक युग के लिए तो यह एक बड़ा ही महत्वपूर्ण शास्त्र बन गया है। अर्थशास्त्र की गणना मानव विज्ञान के नवीनतम शास्त्र के रूप में की जाती है, जिसे हम आधुनिक अर्थ विज्ञान कहते हैं। इसका इतिहास केवल दो शताब्दी पूर्व का ही है। समय तथा सभ्यता के विकास के साथ अर्थशास्त्र में अनेक रूपांतरण तथा परिवर्तन हुए हैं। सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में अर्थशास्त्र को एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। हमारे दैनिक जीवन में हम अनेक आर्थिक अवधारणाओं से संबंधित अनेक आर्थिक निर्णय लेते हैं तथा साथ ही देश व विदेश से संबंधित आर्थिक सूचनाओं की प्राप्ति तथा उन पर नजर रखते हैं जो हमारे जीवन, समाज व राष्ट्र को प्रभावित करते हैं। आज अर्थशास्त्र एक अत्यंत जीवन उपयोगी और विशाल विषय है।

अब यह निर्विवाद रुप से स्वीकार किया जाता है कि सामाजिक विज्ञान के सभी क्षेत्रों में अर्थशास्त्र ही एक ऐसा विज्ञान है जिसकी गणना सामाजिक कल्याण व मानवीय प्रगति के लिए, प्रथम पंक्ति में की जाती है। अर्थ विज्ञान का प्रयोग, विश्व की अर्थव्यवस्थाओं के तीव्र विकास और संपूर्ण मानव जाति की भूख, निर्धनता, बेरोजगारी आदि संकटों से मुक्त करने के लिए किया जा रहा है। विद्यालयी पाठ्यचर्या में अर्थशास्त्र एक महत्वपूर्ण विषय है जिसके द्वारा विभिन्न लक्ष्यों और उद्देश्यों की प्राप्ति का प्रयास किया जाता है और एक शिक्षक के लिए इसका ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है।

3.7 शब्दावली

1. **उपभोग**: आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु उपभोग का कम करना ही उपभोग का दूसरा नाम है। उपभोग के अन्तर्गत मानव की आवश्यकताओं, उनके लक्षण, वर्गीकरण, सन्तुष्टी आदि विधि का अध्ययन किया जाता है।
2. **उत्पादन**: अर्थशास्त्र के दूसरे प्रमुख क्षेत्र उत्पादन का अभिप्राय, मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए, वस्तु की उपयोगिता में की जाने वाले खाली वृद्धि से है। अर्थात उपयोगिता की वृद्धि ही उत्पादन का अन्य नाम है।
3. **विनिमय**: दो या दो से अधिक व्यक्तियों अथवा पक्षों के बीच वस्तुओं व सेवाओं के ऐच्छिक, वैधानिक और पारस्परिक आदान-प्रदान को विनिमय कहते हैं।
4. **वितरण**: उत्पत्ति के विभिन्न साधनों के सहयोग से जो संयुक्त उत्पत्ति होती है, उनका विभिन्न साधनों में बँटना ही वितरण कहलाता है।
5. **राजस्व**: वर्तमान युग में सरकार का दायित्व मात्र जन-सुरक्षा तथा कानून-व्यवस्था तक सीमित नहीं रह गया है बल्कि 'जन-कल्याण' महत्वपूर्ण दायित्व माना जाता है। राजस्व में राज्य, सरकार व सार्वजनिक संस्थाओं के आय और व्यय तथा उनके साधनों का अध्ययन करते हैं। इसके अन्तर्गत लोक व्यय, लोक आय, लोक ऋण, वित्तीय शासन आदि की समस्याएँ आती हैं।
6. **उद्देश्य या असीमित आवश्यकताएं :-** परिभाषा में जो शब्द "उद्देश्य" आया है, उसका अर्थ मानवीय इच्छाएं तथा आवश्यकताएं हैं।
7. **दुर्लभ साधन :-** दूसरा तथ्य यह है कि हमारे पास अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जो साधन है, वह दुर्लभ अथवा सीमित हैं। हमारी मांग इनकी पूर्ति से कहीं अधिक है। इस परिभाषा में दुर्लभ शब्द का अर्थ सापेक्ष रूप में लिया गया है, न है कि निरपेक्ष रूप में, अर्थात मांग की तुलना में पूर्ति का कम होना, क्योंकि यदि मान लिया जाय कि किसी वस्तु की पूर्ति कम हो, परंतु उसकी मांग बिल्कुल ही न हो, तो ऐसी वस्तु को भी दुर्लभ नहीं कहा जाएगा
8. **साधनों के वैकल्पिक उपयोग :-** प्रत्येक का हम अनेक प्रकार से व भिन्न-भिन्न कार्यों में प्रयोग करते हैं।
9. **अवसर लागत :** अवसर लागत या वैकल्पिक लागत वह लागत है जो किसी वस्तु के स्थान पर उन्हीं साधनों की मात्रा से सर्वश्रेष्ठ वैकल्पिक वस्तु का उत्पादन किया जा सके।
10. **उत्पादकता :** उत्पादकता का अर्थ है कि उत्पादन के किसी साधन के प्रयोग से वस्तु की कितनी मात्रा उत्पन्न की जा सकती है।
11. **उत्पादक तथा अनुत्पादक श्रम:-**किसी भी प्रकार द्वारा किए गए श्रम, जिसके उत्पादन को कीमत में मापा जा सके, उसे उत्पादक श्रम कहते हैं तथा जिस श्रम में उत्पादन अथवा कीमत में नहीं मापा जा सकता, उसे अनुत्पादक श्रम कहते हैं। जैसे- गृह में गृहणियों का कार्य।
12. **कुशल तथा अकुशल श्रम:-** कुशल श्रम उस श्रम को कहते हैं जिसे करने हेतु विशेष प्रशिक्षण एवं ज्ञान की आवश्यकता होती है। जैसे- ड्राइवर, पायलट, इन्जीनियर, डॉक्टर, शिक्षक इत्यादि

का श्रम कुशल श्रम है तथा जिस श्रम हेतु विशेष प्रशिक्षण व ज्ञान की आवश्यकता नहीं होती है, उसे अकुशल श्रम कहते हैं। जैसे- चपरासी, कुली, चौकीदार, घरेलू नौकर आदि का श्रम अकुशल श्रम कहा जाएगा।

13. **शारीरिक तथा मानसिक श्रम:-** शारीरिक श्रम वह श्रम है जिसमें बुद्धि व विवेक की अपेक्षा शारीरिक कार्य द्वारा पारिश्रमिक प्राप्त होता है; जैसे- धोबी, कुली, नाई इत्यादि का शारीरिक श्रम। मानसिक श्रम वह श्रम है जिसमें शारीरिक श्रम की अपेक्षा बुद्धि व विवेक द्वारा पारिश्रमिक प्राप्त होता है; जैसे- वकील, इन्जीनियर, डॉक्टर, शिक्षक इत्यादि के श्रम द्वारा प्राप्त पारिश्रमिक।

3.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. अर्थशास्त्र की परिभाषाओं को निम्न वर्गों में विभाजित किया जा सकता है :- (3) धन केंद्रित परिभाषा, (2) कल्याण केंद्रित परिभाषा, (3) दुर्लभता केंद्रित परिभाषा (4) आवश्यकता दमन केंद्रित परिभाषा तथा (5) विकास केंद्रित परिभाषा।
2. अर्थशास्त्र की प्रकृति अंततः कला और विज्ञान दोनों है।
3. अर्थशास्त्र के प्रमुख क्षेत्र निम्नलिखित हैं – (3) उपभोग, (2) उत्पादन, (3) विनिमय, (4) वितरण और (5) राजस्व।
4. प्रसिद्ध अर्थशास्त्री लॉर्ड रॉबिंस की दुर्लभता सम्बन्धी परिभाषा - "अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जो अनेक उद्देश्यों और उनके सीमित एवं वैकल्पिक उपयोगों वाले दुर्लभ साधनों के परस्पर संबंधों के रूप में मानव व्यवहार का अध्ययन करता है।" परिभाषा के प्रमुख तीन मूल तत्व निम्न है :- प्रथम- उद्देश्य या असीमित आवश्यकताएं, दूसरा - दुर्लभ साधन तथा तृतीय - साधनों के वैकल्पिक उपयोग।
5. अवसर लागत की परिभाषा, बेन्हम के शब्दों में ''अवसर लागत या वैकल्पिक लागत वह लागत है जो किसी वस्तु के स्थान पर उन्हीं साधनों की मात्रा से सर्वश्रेष्ठ वैकल्पिक वस्तु का उत्पादन किया जा सके।''
6. उत्पादकता का अर्थ है कि उत्पादन के किसी साधन के प्रयोग से वस्तु की कितनी मात्रा उत्पन्न की जा सकती है। उदाहरण - (अ) 5 लोहारों ने कितनी तलवारें बनाई? (ब) किसान ने 30 एकड़ भूमि पर कितनी उपज पैदा किया?
7. माँग की परिभाषाओं के आधार पर, माँग के अन्तर्गत निम्नलिखित तत्व निहित है- (3) किसी वस्तु को प्राप्त करने की प्रभावपूर्ण इच्छा का होना, (2) क्रय या इच्छा को पूर्ण करने के लिए पर्याप्त साधन का होना आवश्यक है, (3) साधनों के व्यय करने की तत्परता होना चाहिए, (4) वस्तु की इच्छा का कीमत-विशेष से सम्बन्धित होना अर्थात् एक निश्चित मूल्य का होना आवश्यक है, यदि मूल्यविहीन इच्छा है तो उसे माँग नहीं कहा जायेगा, एव (5) माँग का सम्बन्ध एक निश्चित या विशेष समय के साथ होना आवश्यक है।

8. पूर्ति को प्रभावित करने वाल तत्व:- (3) वस्तु की कीमत, (2) उपादानों की पूर्ति, (3) प्राकृतिक तत्व, (4) सरकारी नीति, (5) तकनीकी ज्ञान, (6) समझौता, एव (7) युद्ध तथा राजनीतिक उथुल-पुथल।
9. श्रम के मुख्य रुप से तीन प्रकार बताए जाते हैं:- (3) उत्पादक तथा अनुत्पादक श्रम, (2) कुशल तथा अकुशल श्रम तथा (3) शारीरिक तथा मानसिक श्रम।

3.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बंसल, एस॰ एन॰ और अग्रवाल, अनुपम (3993). उच्च आर्थिक सिद्धान्त, आगरा : साहित्य भवन.
2. आहूजा, एच॰ एल॰ (3994). उच्च आर्थिक सिद्धान्त, नई दिल्ली : एस॰ चन्द एण्ड कम्पनी.
3. सिन्हा, वी॰ सी॰ (3995). अर्थशास्त्र एवं राजस्व, इलाहाबाद : प्रयाग पुस्तक भवन.
4. सिंह, एस॰ पी॰ (2005). अर्थशास्त्र के सिद्धान्त, नई दिल्ली : एस॰ चन्द एण्ड कम्पनी.

3.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. आर्थिक परिभाषाओं की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए। आप के विचार में कौन सी परिभाषा श्रेष्ठ है और क्यों ?
2. "अर्थशास्त्र विज्ञान और कला दोनों है" क्या आप इस बात से सहमत हैं ?
3. अर्थशास्त्र के क्षेत्र की पूर्ण विवेचना कीजिए।
4. "दुर्लभता एवं चयन" की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।
5. माँग के नियम की व्याख्या करते हुए इसके अपवाद को स्पष्ट कीजिए।
6. पूर्ति के नियम की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।
7. किसी भी विषय के शिक्षण से पूर्व लक्ष्यों और उद्देश्यों का निर्धारण क्यों आवश्यक है? अर्थशास्त्र शिक्षण के लक्ष्य और उद्देश्यों की विस्तृत विवेचना करें।

इकाई 4- अर्थशास्त्र में कौशलों का विकास

Developing Skills in Economics

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 अर्थशास्त्र शिक्षण में कौशलों का विकास
4.4 अर्थशास्त्र शिक्षण उपागम
4.5 अर्थशास्त्र शिक्षण में रणनीतियाँ
4.6 अर्थशास्त्र शिक्षण में संसाधन
4.7 सारांश
4.8 शब्दावली
4.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.11 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

अर्थशास्त्र शिक्षण को प्रभावशाली एवं अधिगम जन्य बनाने हेतु उसमें प्रयुक्त होने वाली विधियों, प्रविधियों, कौशलों, उपागमों, रणनीतियों, संसाधनों इत्यादि पर निर्भर करती है। अर्थशास्त्र के शिक्षक को यह जानना अत्यंत आवश्यक है कि इस विषय के अध्यापन हेतु विभिन्न शिक्षण कौशलों, उपागमों, रणनीतियों और संसाधनों का प्रयोग किस प्रकार कक्षा में किया जाना चाहिए। इन्हीं के माध्यम से विद्यार्थियों में आसानी से विषयगत आवश्यक कौशल, गुण व चरित्र विकसित किए जाते हैं, जिससे विषय वस्तु को न केवल याद कर सकें बल्कि समझ विकसित कर उसका अनुप्रयोग जीवन के नवीन परिस्थितियों में कर सकें। अर्थशास्त्र के विभिन्न सिद्धांतों, समस्याओं, घटनाओं और प्रयोगों का क्रियान्वयन, संपादन, अवलोकन और उनका अभिलेखन और प्रस्तुतीकरण करना एक शिक्षक को आना चाहिए। अर्थशास्त्र की प्रकृति के अनुकूल विद्यार्थियों में अवलोकन, तथ्य अभिलेखन एवं निर्वचन कौशल विकसित होना आवश्यक है। अत: अर्थशास्त्र शिक्षक इन्हीं के आलोक में निश्चित समय अवधि में विद्यार्थियों के अंदर अपेक्षित ज्ञान और कौशल विकसित करने के लिए उचित शिक्षण विधियों, प्रविधियों, कौशलों, उपागमों, रणनीतियों का चुनाव करता है। अर्थशास्त्र में आगमनात्मक, निगमनात्मक, अन्तर-अनुशासनत्मक, रचनात्मक तथा सहयोगापूर्ण, प्रोजेक्ट, समस्या समाधान, परिचर्चा, वर्णन इत्यादि

महत्वपूर्ण शिक्षण उपागम व रणनीतियां मानी जाती हैं। शिक्षक विद्यार्थियों की ज्ञानेंद्रियों को अधिकाधिक सक्रिय करके ही शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावशाली एवं सार्थक बना सकता है तथा अधिगम प्रक्रिया को सरल, रुचिकर, जीवंत एवं प्रभावशाली के लिए श्रव्य- दृश्य शिक्षण सहायक संसाधनों का प्रयोग करता है। अर्थशास्त्र शिक्षण प्रक्रिया के विषय वस्तु के अनुरूप एवं उचित समय पर प्रयोग में लाए गए विभिन्न शैक्षिक संसाधन शिक्षक को उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होते हैं; अपनी कक्षा में विभिन्न संसाधनों का प्रयोग एक शिक्षक किस प्रकार कर सकता है, यह उसे ज्ञात होना चाहिए। इस इकाई के अंतर्गत आप अर्थशास्त्र से संबंधित विभिन्न कौशलों, उपागमो, रणनीतियों एवं संसाधनों का अध्ययन करेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के अध्ययन के उपरांत विद्यार्थी

1. अर्थशास्त्र से सम्बंधित विभिन्न कौशलों का विकास किस प्रकार किया जा सकता है ? स्पष्ट कर सकेंगे।
2. अर्थशास्त्र शिक्षण में प्रयोग होने वाले विभिन्न उपागमों यथा आगमनात्मक, निगमनात्मक, अन्तर-अनुशासनात्मक, रचनात्मक इत्यादि की अवधारणा, गुण, तथा सीमाओं का वर्णन और प्रयोग कर सकेंगे।
3. विभिन्न रणनीतियों यथा सहयोगी, प्रायोजना (प्रोजेक्ट), समस्या समाधान, विवरणात्मक इत्यादि का अर्थ समझ सकेंगे एवं उनका प्रयोग अपनी कक्षा में अर्थशास्त्र शिक्षण के दौरान कर सकेंगे।
4. अर्थशास्त्र के विभिन्न आर्थिक व शैक्षिक संसाधनों की व्याख्या कर सकेंगे तथा उनका प्रयोग अपनी कक्षा में कर सकेंगे।

4.3 अर्थशास्त्र शिक्षण में कौशलों का विकास

मानव ज्ञान की अनेक शाखाएं हैं। अर्थशास्त्र उनमें से ज्ञान की एक अत्यंत महत्वपूर्ण तथा उपयोगी शाखा है। मनुष्य की आवश्यकताएं अनंत हैं, मनुष्य की समस्त क्रियाएं उसकी आवश्कताओं से पैदा होती हैं। उसकी कुछ आवश्यकताएं ऐसी हैं, जिनकी संतुष्टि के लिए उसे आर्थिक प्रयत्नों की शरण लेनी पड़ती है। आर्थिक कौशल हमें आर्थिक दृष्टि से सोचने और समझने के लिए आवश्यक तकनीकी और उपकरण प्रदान करते हैं। शिक्षण कौशल अर्थशास्त्र के विस्तृत और विशिष्ट दृष्टिकोण धन व संसाधनों के भौतिक और और मानवीय प्रतिरूपों और प्रक्रियाओं को समझने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अर्थशास्त्र का जन्म मानव की जिज्ञासु प्रवृति तथा उसके प्रेक्षण कर सकने की क्षमता से हुआ है, अर्थशास्त्र मानव की सामाजिक जीवन के वस्तु या घटना का निरीक्षण करता रहता है। मनुष्य ने अपने आस-पास के क्षेत्र, वहाँ के लोगों, प्राकृतिक घटनाओं तथा सामाजिक वातावरण के साथ-साथ जीवन की आर्थिक घटनाओं और राष्ट्रीय व वैश्विक क्रियाकलापों का अवलोकन कर उसकी विस्तृत व्याख्या व प्रयोग करता है तथा

विभिन्न कौशलों के माध्यम से अपना बनाता है, धीरे-धीरे इन्हीं कौशलों के सहयोग व माध्यम से अर्थशास्त्र का उदभव हुआ। समय तथा सभ्यता के विकास के साथ अर्थशास्त्र में अनेक रूपांतरण तथा परिवर्तन हुए हैं। सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में अर्थशास्त्र को एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। हमारे दैनिक जीवन में हम अनेक आर्थिक अवधारणाओं जैसे वस्तुएं, बाजार, मांग, आपूर्ति, कीमत, मुद्रास्फीति, बैंकिंग, कर, उधार, ब्याज, आय का वितरण, बजट आदि से संबंधित अनेक आर्थिक निर्णय लेते हैं तथा साथ ही देश व विदेश से संबंधित आर्थिक सूचनाओं की प्राप्ति तथा उन पर नजर रखते हैं जो हमारे जीवन, समाज व राष्ट्र को प्रभावित करते हैं।

कौशल के उपयोग से विद्यार्थी किसी घटना के कारणों और परिणामों की जाँच और व्याख्या कर सकते हैं और आर्थिक दृष्टिकोण के साथ आगे के परिणामों पर चर्चा कर सकते हैं। आगे यदि अगर कोई मिलती जुलती स्थिति उनके समक्ष आती है तब वे पूर्व अनुभवों से संबंधों को स्थापित करते हुए उससे प्राप्त परिणामों के आधार पर नवीन स्थिति के विषय में किसी निष्कर्ष पर पंहुच सकते हैं और इसके आधार पर वे अपने व्यवहार का परिमार्जन करते हुए जान सकते हैं कि इन नवीन परिस्थितियों में उनका क्या व्यवहार होना चाहिए ? अर्थशास्त्र में सीखे गए ये कौशल मात्र कक्षाओं तक ही नहीं बल्कि दैनिक जीवन में भी अत्यन्त लाभकारी सिद्ध होते हैं। आर्थिक ज्ञान को प्राप्त, व्यवस्थित और फिर उसके उपयोग को हम विभिन्न परिस्थितियों में कर पाते हैं, अर्थशास्त्र के सैद्धांतिक, आर्थिक पर्यावरणीय वातावरण और आर्थिक-सामजिक मुद्दों के ज्ञान का प्रयोग दैनिक जीवन के निर्णायक और सामुदायिक गतिविधियों में भी किया जाता है। कौशल वह है जो अधिगम को सरल बनाता है जिससे वह शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में अधिक तल्लीन हो जाता है। आज अर्थशास्त्र एक अत्यंत जीवन उपयोगी और विशाल विषय है जिसमें कौशलों की महत्वपूर्ण भूमिका है।

अभ्यास प्रश्न

1. अर्थशास्त्र और कौशल विकास के सम्बन्धों को स्पष्ट कीजिए।

4.4 अर्थशास्त्र शिक्षण उपागम

अर्थशास्त्र शिक्षण दौरान कक्षा में कई उपागमों का प्रयोग किया जाता है, जिससे शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को सरल व रोचक बनाया जा सके और विषय तथा प्रकरण के उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके। कुछ उपागमों का विवरण निम्नलिखित है :-

4.4.1 आगमनात्मक उपागम

आगमन विधि में अनेक विशिष्ट उदाहरणों के आधार पर सामान्यीकरण किया जाता है। इसमें बालक स्वयं तथ्यों, प्रयोगों एवं उदाहरणों की सहायता के द्वारा किसी नियम या सूत्र विशेष का ज्ञान प्राप्त करता है एवं शिक्षक शिक्षण या अध्यापन के दौरान छात्रों के समक्ष कुछ विशेष परिस्थितियाँ एवं उदाहरण प्रस्तुत करता है । इन उदाहरणों के आधार पर छात्र तार्किक ढंग विचार-विमर्श, अपने अनुभवों, मानसिक शक्तियों तथा पूर्व-ज्ञान का प्रयोग करते हुए किसी विशेष सिद्धान्त, नियम अथवा सूत्र पर पहुँचते हैं तथा छात्र पूर्णरूप से सक्रिय रहता है । छात्र स्वयं भिन्न-भिन्न स्थूल तथ्यों के आधार पर अपनी विभिन्न मानसिक शक्तियों का प्रयोग करते हुए, उदाहरणों के आधार पर किसी निष्कर्ष अथवा सामान्यीकरण पर पहुँचता है। अतः इस विधि द्वारा छात्रों की विभिन्न मानसिक शक्तियों का विकास होता ही है तथा साथ ही साथ अर्जित किया गया नवीन ज्ञान अधिक ठोस तथा स्थायी होता है। जे. एन. कीन्स के अनुसार "आगमन विधि में हम अनेक उदाहरणों के आधार पर एक सामान्य नियम की स्थापना करते हैं।"

आगमन विधि के प्रकार

(अ) परीक्षणात्मक आगमन विधि - इसके अंतर्गत अर्थशास्त्र के वास्तविक तथ्यों का अध्ययन और नियमों की सत्यता की जांच की जाती है, तथा (ब) सांख्यिकीय आगमन विधि - इसमें अर्थशास्त्र के विभिन्न अंगों से संबंधित आंकड़ों को एकत्र करके उनके अध्ययन एवं विश्लेषण के आधार पर आर्थिक नियमों एवं सिद्धांतों का प्रतिपादन किया जाता है ।

आगमन विधि के सोपान :- इस विधि में मुख्य रूप से निम्नलिखित सोपानों का प्रयोग किया जाता है :- (अ) विभिन्न उदाहरणों का प्रस्तुतीकरण करना, (ब) निरीक्षण करना, (स) नियमीकरण या सामान्यीकरण करना, तथा (द) परीक्षण एवं सत्यापन करना ।

आगमन विधि के गुण

(1) विद्यार्थी सक्रिय रहते हैं, (2) मूर्त उदाहरणों द्वारा नियम अथवा सिद्धांतों की खोज की जाती है, (3) विद्यार्थी स्वयं निरीक्षण कर निष्कर्ष निकालते हैं, इससे उनके चिंतन शक्ति का विकास होता है, (4) अर्जित ज्ञान स्थाई होता है, (5) छात्रों में आलोचनात्मक, निरीक्षण, तर्कशक्ति, आत्मविश्वास इत्यादि का विकास होता है क्योंकि उन्हें स्वयं कार्य करने की प्रेरणा मिलती है, (6) निगमन विधि द्वारा निकाले गए निष्कर्षों की सत्यता का परीक्षण आगमन विधि द्वारा किया जा सकता है, (7) छात्र स्व क्रिया द्वारा ज्ञान अर्जित करते हैं, (8) छात्रों के विश्लेषणात्मक शक्तियों का विकास होता है, (9) छात्र अपने अवलोकन, चिंतन, निर्णय इत्यादि पर विश्वास करना सीख जाते हैं, (10) यह पद्धति मनोवैज्ञानिक एवं वैज्ञानिक है क्योंकि इस विधि द्वारा अर्जित ज्ञान प्रत्यक्ष तथ्यों पर आधारित होता है (11) छोटी कक्षाओं के लिए अति उपयोगी एवं उपयुक्त विधि है, एवं (12) छात्रों में अर्थशास्त्र के प्रति उत्सुकता एवं रुचि बनी रहती है ।

आगमन विधि के दोष या सीमाएं

(1) इस विधि में गलत निष्कर्ष निकलने की भी संभावना रहती है तथा परिणाम पूर्णतया सत्य नहीं होते क्योंकि उनकी सत्यता इस बात पर निर्भर करती है कि वह परिणाम कितने विशिष्ट उदाहरणों पर आधारित है, अधिक संख्या में विशिष्ट उदाहरणों पर आधारित होने पर ही विश्वसनीयता एवं सत्यता अधिक होगी, (2) इस विधि में अधिक समय, परिश्रम एवं धन खर्च होता है क्योंकि इस विधि की गति अत्यंत धीमी होती है, (3) जब इस विधि से प्राप्त सामान्यीकरण को निगमनात्मक विधि द्वारा सत्यापित की जाने के पश्चात ही पूर्ण मानी जाती है, (4) अर्थशास्त्र के प्रत्येक पाठ के शिक्षण हेतु इसका प्रयोग नहीं किया जा सकता, (5) इससे अर्थशास्त्र के विभिन्न व्यवहारिक पक्षों की शिक्षा प्रदान नहीं की जा सकती है, (6) अनुभवी एवं योग्य अध्यापक ही इसका सफलतापूर्वक प्रयोग कर सकते हैं, (7) नियमीकरण अथवा सामान्यीकरण के लिए प्रत्यक्ष उदाहरणों का चयन एवं प्रस्तुतीकरण शिक्षक और शिक्षार्थी के लिए आसान काम नहीं है, (8) उच्च कक्षाओं में विस्तृत पाठ्यक्रम होने के कारण संपूर्ण ज्ञान निश्चित समय में प्राप्त करना संभव नहीं है, (9) इस विधि का प्रयोग करने के लिए पर्याप्त बुद्धि, सूझ-बूझ एवं परिश्रम की आवश्यकता होती है अतः सभी स्तरो के छात्रों के लिए इसके द्वारा ज्ञान प्राप्त करना आसान नहीं है।

4.4.2 निगमनात्मक उपागम

निगमन विधि आगमन विधि के विपरीत है, इस विधि में निगमन तर्क का प्रयोग किया जाता है क्योंकि अर्थशास्त्र के अनेक उप विषयों में विभिन्न संबंधों, नियमों और सूत्रों का प्रयोग होता है। इस विधि में सामान्य नियम से किसी विशेष नियम की ओर जाते हैं। इस विधि में तथ्यों का विश्लेषण स्थापित सूत्रों के उपयोग द्वारा किया जाता है। व्यावहारिक रुप में प्रत्येक नियम अथवा सूत्र को सत्यापित करना असंभव ही होता है। निगमन विधि में अभिधारणाओं, आधारभूत तत्वों तथा स्वयं सिद्धियों की सहायता ली जाती है।

इस विधि में छात्रों के सम्मुख सूत्रों, नियमों, निष्कर्षों तथा संबंधों आदि को प्रत्यक्ष रुप में प्रस्तुत किया जाता है। बताए गए नियमों, सिद्धांतों एवं सूत्रों को छात्र कंठस्थ कर लेते हैं अर्थात निगमन विधि में शिक्षक विद्यार्थियों को प्रकरण बताकर संबंधित सूत्र, नियम या सिद्धांत देता है तथा शिक्षक उदाहरणों की सहायता से नियम या सिद्धांत की व्याख्या भी करता है जिससे विद्यार्थियों को संबंधित सिद्धांत या नियम का उपयोग समझ में आ जाता है, तत्पश्चात विद्यार्थी दी गई नवीन समस्याओं को शिक्षक द्वारा समझाई गई विधि की सहायता से हल करते हैं। दूसरे शब्दों में, इस विधि से हम मानसिक विश्लेषण द्वारा सामान्य नियमों से विशिष्ट नियम निकालते हैं।

निगमन उपागम के प्रकार

निगमन विधि निम्नांकित दो प्रकार की होती हैं :- (अ) गणितीय निगमन उपागम विधि - इसमें आर्थिक समस्याओं की व्याख्या चित्रों, ग्राफों तथा गणितीय आंकड़ों द्वारा की जाती है, तथा (ब) गणितीय निगमन उपागम - इसमें तर्कों के माध्यम से आर्थिक समस्या की व्याख्या की जाती है अर्थात इस पद्धति का तर्क ही एकमात्र साधन है।

निगमन उपागम के गुण

(1) आगमन विधि की तुलना में जटिल विधि है, (2) यह आगमन विधि की पूरक विधि है क्योंकि इसके द्वारा आगमन विधि द्वारा निकाले गए निष्कर्षों की जांच की जा सकती है, (3) यह संक्षिप्त एवं कम समय में पूर्ण होने वाली विधि है, (4) अभ्यास एवं प्रकरण की पुनरावृति के लिए यह एक उपयोगी विधि है, (5) इसके उपयोग से विद्यार्थी गति एवं दक्षता से कार्य कर सकते हैं, (6) यह विधि बहुत सरल है क्योंकि सामान्य एवं स्वयं सिद्ध मान्यता के आधार पर तर्क की सहायता से विशिष्ट निष्कर्ष निकाले जाते हैं। इनमें आंकड़ों का एकत्रीकरण तथा उनका विश्लेषण जैसा कठिन कार्य नहीं किया जाता है, (7) इस विधि द्वारा निकाले गए निष्कर्ष निष्पक्ष होते हैं क्योंकि अन्वेषक इन निष्कर्षों को अपने विचारों तथा दृष्टिकोण से प्रभावित नहीं कर सकता, (8) इस विधि द्वारा निकाले गए निष्कर्ष शुद्ध, स्पष्ट तथा संक्षिप्त होते हैं क्योंकि इसमें त्रुटियों को तर्क द्वारा दूर किया जाता है अर्थशास्त्र में गणित के उपयोग द्वारा अधिक शुद्धता प्राप्त की जाती है, (9) इस विधि द्वारा निकाले गए निष्कर्ष सर्वव्यापक होते हैं, वह प्रत्येक समय तथा प्रत्येक देश में लागू किए जा सकते हैं क्योंकि वह मनुष्य की सामान्य प्रकृति तथा स्वभाव पर आधारित होते हैं, जैसे - मांग का नियम, उपयोगिता ह्रास का नियम इत्यादि, (10) इस विधि के प्रयोग से अर्थशास्त्र का कार्य अत्यंत सरल एवं सुविधाजनक हो जाता है, (11) इस विधि द्वारा ज्ञानार्जन की गति तीव्र होती है क्योंकि छात्र समस्या हल करते समय सीधे सूत्र का प्रयोग करते हैं, (12) इस विधि द्वारा छात्रों की स्मरण शक्ति विकसित होती है क्योंकि इस विधि का प्रयोग करते समय छात्रों को अनेक सूत्र याद करने पड़ते हैं, (13) यह विधि संक्षिप्त होने के साथ-साथ व्यावहारिक भी है, (14) इस विधि के प्रयोग से छात्र अभ्यास कार्य शीघ्रता तथा आसानी से कर सकते हैं, (15) इस विधि का प्रयोग करने पर शिक्षक और शिक्षार्थी दोनों को कम परिश्रम करना पड़ता है तथा कम समय में अधिक ज्ञान प्रदान किया जा सकता है, (16) अर्थशास्त्र के वृहद पाठ्यक्रम को दृष्टिगत रखते हुए जब समयाभाव हो तो उन परिस्थितियों में इस विधि का उपयोग करना चाहिए, (17) यह विधि अर्थशास्त्र जैसे सामाजिक विज्ञान के लिए बहुत ही उपयुक्त है क्योंकि मानव व्यवहार के ऊपर प्रयोग करना अत्यन्त कठिन है, (18) इस विधि के आधार पर आर्थिक घटनाओं का अनुमान लगा कर भविष्यवाणी कर सकते हैं।

निगमन उपागम की सीमाएं

(1) यह विधि वैज्ञानिक विधि नहीं है, (2) यह विधि रटने पर बल देती है। विद्यार्थी बिना समझे सूत्रों, नियमों एवं सिद्धांतों को रट लेते हैं, यह मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के विपरीत स्मृति केंद्रित विधि मानी जाती है, (3) इस विधि के द्वारा चिंतन, तर्क एवं खोज का विकास नहीं हो पाता है, छात्रों को नवीन ज्ञान अर्जित करने के अवसर नहीं मिलते हैं, (4) इस विधि में तथ्य एवं नियम विद्यार्थियों द्वारा नहीं प्राप्त किए जाते हैं; अतः यह एक अमनोवैज्ञानिक विधि है, (5) इसमें विद्यार्थी अधिक देर तक सक्रिय नहीं रह पाते हैं, (6) इस विधि द्वारा निकाले गए निष्कर्षों की यथार्थता की जांच का अभाव है, (7) इस विधि द्वारा सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों में होने वाले परिवर्तन तथा उनके प्रभाव का ज्ञान प्राप्त नहीं किया जा सकता,

(8) ए. पी. लर्नर के अनुसार, निगमन विधि आर्म-चेयर-एनालिसिस (आराम-कुर्सी-विश्लेषण / Arm-chair-analysis) के अतिरिक्त कुछ नहीं है, (9) इस विधि के आधार पर निर्मित आर्थिक नियम वास्तविकता से बहुत अधिक दूर होते हैं, (10) यह विधि छोटी कक्षाओं के लिए उपयोगी नहीं है क्योंकि छोटी कक्षाओं में छात्रों को विभिन्न सूत्रों, नियमों, सिद्धांतों इत्यादि को समझना बहुत कठिन होता है, (11) इस विधि में छात्र यंत्रवत कार्य करते हैं क्योंकि उन्हें यह पता नहीं रहता है कि वह अमुक कार्य इस प्रकार ही क्यों कर रहे हैं, (12) इस विधि द्वारा अर्जित किया गया ज्ञान अस्पष्ट एवं अस्थाई होता है क्योंकि उसे वह अपने स्वयं के प्रयासों से प्राप्त नहीं करते हैं, (13) इस विधि के प्रयोग से अध्ययन-अध्यापन प्रक्रिया अरुचिकर तथा नीरस बनी रहती है।

अर्थशास्त्र के अध्ययन हेतु विभिन्न शिक्षण पद्धतियों में से आगमन व निगमन पद्धति का प्रयोग अत्यधिक व सफलतापूर्वक किया जाता है, आगमन व निगमन पद्धतियाँ एक दूसरे की पूरक विधियाँ भी हैं। आगमन विधि का प्रमुख आधार ज्ञान की उत्पत्ति एवं विकास है जबकि निगमन विधि में ज्ञान की शाश्वत प्रस्तुति ही मुख्य आधार होती है, दोनों ही विधियां एक दूसरे की कमियों को दूर करती हैं। अर्थशास्त्र विषय संबंधी नवीन तथ्यों, नियमों, सिद्धांतों और सूत्रों का ज्ञान आगमन विधि द्वारा दिया जाना चाहिए तथा उसका उपयोग व अभ्यास निगमन विधि द्वारा किया जाना चाहिए। अतः आगमन विधि अग्रगामी है तथा निगमन विधि उसकी सहगामी।

4.4.3 अन्तर-अनुशासनात्मक उपागम

अंतर-अनुशासनात्मक उपागम विभिन्न विषयों की जानकारी ही नहीं देता बल्कि शिक्षण को सरल, सहज एवं प्रभावकारी बनता है। अंतर-अनुशासनात्मक उपागम अपनाने से यह लाभ होता है कि विद्यार्थी विषयों के मध्य के संयोजन को समझ पाते हैं और यह भी समझते हैं कि कोई भी विषय कम महत्वपूर्ण नहीं है। प्रसिद्ध शिक्षाविद जैकटाट के अनुसार ज्ञान परस्पर संबंधित है, वह एक है, विभाजन केवल सुविधा मात्र है। समस्त विषय प्राकृतिक रूप से परस्पर संबंधित है, जीवन की विविध समस्याओं के समाधान हेतु किसी एक विषय का ज्ञान उपयोगी नहीं हो सकता है और ना ही विभिन्न विषयों का ज्ञान पृथक रूप से दिए जाने पर वह उपयोगी साबित होगा। किसी एक विषय का शिक्षण करते समय अन्य विषयो का ज्ञान प्रदान किया जाना भी महत्वपूर्ण होता है। अर्थशास्त्र की प्रकृति अंतरानुशासनात्मक विषय के रूप में जानी जाती है। अपने विषय क्षेत्र, विधियों, विषय वस्तु, के आधार पर यह विज्ञान और सामाजिक विज्ञान दोनों में सम्मिलित होता है अर्थात यह वैज्ञानिक और मानवीय दोनों है । अर्थशास्त्र प्रत्यक्ष रूप में भौतिक, रासायनिक, जीव विज्ञान, सांख्यिकी, कृषि जैसे वैज्ञानिक विषय से सम्बंधित है और इसके साथ ही इतिहास, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, वाणिज्य, राजनीति शास्त्र, मनोविज्ञान आदि जैसे विषयों से भी सम्बंधित है। यही कारण है कि इस विषय को पढ़ने में भी अंतर-अनुशासनात्मक उपागम को अपनाए जाने की आवश्यकता है। इससे एक विषय या एक क्षेत्र में अर्जित ज्ञान को दुसरे क्षेत्र में प्रयोग में लाना आसान हो जाता है। विभिन्न विषयों को इस प्रकार पढ़ाना कि उनसे प्राप्त ज्ञान में पारस्परिक

संबंध हो। एक विषय को पढ़ाते समय कभी कभी ऐसे संदर्भ आ जाते हैं जो दूसरे विषयों से संबंधित होते हैं हम इन संदर्भों को परस्पर सह-संबंधित कर दें।

किसी समस्या के समाधान अथवा नवीन ज्ञान के सृजन हेतु एक ही विषय पर निर्भर न रहना और उस विषय की सीमाओं से पार जाकर अन्य विषयों के संदर्भों में को भी जोड़ना ही अंतर अनुशासनात्मक उपागम मूल मंतव्य है। अंतर-अनुशासनात्मक उपागम का प्रयोग करते हुए अर्थशास्त्र के ज्ञान को अन्य विषयों के लिए स्थानांतरित करने और अन्य विषयों में अर्जित ज्ञान को अर्थशास्त्र में अपनाये जाने में सहायक सिद्ध होगा। विद्यार्थी जब एक विषय का दुसरे विषय से सम्बन्ध स्थापित करना सीख जाते हैं तो वह आगे चल कर उपयुक्त विषय का वास्तविक जीवन से भी सहसम्बन्धित कर लेते हैं जो किसी भी शिक्षा का लक्ष्य है।

अन्तर-अनुशासनत्मक उपागम के गुण

(1) यह ज्ञान की अखंडता और समृद्धता का पोषण करता है, (2) यह विषयों की अधिकता को कम करने में सहायक होता है, (3) विद्यार्थी तार्किक रुप से कार्य-कारण सम्बन्ध स्थापित करने में सफल होते होते हैं, (4) ज्ञान को विस्तृत एवं व्यापक परिप्रेक्ष्य में विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत करता है, (5) विद्यार्थी प्रत्येक विषय को बराबर का महत्व देते हैं, (6) विद्यार्थियों को अल्प समय में अधिक ज्ञानार्जन करने में सक्षम बनाता है, (7) शिक्षण प्रभावी और रोचक बनता है, (8) पाठ्यक्रम की जटिलता को सरल करके विद्यार्थियों पर उसके भार को कम करता है, (9) विद्यार्थी अर्जित ज्ञान का प्रयोग अपने दैनिक जीवन एवं जीवन से संबन्धित में करने में सफल होते हैं, (10) अधिगम का स्थानांतरण एवं अन्य परिस्थिति में अनुप्रयोग करने में विद्यार्थी दक्ष हो जाता है और अधिगम सरल हो जाता है, एवं (11) विद्यार्थियों में अध्ययन के प्रति रुचि उत्पन्न करता है।

अन्तर-अनुशासनत्मक उपागम की सीमाएं

(1) इस उपागम की सफलता शिक्षक के कौशल पर निर्भर करती है कि वह किस सफलता के साथ अंतर-अनुशासनात्मक उपागम का प्रयोग कर सकता है, (2) अंतर अनुशासनात्मक उपागम के माध्यम से शिक्षण कार्य करना शिक्षकों के लिए कठिन कार्य है, एवं (3) सभी पाठों में इसका प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

4.4.4 रचनात्मक उपागम

शिक्षण के पारंपरिक तरीके ज्ञान के वस्तुपरक वस्तुवादी दृष्टिकोण पर आधारित हैं। शिक्षक अधिकांश समय व्याख्यान विधि द्वारा अध्यापन कार्य करते हैं और कभी- कभी पाठ्यपुस्तकों में दिए गए तथ्यात्मक ज्ञान को सिद्ध करने के लिए गतिविधियां या क्रियाकलापों का आयोजन करते हैं क्योंकि शिक्षक का मानना है कि उन्हें सत्तावादी ज्ञान को क्रियाविहीन शिक्षार्थियों तक पहुंचाना है। वस्तुवादी आयाम मैं

शिक्षक उस शिक्षार्थी को ज्ञान प्रसारण करता है, जिसे ज्ञान का निष्क्रिय प्राप्त करता मान लिया जाता है। विश्वास कर लिया जाता है कि शिक्षक के पास समस्त ज्ञान है और वही 'सही' ज्ञान एवं "सही उत्तरों" का स्रोत है। वस्तुवाद का आधार यह कल्पना है कि ज्ञान एक संपूर्ण, सार्वभौमिक तथा वस्तुनिष्ठ उद्देश्य है और यह जिन लोगों के पास है वही इसे उन लोगों को दे सकते हैं जिनके पास नहीं है। जबकि इसके विपरीत सृजनात्मक आयाम इस कल्पना पर आधारित है कि ज्ञान व्यक्तिनिष्ठ होता है तथा शिक्षार्थी ज्ञान की संरचना उस सामाजिक तथा सांस्कृतिक संदर्भ में करता है, जिससे वह जुड़ा हुआ होता है तथा अपने विश्वास और सामाजिक यथार्थ के आधार पर करता है जिसमें वह क्रियात्मक होते हैं।

सृजनवाद विधि का एक लंबा इतिहास है और डीवी, मांटेसरी, गाँधी, पियाजे, वाइगोत्सकी इत्यादि जैसे विचारक मूलतः सृजनवादी ही रहे हैं लेकिन यह पूर्णतः शिक्षा में महत्वपूर्ण सुधार नहीं ला सके क्योंकि सृजनवादी विचारों का शैक्षिक व्यवहारों में स्थांतरण नहीं कर पाये। 1978 में, ड्राइवर और इसले के लेख को शिक्षण अधिगम प्रकिया सुधारने में सृजनवादी आंदोलन की शुरुआत करने वाला माना जाता है। इसके बाद पासनर (1982), ड्राइवर (1989) नोवक (1993) और अन्य ने ज्ञान की रचना को कक्षाकक्ष के क्रियाकलापों को बढ़ावा दिया और शोधकर्ताओं ने सृजनवादी कक्षा पर बहुत से प्रयोग किए इन शोध अध्ययनों के अनुभवजन्य आंकड़ों ने प्रदर्शित किया कि कक्षाकक्ष के संवाद, ज्ञान रचना में मदद करते हैं। जो आज शिक्षकों को उनके अपने शिक्षण को वैकल्पिक दृष्टि से देखने का सुगम मार्ग बताता है।

रचनात्मक उपागम की विशेषताएं :- रचनात्मक उपागम की मूलभूत विशेषताएं निम्नलिखित हैं –

- अधिगम ज्ञान ग्रहण करने की निष्क्रिय प्रक्रिया न होकर, अर्थपूर्ण समस्याओं को हल करने, अर्थ समझने व निर्माण करने की एक क्रियाशील प्रक्रिया है।
- अधिगम में पूर्व नियोजित संकल्पनाओं की पुनर्व्यवस्था अंतर्निहित है।
- प्रमाणिक एवं विश्वसनीय अधिगम कार्यों के द्वारा अर्थपूर्ण अधिगम होता है।
- सामाजिक मेलजोल व क्रियाकलापों के द्वारा अधिगम को बढ़ावा मिलता है।
- नवीन अधिगम शिक्षार्थी के पूर्व ज्ञान पर निर्भर करता है, जो कभी-कभी नवीन जानकारी की समझ में अवरोध भी उत्पन्न करता है।

पियाजे का विश्वास था कि बच्चे अनुकूलन की प्रक्रिया से अपने पूर्व ज्ञान के आधार पर ज्ञान रचना करते हैं। पियाजे के लिए ज्ञान की रचना व्यक्तिगत है, व्यक्ति द्वारा रची गई अमूर्त संकल्पनाओं को केवल अर्थ देने के लिए संस्कार और भाषा का प्रयोग होता है। वाइगोत्सकी का मानना था कि ज्ञान रचना के लिए सामाजिक मेल मिलाप महत्वपूर्ण है, और अपने आसपास के सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भ अनुसार ज्ञान की रचना करते हैं। सृजनवादी आयाम कक्षाकक्ष के संस्कार, अभिरुचि, विश्वास और व्यवहारों में परिवर्तन की मांग करता है। इस आयाम में शिक्षक की भूमिका ज्ञान प्रसारित करने वाले से बदल कर ज्ञान के "खोजी और अन्वेषक" की हो जाती है। यह सिद्धांत शिक्षण केंद्रित प्रत्यक्ष निर्देश से

छात्र केंद्रित समझ-बूझ पर आधारित शिक्षण की ओर मुख्य बदलाव को समझाता है, सृजनवादी शिक्षण में छात्र को सक्रिय शिक्षार्थी तथा शिक्षक को अधिगम प्रक्रिया का मार्गदर्शक समझा जाता है, इस विश्वास पर आधारित निर्देशन प्रणाली सुझाव देती है कि छात्रों को किस प्रकार के अधिगम को अपनाने वाले अनुभवों में भागीदारी करनी चाहिए। इन अनुभवों में सम्मिलित है- जिज्ञासा, क्रियाकलाप, खोजबीन, समस्या समाधान, शिक्षक एवं हमजोलियों से चर्चा, विभिन्न स्रोतों से जानकारी एकत्र करना और विश्लेषण करना, विभिन्न तरीकों से अपनी समझ को अभिव्यक्त करना, नए तरीकों से अपनी समझ को लागू और प्रमाणिक करना इत्यादि।

सृजनवादी कक्षाकक्ष में, छात्र प्रयोग, निर्माण, परिकल्पना, परीक्षण, निष्कर्ष निकालना तथा अपने परिणामों और खोजों की तुलना दूसरों के परिणामों और खोजों से करते हैं। सृजनवाद कक्षाकक्ष में शिक्षक कक्षा प्रबंधक और व्यवस्थापक होता है जबकि वस्तुवादी कक्षाकक्ष में शिक्षक कक्षा नियंत्रण होता है। मूल्यांकन पद्धतियां भी विषयनिष्ठ मानकीकृत परीक्षणों से प्रदर्शन आधारित परीक्षणों, संकल्पना चित्रण इत्यादि में बदल जाती है। सृजनवादी आयाम कक्षा का एक नवीन संस्कार एवं पर्यावरण

इस उपागम को प्रयोग में लाते समय निम्न सावधानियों को अपनाया जाना चाहिए :- (1) विद्यार्थी खुलकर अपने विचारों को व्यक्त कर सकें, वार्तालाप कर सकें, प्रश्नों को बिना झिझक के पूछ सकें, और अपने अनुभवों के विषय में बता सकें, अतः कक्षा का वातावरण लोकतांत्रिक होना चाहिए, (2) पूर्व ज्ञान और अनुभवों को परिमार्जन करने हेतु शिक्षक और विद्यार्थियों के मध्य अंतःक्रिया आवश्यक है, (3) विद्यार्थी अपने दैनिक जीवन की समस्याओं को हल कर सकें, अतः इन्हें वास्तविक अनुभव से सम्बंधित मुद्दे लेने चाहिए , (4) निश्चित प्रकरण के पूर्ण अधिगम हेतु छात्रों को पहले से ही मानसिक रूप से तैयार कर देना चाहिए तथा स्वयं शिक्षक को भी कक्षा में पूर्ण तैयारी के साथ आना चाहिए, (5) विद्यार्थी ज्ञान को स्वयं के द्वारा मूल्यांकित और परिकल्पनाओं की सत्यता की जाँच कर सकें इसलिए प्रकरणों से सम्बंधित पर्याप्त मात्रा में प्रमाण उपलब्ध कराना चाहिए, (6) शिक्षकों द्वारा विद्यार्थियों को प्रश्न पूछने के पश्चात् पर्याप्त समय देना चाहिए, (7) विद्यार्थियों के अवलोकन, परियोजना और प्रस्तुतीकरण में शिक्षक को सम्मिलित रहना चाहिए, तथा (8) विद्यार्थियों को सहयोगात्मक रूप से अध्ययन के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

रचनात्मक उपागम के गुण : (1) विद्यार्थी ज्ञान का सृजन स्वयं करते हैं इस कारण अर्जित ज्ञान स्थाई होता है, (2) विद्यार्थी का एक अन्वेषणकर्ता के रूप में प्रशिक्षण हो जाता है, (3) विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान पर केन्द्रित है अतः विद्यार्थी रूचि के साथ अध्ययन में भाग लेते हैं, (4) यह उपागम रटने की बजाय समझ को विकसित करने पर बल देता है, (5) विद्यार्थियों में स्वतंत्र चिंतन, निर्णय लेने की क्षमता का विकास होता है, तथा (6) अधिगमकर्ता सक्रिय होकर सीखता है।

रचनात्मक उपागम की सीमायें: (1) इस उपागम की सफलता शिक्षकों पर निर्भर करती है, (2) भारतीय विद्यालयों में सभी शिक्षक इतने समर्थ नहीं हैं कि इस उपागम का प्रयोग सफलतापूर्वक कर सकें, (3) यह

एक समय साध्य अर्थात समय अधिक खर्च होता है, तथा (4) इस उपागम की कोई विकसित कार्यविधि नहीं है जिससे शिक्षण किया जाये।

अभ्यास प्रश्न

2. आगनात्मक उपागम क्या है?
3. निगमनात्मक उपागम किसे कहते हैं?
4. आगनात्मक उपागम एवं निगमनात्मक उपागम में क्या अंतर है?
5. अन्तर-अनुशासनत्मक उपागम की सीमाएं बतायें।
6. रचनात्मक उपागम की दो विशेषताएं लिखिए।

4.5 अर्थशास्त्र शिक्षण में रणनीतियाँ

अर्थशास्त्र के जटिल सिद्धांतों व नियमों को सहज, सरल व रुचिपूर्ण ढंग से सीखाने हेतु शिक्षक अनेक रणनीतियाँ बनाता है और उनको उपयोग में लाता है। अर्थशास्त्र शिक्षण के दौरान कक्षा में अध्यापन पहले जहाँ अध्यापक केन्द्रित होती थी आज वहाँ छात्र केन्द्रित हो गयी हैं। आज के शिक्षक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह छात्रों को लगातार सीखने के प्रति प्रेरित करे जिससे वह स्वयं सीखें क्योंकि मनोविज्ञान के नियमों के अनुसार ज्ञान को विद्यार्थियों पर आरोपित नहीं किया जा सकता। विद्यार्थी अधिगम में सक्रिय रूप से प्रतिभाग करें इसके लिए शिक्षक अनेकानेक प्रयास करते रहते हैं, शिक्षक प्रत्तेक कक्षा के लिए अलग-अलग एवं एक कक्षा में भी अनेक रणनीतियों का चयन करता है। जिनमें कुछ रणनीतियाँ निम्नांकित हैं :-

4.5.1 सहयोगपूर्ण

सहयोगपूर्ण सीखने की एक ऐसी रणनीति है जिसमें विद्यार्थियों का एक समूह एक साथ मिलकर किसी समस्या के समाधान के लिए एक जुट होकर कार्य करता है। सीखने के स्वस्थ वातावरण में विद्यार्थी साझा लक्ष्य के ऊपर समूह में कार्य करते हैं, जो एक-दुसरे के सहयोग पर आधारित होता है। यह एक सहयोगात्मक पारस्परिक पद्धति है जिसमें छात्र की समूह में निर्धारित भागीदारी होती है और इनका उत्तरदायित्व एक दूसरे पर निर्भर करता है जिससे प्रोजेक्ट या समस्या या कार्य पूर्ण हो जाए। सहयोगी शिक्षण में सीखना के उन तरीकों और वातावरण पर निर्भर करता है जिसमें शिक्षार्थी एक समान कार्य में संलग्न रहते हैं और एक-दूसरे के कार्यों के लिए जवाबदेह भी रहते हैं। यह तकनीक विद्यार्थी केन्द्रित है क्योंकि इसमें विद्यार्थी स्वयं सक्रिय रह कर सीखने की ओर अग्रसर रहते हैं। यह पाया जाता है कि जब कक्षा में सहकारी या सहयोगपूर्ण तरीके का प्रयोग सीखने हेतु किया जाता है तो छात्र का विषय में और अधिक संलिप्तता बढ़ जाती है, सीखने हेतु और अधिक प्रेरित होते हैं और कम समय, श्रम और धन में सीख लेते हैं।

यह रणनीति छात्र-शिक्षक के पररम्परागत रिश्ते, शिक्षकों कि भूमिका और शिक्षण के तरीके को पुनर्परिभाषित करती है। लोकतंत्र में यह एक आवश्यक कौशल और रणनीति है के रूप में स्वीकार्य है। प्रत्तेक कार्य के दो भाग होते हैं - प्रथम भाग वह जो छात्र द्वारा स्वयं पूर्ण किया जा सकता है तथा द्वितीय भाग वह है जिसे छात्र द्वारा स्वयं पूर्ण नहीं किया जा सकता, उसे कार्य पूर्ण करने के लिए सहायता प्राप्त करनी पड़ती है। इसी को आधार बनाकर लेव वीगोत्स्की ने "निकटवर्ती विकास का क्षेत्र" (zone of proximal development) नामक नियम पर आधारित सहयोगपूर्ण सीखने की रणनीति का निर्माण किया। इन्हीं क्षेत्रों में निकटवर्ती विकास का क्षेत्र होता है जिसमें किसी और विद्यार्थी के सहयोग या निर्देश से छात्र कार्यों को पूर्ण करता है और इसमें छात्र एक दूसरे का सहयोग करते हैं। एक कक्षाओं में अनेक मस्तिष्क होते हैं, यह मस्तिष्क सीखने में सक्रिय होते हैं तथा इस आधार पर माना जाता है कि दो मस्तिष्क एक मस्तिष्क से बेहतर परिणाम देते हैं।

सहयोगपूर्ण सीखने में एक ऐसी स्थिति प्रदान की जाती है जिसमें दो या दो से अधिक लोग एक साथ में सीखते या सीखने का प्रयास करते हैं। यह आमने-सामने के बातचीत पर आधारित होता है जिसमें विद्यार्थी अपने समूह के सभी सदस्यों के साथ विभिन्न बिन्दुओं पर विचार विमर्श करता है और यह समूह के प्रत्येक सदस्य पर लागू होता है। जैसे - सहयोगपूर्ण सीखने में कुछ छात्रों को एक विषय दिया जाए कि "ग्रामीण क्षेत्र विशेष में रहने वाली महिलाओं की रोजगार वृद्धि हेतु आर्थिक, सामजिक, राजनितिक, पारिवारिक, और व्यक्तिगत समस्या का अध्ययन", उपरोक्त प्रकरण का अध्ययन हेतु समूह के प्रत्येक छात्र एक विशेष भाग की समस्या को लेता है, विस्तृत व गहराई से अध्ययन एक दूसरे की मदद से करता है, उसके पश्चात वे आपस में मिलतें हैं और उस समस्या पर समूह के अन्य सदस्यों के साथ विचार-विमर्श करते हुए समस्या के समाधान तक पहुँचते हैं। इसमें समूह के प्रत्येक छात्र अपना-अपना प्रतिभाग देते हैं।

सहयोगी शिक्षण उस मॉडल पर कार्य करती है जहाँ यह माना जाता है कि एक निश्चित जनसंख्या जो आपस में अपने अनुभवों को बाँटते हैं और सम व विषम भूमिका निभाते हैं, वहाँ ज्ञान का निर्माण किया जा सकता है और नवीन अधिगम को प्राप्त किया जाता है। सहयोगपूर्ण सीखने में सहयोगात्मक लेखन, वाद-विवाद, समूह परियोजनाओं, समूह विचार विमर्श, सामूहिक समस्या समाधान के तरीकों को शामिल किया जाता है। सहयोगपूर्ण अधिगम से विद्यार्थियों को विभिन्न प्रकार का सीखने के अवसर की ओर प्रेरित किया जाता है और उनके ज्ञान में वृद्धि की जाती है। व्यक्तिगत रूप में सीखने के विपरीत जब लोग साथ में सीखते हैं तो ऐसे में वे एक दुसरे के कौशलों का लाभ उठाते हैं, कई संसाधनों का आपस में प्रयोग करते हैं, अधिक जानकारी हेतु एक दुसरे से प्रश्न पूछते हैं, एक-दुसरे के कार्यों का मूल्यांकन करते हैं, त्रुटियों को दूर करने का सुझाव देते हैं और एक दुसरे के कार्य की निगरानी भी करते हैं। सहयोगपूर्ण शिक्षण-अधिगम रणनीति के अन्तर्गत विद्यार्थी सीखने में एक दूसरे का सहयोग करते हैं और सीखते हैं।

4.5.2 प्रायोजना (प्रोजेक्ट)

शिक्षा में प्रायोजना (प्रोजेक्ट) विचारधारा को प्रस्तुत करने का श्रेय जॉन डीवी को है, लेकिन जॉन डीवी के प्रयोजनवाद के सिद्धांत पर आधारित इसके संरचनात्मक निर्माण और विकास का श्रेय उनके शिष्य विलियम किलपैट्रिक को माना जाता है, इन्हें प्रोजेक्ट पद्धति का जन्मदाता भी कहते हैं।

प्रायोजना का अर्थ एवं परिभाषा : यह शिक्षा में नवीन शिक्षण नीति, सामाजिक प्रवृत्ति के रूप में प्रसिद्ध है; यह शिक्षण नीति विद्यार्थी के समाजीकरण की प्रक्रिया को विशेष महत्व देती है। प्रायोजना विधि किसी उद्देश्य पर आधारित होती है और इन्हीं उद्देश्य के आधार पर ही योजना का निर्माण किया जाता है। विद्यार्थियों के सम्मुख जीवन की यथार्थता से संबंधित कुछ समस्याएं प्रस्तुत की जाती हैं और उन्हें यह स्वतंत्रता प्रदान की जाती है कि वह समस्या का समाधान प्राप्त करने हेतु आंकड़ों का एकत्रीकरण और विश्लेषण करके वैज्ञानिक विधि से एक योजना/प्रायोजना का निर्माण करें जिससे संबंधित समस्या का समाधान प्राप्त किया जा सके। प्रायोजना/योजना को सुनियोजित ढंग से पूर्ण करने हेतु एक विशिष्ट कार्य प्रणाली अपनाई जाती है तथा इसका प्रयोग किसी सामाजिक समस्या के समाधान हेतु किया जाता है। प्रायोजना का चयन एवं सम्पादन विद्यार्थियों द्वारा स्वाभाविक जीवन में किया जाता है, जिसमें शैक्षिक महत्ता और क्रियाशीलता निहित रहती है। शिक्षक का कार्य मार्गदर्शक और परिस्थिति के निर्माण कर्ता के रुप में होता है। अर्थशास्त्र के शिक्षण के लिए यह पद्धति बहुत उपयोगी है, इसके द्वारा विद्यार्थियों को आर्थिक जीवन की वास्तविक परिस्थितियों तथा समस्याओं से सरलतापूर्वक अवगत कराया जाता है। विद्यार्थी परस्पर सहयोग, सूझबूझ, सहकारिता, मौलिक चिंतन, प्रेम व सहानुभूति, स्व-प्रयत्न इत्यादि द्वारा कार्य करते हैं और इनमें इन गुणों का विकास भी होता है।

विलियम किलपैट्रिक के शब्दों में, "प्रायोजना या प्रोजेक्ट एक सोद्देश्य पूर्ण क्रिया है जिसे सहृदय सामाजिक वातावरण में पूर्ण संलग्नता से किया जाए।"

बेलार्ड के शब्दों में, "प्रायोजना यथार्थ जीवन का ही एक भाग है जो पाठशाला में प्रदान किया जाता है।"

प्रायोजना के सिद्धांत

इसमें (1) उपयोगिता का सिद्धांत, (2) तैयारी का सिद्धांत, (3) क्रियाशीलता का सिद्धांत, (4) उद्देश्य निर्धारण का सिद्धांत, (5) वास्तविकता का सिद्धांत, (6) रोचकता का सिद्धांत, (7) स्वतंत्रता का सिद्धांत, (8) अनुभव आधारित प्रयोग का सिद्धांत, (9) सामाजिकता या समाजीकरण का सिद्धांत, (10) समन्वयता का सिद्धांत, (11) मितव्ययता का सिद्धांत, (12) स्वयं करके सीखने का सिद्धांत, (13) प्रयोजनशीलता का सिद्धांत इत्यादि सम्मिलित होते हैं।

प्रायोजना के प्रकार :- सामान्यता दो भागों में बांटा जाता है :- (अ) व्यक्तिगत, तथा (ब) सामूहिक प्रायोजना। विलियम किलपैट्रिक ने निम्नलिखित चार प्रकार बताए हैं :- (अ) रचनात्मक प्रायोजना, (ब) कलात्मक प्रायोजना, (स) समस्यात्मक योजना, और (द) अभ्यासात्मक प्रायोजना।

प्रायोजना के सोपान :- (1) परिस्थिति का निर्माण - शिक्षक छात्र से परस्पर वार्तालाप कर उनकी रुचि के अनुरूप परिस्थिति व समस्या का निर्माण करता है, जिसे छात्र समाधान करने हेतु तैयार हो जाते हैं; (2) प्रायोजना का चयन तथा उद्देश्य निर्धारण - एक सर्वोत्तम एवं मान्य प्रायोजना का चयन तथा उसके उद्देश्य का निर्धारण किया जाता है; (3) प्रायोजना का कार्यक्रम निर्माण - उद्देश्य सुनिश्चित होने के पश्चात छात्र अपना विस्तृत कार्यक्रम शिक्षक सम्मुख प्रस्तुत करते हैं, विचार-विमर्श पूर्ण होने के उपरांत अंत में सर्वमान्य कार्यक्रम स्वीकृत किया जाता है; (4) प्रायोजना को व्यवहारिक स्वरूप प्रदान करना - इसमें कार्यक्रम को क्रियांवित किया जाता है। छात्र अपनी रुचि और योग्यता के अनुरूप स्वयं कार्य करते हैं और शिक्षक छात्रों की गतिविधियों का अवलोकन करते हुए उपयुक्त मार्गदर्शन प्रदान करता है; (5) प्रायोजना का मूल्यांकन - छात्र पूर्व निर्धारित उद्देश्यों का सूक्ष्म एवं विस्तृत ढंग से मूल्यांकन करता है; एवं (6) प्रायोजना कार्य का लेखा - समस्त सोपानों का सूक्ष्म विवरण एवं मूल्यांकन गतिविधियों का लेखन करता है जिससे भविष्य की प्रायोजना कार्य में सहायता मिलती है।

प्रायोजना के गुण

(1) यह बाल केंद्रित है, (2) समस्या का व्यवहारिक ज्ञान प्रदान किया जाता है, (3) छात्र में उत्तरदायित्व की भावना का विकास, (4) छात्रों को अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान किए जाते हैं, (5) छात्रों को योग्यतानुसार कार्य वितरित करना, (6) छात्र में स्वयं कार्य करने की प्रवृत्ति का विकास, (7) छात्रों में लोकतांत्रिक व सामाजिक भावना का विकास, (8) छात्रों में आत्मविश्वास, आत्मनिर्भरता, आत्मबलिदान, सहयोगात्मक प्रवृत्ति, कार्य-अनुभव, विचारशीलता, सामाजिक-कुशलता, स्व-अनुशासन जैसे गुणों का विकास होता है, (9) यह पद्धति रोचक है, (10) शिक्षक मार्गदर्शक के रुप में होता है, (11) विभिन्न विषयों के साथ संबंध स्थापित करने की योग्यता का विकास, (12) विषय वस्तु के विभिन्न पहलुओं का समावेश किया जाता है, (13) वास्तविक जीवन की परिस्थितियों से संबंधित होता है, (14) छात्रों के मनोविज्ञान पर आधारित है, (15) इसमें मितव्ययी, समय-सदुपयोग, श्रमनिष्ठता, समवाय, शिक्षा मनोविज्ञान आधारित, ज्ञान का आधार क्रिया आदि जैसे गुणों का समावेश है, तथा (16) यह व्यक्तिगत भिन्नता के सिद्धांत पर आधारित है।

प्रायोजना की सीमाएं

(1) उत्साही शिक्षकों का अभाव, (2) साधनों का अभाव, (3) समस्या आधारित एवं व्यवहारिक पाठ्य-पुस्तकों का अभाव, (4) निर्धारित समय विभाग चक्र की अवहेलना, (5) अर्जित ज्ञान की पुनरावृत्ति के लिए कोई स्थान नहीं, (6) विषय-वस्तु की तारतम्यता का अभाव, (7) अधिक समय, शक्ति तथा धन का प्रयोग, (8) सभी छात्रों हेतु समान एवं संतुलित प्रायोजना का निर्माण कठिन, (9) कभी-कभी अनुशासनहीनता को भी जन्म देता है, (10) शिक्षण की क्रिया अपूर्ण तथा असंबद्ध रहती है, (11) कक्षा में संतुलित शिक्षा का अभाव, (12) हस्तकार्य पर अत्यधिक बल होने के कारण बौद्धिक पक्ष अपूर्ण रह

जाता है, (13) अधिक छात्रों के लिए अनुपयोगी, एवं (14) निर्धारित समयावधि में पाठ्यक्रम की अपूर्णता रह जाती है।

4.5.3 समस्या समाधान

मानव जीवन के प्रत्येक अवस्था में व्यक्ति पग-पग पर जीवन समस्याओं से जूझता रहता है, ऐसी परिस्थितियों से सामना करने हेतु शिक्षक विद्यार्थियों को प्रारंभ से ही समस्या को समझने, तर्क एवं निर्णय शक्ति के द्वारा समस्या को हल करने योग्य बनाना चाहता है। आर्थिक गतिविधियां सतत परिवर्तनशील होती हैं जिनके कारण समस्याएं भी नवीन रूप में उपस्थित होती रहती हैं, अर्थशास्त्र में नवीन समस्याओं का नए सिरे से एक नया हल ढूंढना पड़ता है। समस्या समाधान एक जटिल व्यवहार है जिसमें अनेक मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाएं सम्मिलित होती हैं। समस्या समाधान सार्थक ज्ञान को प्रदर्शित करता है, इसमें मौलिक चिंतन निहित होता है। शिक्षक तथा छात्र किसी महत्वपूर्ण आर्थिक समस्याओं यह समाधान हेतु प्रयत्न करते रहते हैं। छात्र के समक्ष ऐसी समस्यात्मक परिस्थितियां उत्पन्न की जाती हैं जिनमें वह स्वयं चिंतन, तर्क तथा निरीक्षण के माध्यम से समस्या का हल ढूंढ सके, छात्र स्वयं सीखने के लिए प्रेरित होते हैं।

"समस्या समाधान किसी कठिनाई या जटिलता का एक पूर्ण संतोषजनक हल प्राप्त करने के उद्देश्य से किया गया नियोजित कार्य है। इसमें मात्र तथ्यों का संग्रह करना या किसी अधिकृत विद्वान के विचारों की तर्क रहित स्वीकृति निहित नहीं है, वरन यह एक विचारशील चिंतन की प्रक्रिया है।" ---- थामस एम रिस्क

समस्या समाधान के प्रमुख सोपान - निम्नलिखित है :- (1) समस्या की पहचान, (2) समस्या का परिभाषीकरण या प्रस्तुतीकरण, (3) समस्या से संबंधित तथ्यों का एकत्रीकरण, (4) समस्या संबंधी परिकल्पनाओं का निर्धारणएवं उनकी जांच करना, (5) समस्या संबंधी तथ्यों की विवेचना तथा विश्लेषण करके निष्कर्ष निकालना, एवं (6) निष्कर्षों की सत्यता का मूल्यांकन करना।

समस्या समाधान के गुण : (1) वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास किया जाता है तथा विद्यार्थियों को पूर्वाग्रह से ग्रसित होने से बचाती है, (2) यह जीवन की वास्तविक परिस्थितियों से संबंधित होती है, (3) तथ्यों के एकत्रीकरण व्यवस्थित करण का ज्ञान प्राप्त हो जाता है, (4) इसमें अनेक विद्यार्थी सहभागी रूप से समस्या के समाधान का प्रयास करते हैं अतः यह विधि सहभागिता पर भी बल देती है, (5) यह विधि छात्र-केन्द्रित एवं रूचिकर विधि है, अतः विद्यार्थी सक्रिय रूप में अध्ययन में सहभागिता करते हैं, (6) विद्यार्थी समस्या के समाधान हेतु स्वयं प्रयास करते हैं । अतः विद्यार्थी स्वयं इसमें रूचि लेते हैं । यह विधि स्व-अध्ययन को प्रोत्साहित करती है और विद्यार्थी क्रियाशील रहते हैं, और (7) मानसिक क्रियाओं के विकास पर अधिक बल दिया जाता है ।

समस्या समाधान की सीमायें : (1) विषय का व्यापक ज्ञान प्रदान करने में असमर्थ है, (2) यह विधि समय, श्रम व धन साध्य है, (3) प्रत्येक प्रकरण का अध्यापन इस माध्यम से नहीं, (4) इसके प्रयोग हेतु

कुशल शिक्षकों की आवश्यकता होती है, (5) इस विधि में उचित शिक्षण अधिगम सामग्रियों का प्रयोग आवश्यक है इनके अभाव में यह विधि प्रयोग में नहीं आ सकती, (6) प्रयोग में बहुत समय लगता है, और (7) यह जटिल विधि है इसका प्रयोग बड़ी कक्षाओं में ही संभव है।

अर्थशास्त्र के विभिन्न समस्याओं को उनके समाधान हेतु छात्रों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। जैसे– रोजगार की समस्या, निर्धनता की समस्या, संसाधनों के उचित वितरण की समस्या, शेयर मार्केट की समस्या इत्यादि। इस विधि के माध्यम से अर्थशास्त्र विषय के समस्या केंद्रित संप्रत्यय को आसानी से समझाया जा सकता है।

4.5.4 विवरणात्मक

विवरणात्मक विधि को परिभाषित करते हुए यह कहा जा सकता है कि यह कक्षा में प्रयुक्त की जाने वाली वह रणनीति है जिसमें किसी प्राकृतिक दृश्य, घटना, स्थलाकृति, तथ्य, संसाधन इत्यादि का शब्दों के माध्यम से विद्यार्थियों को बोधगम्य तरीके से वर्णन किया जाता है। जिससे विद्यार्थी उस विशिष्ट दृश्य, घटना, स्थलाकृति, तत्व, वस्तु, संसाधन, तथ्य इत्यादि की सही व सटीक जानकारी प्राप्त कर सकें । अर्थशास्त्र के अंतर्गत किसी भी भौतिक व मानवीय संसाधनों और स्थान की विशेषता, भौगोलिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, पर्यावरणीय पहलुओं का विवरण विद्यार्थियों को दिया जाता है, इसे अर्थशास्त्र शिक्षण में पूर्व से ही प्रयुक्त किया जाता रहा है । यह एक तरह से किसी प्रकरण से जुड़े तमाम पहलूओं के विस्तृत व गहन वर्णन से जुड़ा है ।

शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में रणनीति के तहत अर्थशास्त्र में इसके विवरणात्मक रूप का प्रयोग होता है क्योंकि अर्थशास्त्र अपने मूल प्रकृति में विवरणात्मक है । इस माध्यम से बच्चों की कल्पना शक्ति का विकास होता है क्योंकि इस माध्यम से विद्यार्थी रूचि लेते हुए अपनी कल्पना के माध्यम से उन परिस्थितियों को अनुभूत करने की कोशिश करते हैं । इस रणनीति के माध्यम से विद्यार्थियों को उन क्षेत्रों की जानकारी दी जाती है जिन्हें विद्यार्थी प्रत्यक्ष या स्वयं द्वारा ना देख पायें । विवरण को गाह्य, रोचक और आकर्षक बनाने हेतु आंकड़ों, आर्थिक सर्वे, चित्रों, मानचित्रों, प्रकरण से सम्बंधित वास्ताविक वस्तुओं, रेखाचित्र, ग्राफ, प्रोजेक्टर, श्यामपट्ट, एपीस्कोप इत्यादि को शिक्षक प्रयोग में लाते हैं । इसमें शिक्षक रोचक तरीके से अर्थशास्त्र विषय से संबन्धित विवरणों को प्रस्तुत करता है और विद्यार्थी उसे ग्रहण करने का प्रयास करता है ।

सावधानियाँ :- यह रणनीति मात्र कहानी का रुप लेकर ही नहीं रह जाय इसलिए इसका प्रयोग करते समय कुछ सावधानियां बरतनी चाहिए, जो निम्न हैं :- (1) विवरण क्रमबद्ध होना चाहिए, (2) विवरण देने के दौरान प्रयुक्त किए जाने शब्दों या पदों को स्पष्ट कर देना चाहिए, (3) शिक्षक के द्वारा पर्याप्त संख्या में दृष्टान्तों का प्रयोग किया जाना चाहिए, (4) विद्यार्थियों को मिलती जुलती परिस्थिति या घटना का विवरण प्रस्तुत करने हेतु शिक्षक को प्रोत्साहित करना चाहिए, (5) विवरण प्रस्तुत करते समय विद्यार्थियों की कक्षा, आयु, मानसिक स्तर, रूचि को ध्यान में रखना आवश्यक होता है, (6) विद्यार्थी रूचि तभी ले

पाएंगे जब विवरण अधिक लम्बा नहीं होगा, तथा (7) विद्यार्थी वास्तविक स्थिति, वस्तु, घटना इत्यादि के साथ तभी जोड़ पाएंगे जब शिक्षक वर्णन के साथ-साथ विभिन्न शिक्षण-अधिगम सामग्रियों का प्रयोग करेगा।

गुण :- (1) जो विषय वस्तु विद्यार्थी की पंहुच में नहीं हैं उनकी जानकारी दी जा सकती है, (2) यह विद्यार्थियों में कल्पनाशीलता को बढ़ावा देती है, तथा (3) किसी कक्षा के विद्यार्थियों के मानसिक स्तर के सम्बन्ध में शिक्षक को जानकारी हो तो यह रणनीति प्रत्येक कक्षा स्तर पर प्रयोग में लायी जा सकती है।

सीमायें:- (1) विषय से भटकाव की संभावना इस रणनीति में बनी रहती है, (2) विद्यार्थी रूचि नहीं लेते हैं जब विवरण लम्बा व नीरस हो जाता है और, तथा (3) सभी शिक्षक कुशलता से इस रणनीति का प्रयोग नहीं कर पाते हैं।

अभ्यास प्रश्न

10. सहयोगात्मक अधिगम रणनीति किसे कहते हैं ?
11. प्रायोजना विधि किसने निर्मित की थी ?
12. विवरणात्मक रणनीति की दो सीमायें बताइये।

4.6 अर्थशास्त्र शिक्षण में संसाधन

अर्थशास्त्र विषय के ज्ञान के लिए शिक्षण की विस्तृता, गूढ़ता, जटिलता को तथ्यपरक, सरल, सुगम, रुचिकर व मनोवैज्ञानिक लिए विभिन्न संसाधनों का जानकारी तथा ज्ञान होना आवश्यक है। किसी भी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि विद्यार्थियों की अधिक से अधिक ज्ञानेंद्रियों को इस प्रक्रिया में संलग्न किया जाए। अर्थशास्त्र अध्यापन में इन संसाधनों का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। इनकी सहायता से अर्थशास्त्र का शिक्षण सरल, वास्तविक, रोचक और सजीव बनता है। शिक्षक अर्थशास्त्र विषय के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु अपने प्रकरण से संबंधित संसाधनों का उपयोग शिक्षण के दौरान करता है, यह संसाधन शिक्षण प्रक्रिया को अधिक रोचक एवं सुबोध बनाने में सहायक होते हैं। विभिन्न संसाधनों के प्रयोग द्वारा कठिन से कठिन प्रकरण का स्पष्टीकरण आसानी से किया जा सकता है। इसके द्वारा छात्रों को प्रत्यक्ष अनुभव प्रदान किए जा सकते हैं, वास्तविक वस्तुओं एवं उनकी प्रतिकृति के माध्यम से व्यवहारिक एवं जीवंत अनुभव प्रदान किया जाना भी विद्यार्थियों के लिए लाभदायक साबित होता है। अर्थशास्त्र के तथ्यों को पढ़ाने के लिए इन संसाधनों का प्रयोग अनिवार्य है क्योंकि तभी शिक्षण सामग्री का स्पष्टीकरण और प्रत्यक्षीकरण कराया जा सकता है। अर्थशास्त्र शिक्षण में प्रयुक्त किए जाने वाले कुछ आवश्यक संसाधनों का वर्णन निम्न है :-

i. पाठ्यपुस्तक - अर्थशास्त्र के महत्वपूर्ण सिद्धांतों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए विभिन्न अर्थशास्त्रियों द्वारा लिखी गई प्रामाणिक व बोधगम पुस्तकों का होना अत्यन्त आवश्यक है। पाठ्य पुस्तकों के माध्यम से विषय वस्तु को सरल, क्रमबद्ध एवं नियोजित तरीके से विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। पुस्तकें भी एक महत्वपूर्ण संसाधन है जिनके द्वारा शिक्षण प्रक्रिया को तथ्यपरक एवं सूचनात्मक बनाया जाता है। पाठ्य-पुस्तक मानव की एक महत्वपूर्ण रचना है। मनुष्य अपने अनुभवों, विचारों एवं अनुभूतियों का पुस्तक के रूप में संचय करता है। पाठ्य-पुस्तक ज्ञान संचय का साधन है जिसका लाभ नई पीढ़ी को होता है। पुस्तकों के माध्यम से संचित ज्ञान को शिक्षक अपने छात्रों को प्रदान करता है। मानवीय ज्ञान संचय एवं संचार का साधन पुस्तक है। प्रोफ़ेसर कृष्ण कुमार कहते हैं, "भारतीय शिक्षण व्यवस्था में पाठ्यपुस्तक की एक अहम भूमिका है। **पाठ्यपुस्तक ही वो धुरी है** जिसके इर्द-गिर्द कक्षा में होने वाला शिक्षण घूमता है, वह आधार जिस पर परीक्षा ली जाती है। व एक ऐसा जरिया जिससे राज्य कक्षा में होने वाली शिक्षण प्रक्रिया पर नियंत्रण रखता है, पाठ्यपुस्तक ही तो है।"

ii. समाचार-पत्र - समाचार पत्र संचार के साधनों में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं । समाचार पत्र या अख़बार, समाचारों पर आधारित एक प्रकाशन है, जिसमें मुख्यत: सामयिक घटनायें, राजनीति, खेल-कूद, व्यक्तित्व, विज्ञापन, आर्थिक क्रियाकलाप इत्यादि जानकारियां सस्ते कागज पर छपी होती हैं। समाचारपत्र प्रायः दैनिक होते हैं लेकिन कुछ समाचार पत्र साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक एवं छमाही भी होतें हैं। दैनिक समाचार पत्रों का उपयोग अर्थशास्त्र शिक्षण में आसानी से किया जा सकता है विभिन्न देशों तथा राज्यों की महत्वपूर्ण आर्थिक खबरें कक्षा शिक्षण में शामिल करने के लिए दैनिक समाचार पत्रों को संसाधन के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। अर्थशास्त्र शिक्षण के अंतर्गत कुछ महत्वपूर्ण समाचार-पत्र जैसे – बिज़नस स्टैंडर्ड, द इकनॉमिक टाइम्स, फाइनैन्सियल क्रॉनिकल, फाइनैन्सियल एक्सप्रेस, द हिन्दू बिज़नस लाइन इत्यादि ऐसी हैं जो आर्थिक जानकारियों पर आधारित है । इन समाचार-पत्र का उपयोग विद्यार्थियों में आर्थिक जागरूकता उत्पन्न करने के लिए किया जाता है। समाचार-पत्र भी हमारा ज्ञानवर्धन करने का एक सशक्त माध्यम है।

iii. टेलिविजन- टेलीविजन विज्ञान का एक अदभुत आविष्कार एवं शानदार सृजनात्मक उपलब्धि है। इसमें समाचारों, रेडियो और सिनेमा तीनों की उपयोगिताओं का समाहार है। आज के युग में टेलीविजन की उपयोगिता और उसकी प्रभावोत्पादकता सर्वविदित है। टेलीविजन मनोरंजन का उत्तम साधन है तथा ज्ञान-विज्ञान के प्रचार-प्रसार में इसकी भूमिका सराहनीय है। विज्ञान की यह अनूठी देन दूरस्थ, दुर्गम स्थानों के और समाज की मुख्य धारा से पृथक पड़े लोगों के प्रबोधन एवं उन्नयन का शक्तिशाली साधन है। टेलीविजन विज्ञापन का सबसे सशक्त साधन है । इसकी वाणिज्यिक एवं व्यावसायिक उपयोगिता सिद्ध हो चुकी है। छात्र एन.सी.इ.आर.टी. के शैक्षिक कार्यक्रमों को घर बैठे देखकर पाठ्य-क्रमों की समझ बढ़ाने लगे। एक ओर इसके माध्यम से देश-विदेश के आर्थिक समाचार व समसामयिक आर्थिक क्रिया-कलापों पर परिचर्चा का लाभ

मिलता है, तो दूसरी ओर इसकी सहायता से शिक्षण का महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न हो रहा है। टेलीविजन छात्रों / दर्शकों के ज्ञान क्षितिज को व्यापक करके उन्हें अधिकाधिक प्रबुद्ध बनाने का सराहनीय कार्य कर रहा है। संसार के किसी भी कोने में घटित महत्वपूर्ण आर्थिक घटना में ससार के सभी प्रबुद्ध छात्र व नागरिक अधिकाधिक रूचि लेने लगे हैं।

अर्थशास्त्र की कुछ विषय-वस्तु ऐसी है जिनको टेलीविजन के माध्यम से प्रभावशाली तरीके से समझाया जा सकता है। जैसे - दूरदर्शन पर प्रसारित होने वाले कई महत्वपूर्ण कार्यक्रमों को विद्यार्थियों को दिखाया जाना लाभदायक साबित होगा, बजट या अन्य आर्थिक क्रियाकलापों से संबन्धित लोकसभा की कार्यवाही का सजीव प्रसारण भी अर्थशास्त्र के विद्यार्थियों को वास्तविक एवं व्यवहारिक ज्ञान प्रदान कर सकता है। राष्ट्रीय खबरों से संबंधित कुछ उच्चस्तरीय चैनलों की परिचर्चाओं के माध्यम से भी विद्यार्थियों को आर्थिक जगत की व्यावहारिक जानकारी प्रदान की जा सकती है। टेलीविजन एक ऐसा महत्वपूर्ण संसाधन है जो विद्यार्थियों की श्रव्य एवं दृश्य दोनों प्रकार की ज्ञानेंद्रियों को अधिगम प्रक्रिया में सक्रिय बनाता है। आर्थिक समाचार और घटनाचक्र सम्बन्धी कार्यक्रम अर्थशास्त्र के विद्यार्थियों के लिए विशेष लाभदायक हैं और उनमें कल्पना-शक्ति का भी विकास करते हैं। उपयोगी और सृजनात्मक आर्थिक क्रिया-कलापों से सम्बन्धित कार्यक्रम अवश्य दिखाए जाएं।

iv. रेडियो : इटली के मार्कोनी और भारत के जगदीशचन्द्र बसु, दोनों ने ही ध्वनि तरंगों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने का प्रयास किया। मार्कोनी को 1901 में सफलता मिली जब उन्होंने एक समाचार इंग्लैण्ड से न्यूजीलैण्ड भेजा। **रेडियो कम्युनिकेशन** संचार का आसान और विश्वसनीय साधन है। सुविधा के अनुसार इसे वाकी टॉकी की तरह भी इस्तेमाल किया जा सकता है जहां संचार का कोई अन्य माध्यम उपलब्ध ना हो, रेडियो संचार प्रणाली कम खर्चीली और आसान कीमत पर उपलब्ध है और हर पर्यावरण की स्थिति के लिए उपयोगी है। रेडियो शिक्षा एवं मनोरंजन का महत्वपूर्ण कारक है, रेडियो कक्षा शिक्षण का सहयोगी साबित हो सकता है। रेडियो पर आने वाले अनेक कार्यक्रम विद्यार्थियों की रूचि अनुकूल हो तो उन्हें आर्थिक शिक्षा से संबन्धित विषयों को रेडियो द्वारा बड़े रोचक ढंग से पढ़ाया जा सकता है। रेडियो के द्वारा विद्यार्थियों का अर्थशास्त्र से संबंधी सामान्य ज्ञान बेहतर किया जा सकता है। स्थानीय रेडियो पर केवल प्रान्त विशेष के कार्यक्रम, अखिल भारतीय रेडियो पर पूरे भारत के कार्यक्रम और विदेशी रेडियो से विदेशों के कार्यक्रम सुनने को मिलते हैं। घर बैठे देश ओर विदेश के आर्थिक क्रियाकलापों से संबन्धित ताजा समाचार मालूम हो जाते हैं। सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक परिस्थितियों की जानकारी, पर्वों पर विशेष कार्यक्रम, बच्चों के लिए शिक्षाप्रद कहानियाँ आदि अनेक कार्यक्रम छात्रों के लिए प्रसारित होते रहते हैं।रेडियो क्षण भर में विश्व में घटित महत्वपूर्ण आर्थिक सूचनाएं हम तक तुरन्त पहुँचा देता है।

v. प्रलेख या दस्तावेज़ : दस्तावेज़ या प्रलेख या डॉक्यूमेंट ऐसी वस्तु को कहते हैं जिसमें काग़ज़, कम्प्यूटर फ़ाइल या किसी अन्य माध्यम पर किसी मानव या मानवों द्वारा बनाए गए चिह्नों,

शब्दों, विचारों, चित्रों या अन्य अर्थपूर्ण जानकारी को दर्ज किया गया हो। कानूनी व्यवस्था में किसी समझौते, सम्पति-अधिकार, घोषणा या अन्य महत्वपूर्ण बात का प्रमाण देने के लिए दस्तावेज़ों का विशेष प्रयोग होता है। अर्थशास्त्र की शिक्षा व शिक्षण में इनका उपयोग सन्दर्भ और प्रमाण के लिए खूब होता है। उदाहरणार्थ निम्नलिखित हैं :-

vi. आर्थिक सर्वेक्षण : भारत का पहला आर्थिक सर्वेक्षण 1950–51 में प्रस्तुत किया गया। आर्थिक सर्वेक्षण में भारत की अर्थव्यवस्था के आंकड़ों का सबसे अधिक आधिकारिक और अद्यतन स्रोत है। आर्थिक सर्वेक्षण वित्त मंत्रालय का प्रमुख वार्षिक दस्तावेज है। यह पिछले वर्षों में देश के अर्थव्यवस्था और समग्र आर्थिक परिदृश्य के विभिन्न क्षेत्रों का विस्तृत विवरण देता है और आगे के वर्ष के लिए एक रूपरेखा प्रदान करता है। यह तेजी से अर्थव्यवस्था पर विश्लेषण और शोध के लिए एक मंच बन गया है, और इसलिए यह नीतिगत विचारों का भी एक स्रोत है।
आर्थिक सर्वेक्षण आर्थिक मामलों के आर्थिक विभाग द्वारा वित्त मंत्रालय में चीफ आर्थिक सलाहकार के समग्र मार्गदर्शन के तहत तैयार किया जाता है, वित्त मंत्रालय में वरिष्ठ अधिकारियों से प्राप्त जानकारी प्राप्त करने के बाद, आर्थिक सर्वेक्षण के अंतिम संस्करण की जांच वित्त सचिव द्वारा की जाती है और अंत में केंद्रीय वित्त मंत्री द्वारा अनुमोदित किया जाता है। यह बजट सत्र के दौरान संसद में प्रति वर्ष प्रस्तुत किया जाता है। आर्थिक सर्वेक्षण में वर्ष के दौरान अर्थव्यवस्था के समग्र प्रदर्शन का आकलन और देश में वित्तीय विकास के पृष्ठभूमि ज्ञान के साथ-साथ प्रदान करता है। आर्थिक सर्वेक्षण एक महत्वपूर्ण सरकारी दस्तावेज है और मुख्य आर्थिक सलाहकार के लिए एक तटस्थ, आर्थिक उद्देश्य विश्लेषण प्रदान करने का एक अवसर भी है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में नागरिकों की आर्थिक जागरूकता, भागीदारी नीतियों और आर्थिक निर्णय लेने के लिए महत्वपूर्ण है। यह दस्तावेज़ वित्त मंत्रालय के वेबसाइट पर पीडीएफ फॉर्म में उपलब्ध है। इन वेबसाइटों से इसे मुफ्त में डाउनलोड किया जा सकता है।

vii. पंच वर्षीय योजना : स्वतंत्रता के बाद सन 1947 में पंडित जवाहर लाल नेहरु की अध्यक्षता में नियोजन समिति गठित हुई। बाद में इसी समिति की सिफारिश पर 15 मार्च 1950 ई॰ में योजना आयोग का गठन एक गैर सांविधिक और परामर्शदात्री निकाय के रूप में किया गया, इसके पदेन अध्यक्ष प्रधानमंत्री होते हैं। भारत की पहली पंचवर्षीय योजना 1 अप्रैल 1951 से प्रारंभ हुई और भारत में अब तक 12 पंचवर्षीय योजनायें लागू की जा चुकी हैं और 12 वीं पंचवर्षीय योजना अभी चल रही थी जो कि मार्च, 2017 में समाप्त हो गयी। भारत की अर्थव्यवस्था का एक बड़ा हिस्सा, भारत के योजना आयोग द्वारा विकसित, कार्यान्वित और इसकी देख रेख मे चलने वाली पंचवर्षीय योजनाओं पर आधारित है। प्रधानमंत्री के योजना आयोग का पदेन अध्यक्ष पद के साथ, आयोग का एक मनोनीत उपाध्यक्ष भी होता है जिसका ओहदा, एक कैबिनेट मंत्री के बराबर होता है। पंचवर्षीय योजना का अर्थशास्त्र शिक्षण में महत्त्वपूर्ण स्थान है।

viii. शोध पत्र : शोधपत्र शैक्षणिक प्रकाशन की एक विधि है। इसमें किसी शोध-पत्रिका (जर्नल) में लेख प्रकाशित किया जाता है या किसी संगोष्ठी में किसी विषय पर एक लेपढ़ा जाता है। प्राय:

शोधपत्रों का प्रकाशन कुछ विशेषज्ञों द्वारा समीक्षा करने/जाँचने के बाद ही सम्भव हो पाता है। अर्थशास्त्र के प्रत्तेक उपविषय में अनेक शोध-पत्रिकाओं का प्रकाशन होता है। शोध पत्र में किसी भी प्रकरण का सूक्ष्म, तथ्यपरक, विभिन्न कोणों से वैज्ञानिक अध्ययन कर प्रकाशित किया जाता है। अर्थशास्त्र शिक्षण में इसे सन्दर्भ के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

ix. समाचार पत्रिका : समाचार पत्रिका सामान्यतः एक नियतकाल के बाद प्रकाशित होने वाली पुस्तकें होती हैं। इनमें विविध प्रकार की सामग्री रहती है। समाचार पत्र पत्रिकाएं भी हमारा ज्ञानवर्धन करने का एक सशक्त माध्यम है। अर्थशास्त्र शिक्षण के अंतर्गत कुछ महत्वपूर्ण पत्रिकाएं जैसे द एकोनोमिस्ट, बिजनेस टाइम्स, इक्नोमिक्स एंड पॉलिटिकल वीकली,ब्रिटिश बिजनेस मैगजीन इत्यादि ऐसी हैं जो आर्थिक विचारधारा पर आधारित है इन पत्रिकाओं का उपयोग विद्यार्थियों में आर्थिक जागरूकता उत्पन्न करने के लिए किया जा सकता है। समाचार पत्रिकाओं का उपयोग अर्थशास्त्र शिक्षण में आसानी से किया जा सकता है। विभिन्न देशों राज्यों की महत्वपूर्ण आर्थिक खबरें का भी कक्षा शिक्षण में शामिल करने के लिए समाचार पत्रिकाओं को संसाधन के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न

13. अर्थशास्त्र शिक्षण में आर्थिक जानकारियां प्रदान करने वाले कुछ समाचार-पत्रों का नाम बताइए।
14. रेडियो अर्थशास्त्र शिक्षण में एक सहायक संसाधन है, इसके पक्ष में तर्क दीजिए।
15. टेलीविजन के माध्यम से अर्थशास्त्र के किस प्रकरण को पढ़ाया जा सकता है?

4.7 सारांश

अर्थशास्त्र के प्रभावी शिक्षण हेतु एक अध्यापक को सभी प्रकार के कौशलों, रणनीतियों, विधियों, तकनीकों का ज्ञान होना चाहिए। अर्थशास्त्र शिक्षण में उपयोग में लाए जाने वाले विभिन्न उपागमों यथा आगमनात्मक, निगमनात्मक, अंतर-अनुशासनात्मक तथा रचनात्मक उपागम की चर्चा के माध्यम से हमने यह जानने का प्रयास किया कि किस प्रकार अर्थशास्त्र की विषय वस्तु को सरल, रुचिकर एवं उनके स्तर के अनुकूल विषयों को सह- संबंधित करते हुए रखा जाए ताकि विद्यार्थी स्वयं अपने अनुभव के आधार पर ज्ञान का सृजन कर लें एवं विशिष्ट उदाहरणों व परिस्थितियों में छिपे सामान्यकरण को पहचान कर निष्कर्ष निकाल सके और इस पूरी प्रक्रिया के दौरान वह सक्रिय एवं रचनाशील रहे। अर्थशास्त्र की प्रमुख शिक्षण विधियों व रणनीतियों का प्रयोग कैसे किया जाता है? उनके गुण एवं दोष क्या है? मुख्य रूप से आपने सहयोगपूर्ण, योजना, समस्या समाधान, विवरणात्मक रणनीतियों के संप्रत्यय को समझा। इकाई के अंत में अर्थशास्त्र शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को संसाधनों के प्रयोग द्वारा किस प्रकार

प्रभावशाली बनाया जा सकता है यह अध्ययन किया। आपने यह समझा कि वास्तविक वस्तुओं, श्रव्य और दृश्य वस्तुओं जैसे मानचित्र, रेडियो, टेलीविज़न, समाचार-पत्र, आर्थिक सर्वे, आर्थिक पत्र-पत्रिकाएँ, पाठ्यपुस्तक, प्रलेख या दस्तावेज़, पंच वर्षीय योजना, शोध-पत्र, समाचार-पत्रिका के माध्यम से अधिगम को तथ्यपरक, सरल, रुचिकर एवं मनोवैज्ञानिक किस प्रकार बनाया जा सकता है। एक शिक्षक के पास अर्थशास्त्र विषय ज्ञान होने के उपरांत भी विद्यार्थियों को उस ज्ञान से लाभान्वित नहीं कर सकता है जब तक उसे इसकी जानकारी न हो कि वह कैसे और किन संसाधनों के प्रयोग से वह अपने शैक्षिक लक्ष्यों को और भी सुगमता से प्राप्त कर सकता है।

4.8 शब्दावली

1. **आगमनात्मक उपागम :** आगमनात्मक उपागम में विद्यार्थी "विशिष्ट से सामान्य" की ओर अग्रसर होते हैं। आगमनात्मक में उदाहरण पहले बताए जाते हैं और कई उदाहरणों के आधार पर विद्यार्थी कुछ प्रश्नों के माध्यम से स्वयं निष्कर्ष पर पंहुचते हैं।
2. **निगमनात्मक उपागम :** निगमनात्मक उपागम में सामान्य से विशिष्ट की ओर जाते हैं। शिक्षक सामान्य नियम को स्पष्ट करने के पश्चात् कुछ विशिष्ट उदाहरणों को विद्यार्थियों के सामने प्रस्तुत करता है जैसे शिक्षक पहले तथ्यों, नियमों, सिद्धांतों या संकल्पनाओं को विद्यार्थियों को बताता है और तद्पश्चात उन तथ्यों, नियमों, सिद्धांतों या संकल्पनाओं के पक्ष में उदाहरणों को प्रस्तुत किया जाता है।
3. **सहयोगपूर्ण सीखना :** सहयोगपूर्ण सीखना एक शिक्षण-अधिगम रणनीति है जिसमें विद्यार्थी सीखने में एक दूसरे का सहयोग करते हैं। इसमें विद्यार्थी साझा लक्ष्य के ऊपर समूह में कार्य करते हैं अर्थात यह एक पारस्परिक पद्धति है जिसमें छात्र समूह की भागीदारी होती है।

4.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. शिक्षण कौशल अर्थशास्त्र के विस्तृत और विशिष्ट दृष्टिकोण धन व संसाधनों के भौतिक और और मानवीय प्रतिरूपों और प्रक्रियाओं को समझने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
2. आगमनात्मक उपागम में विद्यार्थी "विशिष्ट से सामान्य" की ओर अग्रसर होते हैं। आगमनात्मक में उदाहरण पहले बताए जाते हैं और कई उदाहरणों के आधार पर विद्यार्थी कुछ प्रश्नों के माध्यम से स्वयं निष्कर्ष पर पंहुचते हैं।
3. निगमनात्मक उपागम में सामान्य से विशिष्ट की ओर जाते हैं। शिक्षक सामान्य नियम को स्पष्ट करने के पश्चात् कुछ विशिष्ट उदाहरणों को विद्यार्थियों के सामने प्रस्तुत करता है जैसे शिक्षक पहले तथ्यों, नियमों, सिद्धांतों या संकल्पनाओं को विद्यार्थियों को बताता है और तद्पश्चात उन तथ्यों, नियमों, सिद्धांतों या संकल्पनाओं के पक्ष में उदाहरणों को प्रस्तुत किया जाता है।

4. निगमनात्मक उपागम में सामान्य से विशिष्ट की ओर जाते हैं जबकि आगमनात्मक उपागम में विद्यार्थी विशिष्ट उदाहरणों के माध्यम से सामान्यीकरण के द्वारा नियम ज्ञात करते हैं।
5. अन्तर-अनुशासनत्मक उपागम की सीमाएं :- (1) इस उपागम की सफलता शिक्षक के कौशल पर निर्भर करती है कि वह किस सफलता के साथ अंतर-अनुशासनात्मक उपागम का प्रयोग कर सकता है, (2) अंतर अनुशासनात्मक उपागम के माध्यम से शिक्षण कार्य करना शिक्षकों के लिए कठिन कार्य है, एवं (3) सभी पाठों में इसका प्रयोग नहीं किया जा सकता है।
6. रचनात्मक उपागम के दो विशेषताएँ निम्न हैं :- (अ) अधिगम ज्ञान ग्रहण करने की निष्क्रिय प्रक्रिया न होकर, अर्थपूर्ण समस्याओं को हल करने, अर्थ समझने व निर्माण करने की एक क्रियाशील प्रक्रिया है। (ब) सामाजिक मेलजोल व क्रियाकलापों के द्वारा अधिगम को बढ़ावा मिलता है।
7. सहयोगात्मक शिक्षण वह शिक्षण-अधिगम रणनीति है जिसमें विद्यार्थी सीखने में एक दूसरे का सहयोग करते हैं। इसमें विद्यार्थी साझा लक्ष्य के ऊपर समूह में कार्य करते हैं अर्थात यह एक पारस्परिक पद्धति है जिसमें छात्र समूह की भागीदारी होती है।
8. प्रायोजना विधि के संरचनात्मक निर्माण और विकास का श्रेय विलियम किलपैट्रिक को माना जाता है।
9. विवरणात्मक रणनीति की सीमाएं :- (1) विषय से भटकाव की संभावना इस रणनीति में बनी रहती है, (2) विद्यार्थी रूचि नहीं लेते हैं जब विवरण लम्बा व नीरस हो जाता है।
10. अर्थशास्त्र शिक्षण के अंतर्गत कुछ महत्वपूर्ण समाचार-पत्र जैसे–बिज़नस स्टैंडर्ड, द इकनॉमिक टाइम्स, फाइनैन्सियल क्रॉनिकल, फाइनैन्सियल एक्सप्रेस, द हिन्दू बिज़नस लाइन इत्यादि ऐसी हैं जो आर्थिक जानकारियों पर आधारित है।
11. रेडियो पर प्रसारित होने वाले राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक समाचारों का लेखन विद्यार्थियों द्वारा करवाने से उनके सामान्य ज्ञान में वृद्धि होती है। इस प्रकार रेडियो एक महत्वपूर्ण संसाधन है।
12. टेलीविज़न पर आने वाले महत्वपूर्ण कार्यक्रमों जैसे- बजट से संबन्धित लोकसभा या राज्यसभा की कार्यवाही, समसामयिक आर्थिक गतिविधियों पर पैनल चर्चा आदि का प्रसारण विद्यार्थियों को देखने का अवसर देकर प्रत्यक्ष अनुभव प्रदान किए जा सकते हैं।

4.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. पाण्डेय, के. पी. (2009). अर्थशास्त्र शिक्षण. वाराणसी : विश्वविद्यालय प्रकाशन।
2. पाल, हंसराज (2000). उच्च-शिक्षा में अध्यापन एवं प्रशिक्षण की प्रविधियाँ. दिल्ली : हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।

3. सक्सेना, निर्मल (2008). अर्थशास्त्र शिक्षण. जयपुर : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
4. Rai, B. C. (1999). Teaching of Economics. Lucknow: Prakashan Kendra.
5. Aggarwal, J.C. & Gupta, S. (2007). Elementary Educational Technology. Delhi: Shipra Publication.
6. Dahiya, S. S. (2007). Educational Technology: Towards Better Teacher Performance. Delhi: Shipra Publication.

4.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. अर्थशास्त्र शिक्षण के विशेष संदर्भ में आगमनात्मक एवं निगमनात्मक उपागमो में उदाहरण सहित अंतर कीजिए।
2. अर्थशास्त्र शिक्षण के दौरान रचनात्मक उपागम का प्रयोग किस प्रकार किया जा सकता है? इसके लाभ और सीमाओं पर भी प्रकाश डालें।
3. अर्थशास्त्र विषय से संबंधित एक समस्या पर प्रायोजना (प्रोजेक्ट) की रूपरेखा प्रस्तुत कीजिए।
4. समस्या समाधान रणनीति की सावधानियों, लाभ तथा दोषों की चर्चा कीजिए।
5. अर्थशास्त्र शिक्षण में शामिल की जाने वाले संसाधनों का वर्णन करें।

इकाई 5- सामाजिक विज्ञान- भूगोल, अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान और इतिहास में सीखने के लिए आकलन; सामाजिक विज्ञान के विभिन्न पहलूओं की जांच/आकलन/समझने के लिए सबसे उपयुक्त प्रश्नों के प्रकार; सामाजिक विज्ञान में सतत और व्यापक आकलन में मूल्यांकन के विभिन्न उपकरण और तकनीकें

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 सामाजिक विज्ञान-भूगोल, अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान और इतिहास में सीखने के लिए आकलन
5.4 सामाजिक विज्ञान के विभिन्न पहलूओं की जांच / आकलन / समझने के लिए सबसे उपयुक्त प्रश्नों के प्रकार
5.4.1 प्रश्नों के प्रकार
5.5 सामाजिक विज्ञान में सतत और व्यापक आकलन
5.5.1 सामाजिक विज्ञान में सतत और व्यापक आकलन में मूल्यांकन के विभिन्न उपकरण और तकनीकें
5.6 सारांश
5.7 शब्दावली
5.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.9 संदर्भ ग्रंथ सूची
5.10 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

एक सार्थक सामजिक विज्ञान पाठ्यचर्या अपनी पाठ्यसामग्री के चयन व गठन द्वारा विद्यार्थियों में समाज की आलोचनात्मक समझ विकसित करने में समर्थ होती है । यह स्वतंत्रता, विश्वास पारस्परिक सम्मान और विविधता के प्रति सम्मान जैसे मानवीय गुणों का निर्माण और इनका विस्तार करने में मुख्य भूमिका

निभाती है । सामाजिक विज्ञान के शिक्षण का लक्ष्य विद्यार्थियों को नैतिक तथा मानसिक उर्जा प्रदान करना है ताकि वह स्वतंत्र रूप से सोच सकें और अपनी विशिष्टता को बनाए रखते हुए उन बलों का सामना कर सकें जो इनके लिए खतरा हैं । ऐसे में सामजिक विज्ञान में हुए अधिगम का आकलन करने के लिए वैसे ही प्रश्न होने चाहिए जो उपरोक्त लक्ष्यों से सम्बंधित हों । ऐसे में सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत प्रश्नों का निर्माण किस प्रकार से करना चाहिए, वे प्रश्न कैसे होने चाहिए इसका उल्लेख प्रस्तुत पाठ में किया गया है । वर्तमान समय में CBSE, राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा तथा, शिक्षा का अधिकार-2009 की अनुशंसाओं के आधार पर आकलन को सतत और व्यापक बनाया जा रहा है जो आवधिक न होकर निरंतर है और जो मात्र व्यक्ति के कुछ पक्षों के विकास को शामिल न कर समग्र विकास और उसके आकलन को सम्मिलित करता है । प्रस्तुत पाठ में सतत और व्यापक आकलन में सामजिक विज्ञान का आकलन किन उपकरणों से किया जाना चाहिए, वर्णित किया गया है ।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात विद्यार्थी

1. सामाजिक विज्ञान में आकलन के रूप को को स्पष्ट कर सकेंगे
2. सामाजिक विज्ञान के आकलन में विभिन्न प्रकार के प्रश्नों के स्वरुप का वर्णन कर सकेंगे
3. सामाजिक विज्ञान के आकलन से सम्बंधित विभिन्न प्रकार के प्रश्नों का निर्माण कर सकेंगे
4. सतत एवं व्यापक आकलन को परिभाषित कर सकेंगे
5. सतत एवं व्यापक आकलन को विश्लेषित कर सकेंगे
6. सामाजिक विज्ञान में सतत एवं व्यापक आकलन के उपकरणों एवं तकनीकों की व्याख्या कर सकेंगे ।

5.3 सामाजिक विज्ञान-भूगोल, अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान और इतिहास में सीखने के लिए आकलन

सामाजिक विज्ञान समाज के विविध सरोकारों को समाविष्ट करता है तथा इतिहास भूगोल राजनीतिशास्त्र अर्थशास्त्र और समाजशास्त्र आदि विषयों से सामग्रियां लेता है (सामाजिक विज्ञान का शिक्षण, 2007) । विद्यालयी स्तर पर सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत जिन विषयों को हामिल किया जाता है उनमें मुख्य रूप से भूगोल, अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान और इतिहास को लिया जाता है । परन्तु अब समाजशास्त्र को भी इसका हिस्सा माना जाता है ।

विद्यालयों में इसे विज्ञान या गणित विषयों से कमतर कर आँका जाता है । इसे मात्र एक गौण विषय समझा जाता है जिसका उपयोग कुछ सूचनायें प्रदान करना है । इसके इस रूप के लिए दोषी शिक्षक ही हैं क्योंकि वह सामाजिक विज्ञान में सम्मिलित विषयों को इसे रूप में पढ़ते हैं और फिर इसी रूप में मूल्यांकन भी करते हैं । इसे एक रटंत विषय के रूप में साबित करने और प्रश्नों का उत्तर मात्र रट के देने के

लिए विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने के पीछे सबसे बड़ा हाथ शिक्षकों का ही रहा है। जबकि यह विषय अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है जो भावी नागरिक तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। साथ ही यह समाज में समायोजन कर सकने से सम्बंधित गुणों के विकास करने के लिए आवश्यक है।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण संस्थान की पुस्तक सामजिक विज्ञान का शिक्षण, 2007 विद्यालाओं में सामाजिक विज्ञान की स्थिति को स्पष्ट करती है- "सामजिक विज्ञान का एक प्रचलित दृष्टिकोण यह है कि यह एक अनुपयोगी विषय है। इसके कारण विद्यार्थियों के स्वाभिमान में कमी आती है जिससे पूरी कक्षा प्रभावित होती है तथा अध्यापक और विद्यार्थी दोनों ही इसके विषयांगों को ग्रहण करने में अरुचि का अनुभव करते हैं। स्कूली शिक्षा की आरंभिक अवस्था से ही प्रायः विद्यार्थियों के दिमाग में बैठा दिया जाता है कि विज्ञान सामाजिक विज्ञान से बेहतर विषय है और प्रतिभाशाली विद्यार्थियों की संपत्ति है। इसलिए इस तथ्य को उजागार करने की आवश्यकता है कि सामाजिक विज्ञान सामाजिक, सांस्कृतिक और विश्लेषणात्मक कौशल प्रदान करता है जो कि बढ़ते अन्योन्याश्रित विश्व से सामंजस्य स्थापित करने और इसके सञ्चालन को निर्धारित करने वाली राजनैतिक तथा आर्थिक वास्तविकताओं से निपटने के लिए आवश्यक है।"

इसकी उपयोगिता को लेकर सामाजिक अध्ययन अध्यापक जोसेफ किरमान का तर्क है कि, सामाजिक अध्ययन का तात्पर्य बहुत-सी पढ़ाई बाद के यादों के लिए चुने गए तथ्यों के संकलन और उन तथ्यों को याद कर पुनःस्मरण से नहीं है जैसा हमारे विद्यालयों में कराया जाता है, बल्कि सामाजिक विज्ञान का लक्ष्य एक ऐसे जिम्मेदार व्यक्ति का निर्माण होना चाहिए जो परिवर्तन के साथ सामना करने में सक्षम हो, उचित निर्णय को लेने में सक्षम हो, एक बुद्धिमान उपभोक्ता और विज्ञान और प्रौद्योगिकी का नियंत्रक हो, जो मानव विविधता के साथ रहने और इस विविधता की सराहना कर सके और मानव गरिमा का समर्थन तथा बचाव करने में सक्षम हो। इस प्रकार के व्यक्ति को मतभेदों को सम्मानपूर्वक स्वीकार करने, किसी भी प्रकार की हिंसा के प्रयोग से बचने, अपने ग्रह का संरक्षण करने तथा उसके प्रति उत्तरदायित्व का भाव रखना, और प्रकार्यात्मक आर्थिक व्यवस्था और लोकतांत्रिक सरकार बनाए रखने के लिए आवश्यक कौशलों से युक्त होना चाहिए। 4।

सामाजिक विज्ञान के द्वारा यह प्रयास किया जाता है कि विद्यार्थियों में मूल्यों का प्रत्यारोपण किया जा सके। प्रेम, भाईचारा, परस्पर सम्मान, सहनशीलता, स्वतंत्रता, विश्वास, राष्ट्रीयता, विश्व बन्धुत्व, विविधता के प्रति सम्मान और स्वीकृति इत्यादि गुणों के निर्माण और तद्पश्चात विकसित करने का प्रयास सामाजिक विज्ञान के माध्यम से किए जाने का प्रयास किया जाता है। अतः इस विषय का आकलन किए जाते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि इस विषय को अन्य विषयों के समान ही महत्व देते हुए आकलन किया जाए तथा आकलन में मात्र रट कर बोल देने या लिखने सम्बन्धी प्रश्न शामिल न हों। जहाँ तक हो सके अवलोकन, योजना कार्य, प्रयोगात्मक कार्य, साक्षात्कार, प्रश्नावली, आत्म-मूल्यांकन, शिक्षकों एवं अन्य विद्यार्थियों के द्वारा किए जाने वाले मूल्यांकन को शामिल किया जाए। सामाजिक विज्ञान विषय कि प्रकृति को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि इसके आकलन हेतु शिक्षण-अधिगम

प्रक्रिया में आकलन को विद्यार्थियों के सत्र अंत के मापन से अलग रखे जाते हुए अनुदेशनात्मक स्तर पर शामिल करना आवश्यक है

अभ्यास प्रश्न

1. सामजिक विज्ञान के अंतर्गत किन विषयों को सम्मिलित किया जाता है?
2. सामाजिक विज्ञान के द्वारा किन मूल्यों का प्रत्यारोपण विद्यार्थी में किया जा सकता है?

5.5 सामाजिक विज्ञान के विभिन्न पहलूओं की जांच / आकलन / समझने के लिए सबसे उपयुक्त प्रश्नों के प्रकार

सामाजिक विज्ञान में विद्यार्थियों का मूल्यांकन या जाँच के लिए परम्परागत प्रश्नों की शैली को बदलते हुए नए प्रकार के प्रश्नों को सम्मिलित करना होगा। यह प्रश्न शिक्षण उद्देश्यों पर आधारित होने चाहिए और शिक्षक के द्वारा मात्र रट कर जस का तस उत्तर लिख देने के स्थान पर सीखने के परिणामों का आकलन किया जाना चाहिए। इसके लिए शिक्षकों को उच्च स्तर की मानसिक क्रियाओं और क्षमताओं से सम्बंधित प्रश्नों को प्रश्नपत्र में स्थान देना चाहिए। ऐसे प्रश्नों को शामिल किया जाना चाहिए जिसका उत्तर देने के लिए विद्यार्थी को सोचना और समझना पड़े। ये प्रश्न विचारोत्तेजक होने चाहिए। इस प्रकार के प्रश्नों का वर्णन निम्नवत है।

4.5.1 प्रश्नों के प्रकार

i. **तर्क क्षमता को बढ़ाने वाले प्रश्न:** सामाजिक विज्ञान में सम्मिलित विषय मात्र सूचनात्मक नहीं होते जिन्हें बस रट लिया जाए और पुनःस्मरित करते हुए परीक्षा में उत्तर दे दिया जाए। विद्यार्थी जिन तथ्यों, सिद्धांतों, घटनाओं को पढ़ते हैं उन घटनाओं को उन्होंने कितना समझा है और क्या सीखा है इसका आकलन होना चाहिए। अतः सामजिक विज्ञान का आकलन करने में विद्यार्थी की तार्किक क्षमता का मापन कर सके वाले प्रश्नों को पूछा जाना चाहिए। इस सम्बन्ध में वे निहित भावों ओ अपने शब्दों में स्पष्ट करेंगे और निष्कर्ष निकलते हुए सीखे हुए ज्ञान को सम्बंधित अन्य क्षेत्रों में लागू करने में सफल होंगे। उदहारण के लिए विश्व के विभिन्न भागों में आये सुनामी के विषय में पढ़ कर हुए नुकसान के आधार पर प्रभावित देशों के नाम को क्रम से लिखें तथा सुनामी के संभावित कारणों को स्पष्ट करें।

ii. **अनुभवों के बीच समानता एवं अन्तर को पहचानने में मदद कर सकने वाले तुलनात्मक प्रश्न:** विद्यार्थी के सीखने का आकलन सीखे गए ज्ञान से सम्बंधित अन्य स्थितियों से तुलना करते हुए समानता और विषमता स्थापित करने की योग्यता से की जा सकती है। यदि कोई विद्यार्थी सीखे हुए ज्ञान को अन्य अवसरों पर किसी अन्य घटना या परिस्थिति के सन्दर्भ में

समानता या असमानता धुनधते हुए नयी परिस्थिति को समझता है तो हम कह सकते हैं की अधिगम वास्तविक अर्थों में हुआ है। सामजिक विज्ञान का एक मुख्य उद्देश्य कक्षा में प्राप्त ज्ञान का वास्तविक जीवन में उपयोग कर पाना है कि वह निश्चित ज्ञान को पाठ्य पुस्तकों से इतर बाह्य वातावरण से जोड़ते हुए उसे समझ सकें तथा अपने अनुभवों के आधार पर उसकी व्याख्या कर सकें। अतः सामाजिक विज्ञान में विद्यार्थियों का मूल्यांकन करते समय ऐसे प्रश्नों को रखा जाना चाहिए। उदाहरणस्वरुप:- भारतीय संविधान में दिए मौलिक अधिकारों की तुलना संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के संविधान में वर्णित मौलिक अधिकारों से करते हुए स्पष्ट करें कि ये किन क्षेत्रों में समान और किन क्षेत्रों में भिन्न हैं ? भारतीय और अमेरिकी नागरिकों के जीवन स्तर में पर्याप्त भिन्नता है। इसके लिए ये मौलिक अधिकार किस प्रकार से उत्तरदायी हैं ? स्पष्ट करें।

iii. **स्थितियों के विवरण से निष्कर्ष निकालने एवं अनुमान लगाने सम्बन्धी प्रश्न:** सामजिक विज्ञान विषय के उद्देश्यों को ध्यानगत रखते हुए विभिन्न स्थितियों के विवरण को पढ़कर उनसे निष्कर्ष निकालने अथवा अनुमान निकालने सम्बन्धी प्रश्नों को स्थान दिया जाना चाहिए। इस विषय के माध्यम से विद्यार्थियों को इस योग्य बनाया जाना है कि यदि उनके समक्ष कोई स्थिति आए तो वह स्थिति को वस्तुनिष्ठ रूप से समझते हुए किसी निष्कर्ष पर पंहुंच सकें।

iv. **स्पष्टीकरण एवं तर्कसंगत प्रश्न:** सामाजिक विज्ञान के प्रश्नों में स्पष्टीकरण और तर्कसंगत प्रश्नों को शामिल किया जाना चाहिए और यह देखा जाना चाहिए कि वह पर्याप्त तर्कों और प्रमाणों के आधार पर कितने प्रभावी ढंग से अपने विचारों को प्रस्तुत कर पाते हैं। यदि उनके समक्ष कुछ घटनायें प्रस्तुत की जायें तो वह किस प्रकार उन घटनाओं के मध्य तार्किक सम्बन्ध क्थापित करने में सफल हो पाते हैं। उदाहरणतः- भारत में आज भी बच्चों की एक बड़ी जनसंख्या बाल श्रम में लगी है। आपके अनुसार इसके क्या संभावित कारण हो सकते हैं ?

v. **समीक्षात्मक सोच को प्रोत्साहित करने वाले प्रश्न:** विद्यार्थियों में उनकी समीक्षात्मक सोच को बढ़ाया जाना आवश्यक है जिससे वह किसी स्थिति, घटना या तथ्य की समीक्षा कर सकें। इसके लिए विद्यार्थियों को मात्र पुस्तकों पर ही निर्भर नहीं रहना चाहिए बल्कि सूचना तथा जानकारी के अन्य माध्यमों की सहायता ली जानी चाहिए। विद्यार्थी इस हेतु दूरदर्शन, रेडियो, इंटरनेट, मैगजीन इत्यादि की सहायता लेते हुए विभिन्न तथ्यों, घटनाओं या तर्कों का मूल्यांकन कर सकेंगे। उनके द्वारा की गयी समीक्षा उनके तर्क, प्रमाण एवं विचारों पर आधारित होगी जो उनमें उच्च मानसिक क्षमताओं का विकास करेगी। उदाहरणस्वरुप- जिन देशों का मुख्य भोजन चावल है तथा जो देश मुख्य रूप से चावल उत्पादक हैं उनकी जनसंख्या गेंहूँ उत्पादक देशों से अधिक है। क्या इन दो तःयों के मध्य सकारात्मक सम्बन्ध हैं ? यदि हाँ तो कारण स्पष्ट करें।

vi. **विश्लेषण संश्लेषण एवं मूल्यांकन से सम्बंधित प्रश्न:** सामजिक विज्ञान में सम्मिलित प्रश्न मुख्य रूप से उच्च मानसिक क्रियाओं से सम्बंधित होने चाहिए। विषय का उद्देश्य विद्यार्थियों को मात्र सूचनाएं देना नहीं बल्कि उन्हें इस लायक बनाना है कि वह कक्षा में प्राप्त ज्ञान को अपने

दैनिक जीवन में प्रयुक्त कर सकें इस हेतु अनुप्रयोगात्मक, विश्लेषणात्मक, संश्लेषणात्मक तथा मूल्यांकन सम्बन्धी उच्च मानसिक क्षमताओं वाले प्रश्नों को पूछा जाना चाहिए।

vii. **विद्यार्थियों में समानुभूति तथा कल्पना शक्ति को प्रश्रय देने से सम्बन्धी प्रश्न:** विद्यार्थियों में समानुभूति की भावना का विकास सामजिक विज्ञान के प्रमुख उद्देश्यों में से एक है। साथ ही कल्पना शक्ति के विकास में भी सामजिक विज्ञान की महत्वपूर्ण भूमिका है जिसका आकलन भी समय-समय पर किया जाना चाहिए। प्रश्नों के माध्यम से यह आकलन किया जाना चाहिए कि विद्यार्थी किसी घटना की स्थिति की जाँच वस्तुनिस्थ रूप में कर पा रहे हैं अथवा नहीं। किसी घटना के भिन्न एवं विरोधी दृष्टिकोणों को वह सुन, समझ और विश्लेषित करने की क्षमता उनमें विकसित हुई है या नहीं जो मूल रूप से उनके स्व-अनुभवों पर आधारित नहीं है। जैसे- कल्पना करें कि आप प्रागैतिहासिक काल में किसी पत्थर में रह रहे हैं और वहाँ तेज़ पवन चलती है। आप उस पवन शक्ति का प्रयोग अपने लिए किस प्रकार कर पायेंगे? आप पवन को एक संसाधन के रूप में किस प्रकार ले सकते हैं? साथ ही कल्पना करें कि आप 2440 में उसी स्थान पर रह रहे हैं। क्या आप इस समय में पवन का उपयोग संसाधन के रूप में कर सकेंगे? यदि हाँ, तो कैसे?

viii. **नैतिक मूल्यों से सरोकार रखने वाले प्रश्न:** विद्यार्थियों में मूल्यों की प्रतिस्थापना करने का कार्य भाषा, नैतिक विषय एवं सामाजिक विज्ञान जैसे विषय करते हैं। ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि सामजिक विज्ञान में पूछे जाने वाले प्रश्न इस बात का मूल्यांकन करें कि बच्चों में इस प्रकार के मूल्यों का विकास इस विषय के माध्यम से हो रहा है अथवा नहीं। मूल्यांकन कार्यों के लिए यह आवश्यक है कि वह विद्यार्थी के सम्बन्ध-परक एवं भावनात्मक कौशल के विकास पर भी ध्यान दें। जैसे- प्रकृति ने हमें कई प्रकार के प्राकृतिक संसाधन दिए हैं। इन संसाधनों की व्याख्या करें। इन संसाधनों का किस प्रकार समुचित उपयोग करते हुए संरक्षण किया जा सकता है ? अपने आस-पास की चीजों को ध्यान में रखते हुए उदाहरण के साथ स्पष्ट करें।

ix. **आत्म-मूल्यांकन सम्बन्धी प्रश्न:** प्रश्नों में ऐसे प्रश्न भी शामिल किए जाने आवश्यक हैं जो विद्यार्थी के आत्म-मूल्यांकन से सम्बंधित हों। विद्यार्थियों को प्रश्नों के माध्यम से सवा-मूल्यांकन करने का अवसर मिलना चाहिए। विद्यार्थी किसी मानक के सम्बन्ध में अपना आकलन करें और इस प्रकार से आत्म-समीक्षा करते रहें। यह विद्यार्थी में विभिन्न मूल्यों के विकास में भी योगदान करता है।

अभ्यास प्रश्न

3. समीक्षात्मक प्रश्नों को हल करते हुए किन चीजों का सहारा विद्यार्थी द्वारा लिया जाना चाहिए?
4. सामाजिक विज्ञान के प्रश्नपत्र में नैतिक मूल्यों से सम्बंधित प्रश्न क्यों रखे जाने चाहिए ?

5.5 सामाजिक विज्ञान में सतत तथा व्यापक आकलन:

शिक्षा के क्षेत्र में वर्तमान समय में सबसे बड़ी समस्या शिक्षा का गिरता हुआ स्तर है । जिसका परिणाम विद्यार्थियों के शैक्षिक प्रदर्शन के निम्न स्तर के रूप में देखा जा सकता है । इस स्तर को उठाने के लिए शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को विद्यार्थी केन्द्रित बनाने का प्रयास किया जा रहा है ।

साथ ही शिक्षा जब एक सतत प्रक्रिया है तो ऐसी स्थिति में इसका आकलन भी आवधिक न होकर सतत ही होना चाहिये। यदि विद्यार्थी का आकलन किसी निश्चित अवधि के उपरांत किया जाए तो यह शिक्षा के मूल लक्ष्यों को भटका हुआ होगा । सत्रीय परीक्षाएं अधिकांशत: यह बच्चों में तुलना करने जैसे भाव रखती है और अवांछनीय प्रतिस्पर्धा को जन्म देती है। बच्चे का आकलन करते हुए यह महत्वपूर्ण होना चाहिए कि उसने कितना सीखा है पर परंपरागत प्रणाली में उसके सीखने पर बल देने के स्थान पर अन्य बच्चों की तुलना में उसकी क्या स्थिति है इस पर बल दिया जाता है । इसके साथ ही वर्तमान व्यवस्था में बच्चे की अकादमिक प्रगति का ही मूल्यांकन किया जाता है, जबकि बच्चे के सर्वांगीण विकास में अकादमिक प्रगति के साथ-साथ उसकी अभिवृत्तियों, अभिरुचियों, जीवन-कौशलों, मूल्यों तथा मनोवृत्तियों में होने वाले परिवर्तनों का भी समान महत्व होता है।

इस सम्बन्ध में शिक्षा का अधिकार अधिनियम-2009 की धारा 29 की उपधारा (2) में मूल्यांकन प्रक्रिया में निम्नलिखित बिन्दुओं को शामिल करने की अनुशंसा की गयी है:

i. बच्चों का सर्वांगीण विकास हो।
ii. शारीरिक और मानसिक योग्यताओं का पूर्णतम मात्रा तक विकास हो।
iii. बच्चों के सीखने की क्षमता, ज्ञान और उसके अनुप्रयोग की क्षमता का व्यापक और सतत मूल्यांकन हो।

यदि इसे और विस्तार में देखा जाए तो शिक्षा का अधिकार-2009 और राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा-2004 बल देते हुए कहते हैं कि शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में बच्चे के अनुभव को महत्व मिलना चाहिए एवं उसकी गरिमा को सुनिश्चित किया जाना चाहिए, परन्तु यह तब तक वास्तविक रूप में संभव नहीं है जब तक कि हमारे प्रचलित मूल्यांकन पद्धति में परिवर्तन न किया जाय। जिस मूल्यांकन या आकलन व्यवस्था का हम अनुसरण करते हैं वह किसी समय विशेष पर लिखित परीक्षा की व्यवस्था है । इस तरह के मूल्यांकन से कुछ बच्चों को असुरक्षा, तनाव, चिंता और अपमान जैसी स्थितियों का सामना करना पड़ता है। सत्र अन्त में ली जाने वाली परीक्षाओं से यह तो पता चलता है कि बच्चे कितना जानते हैं, पर यह नहीं पता चलता कि जो नहीं जानते उनके न जानने के क्या कारण हैं। इस तरह का मूल्यांकन पाठय पुस्तकों में पढ़ाई गई विषयवस्तु और रटंत प्रणाली द्वारा प्राप्त की गई जानकारी, ज्ञान का मूल्यांकन करने तक ही सीमित है। जबकि छात्र का संवृद्धि तथा विकास मात्र पुस्तकीय ज्ञान तक ही सीमित नहीं है साथ ही यह विकास सम्पूर्ण सत्र में होता है। और इसके लिए विद्यार्थियों का सतत मूल्यांकन करना आवश्यक है जिससे उन्हें स्वयं सीखने में मदद मिले । इस हेतु शिक्षकों तथा विद्यार्थियों द्वारा कक्षा कार्य, परियोजना, विद्यार्थी विश्लेषण, ब्रेन स्टोर्मिंग, समस्या समाधान पर अधिक ध्यान दिया जायेगा । कक्षा परीक्षण, अनुप्रयोग, विश्लेषणात्मक कौशलों, गुण-दोषों के परीक्षण, स्वयं करके सीखने सम्बन्धी कार्यों से विद्यार्थी

उच्च स्तर की मानसिक क्रियाएं कर पायेंगे और फलस्वरूप इन उच्च स्तर की क्रियाओं में दक्षता प्राप्त कर सकेंगे।

यह सत्य है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने आप में अनूठा होते हुए दूसरे व्यक्ति से भिन्न होता है। यह भिन्नता शारीरिक संरचता, बुद्धि, अभिवृत्ति, अभिक्षमता, रूचि इत्यादि कई आधारों पर हो सकती है। प्रत्येक बच्चे की प्रकृति एवं सीखने की गति में भी भिन्नता होती है। अपनी इस भिन्नता की वजह से वे अलग-अलग विधियों से सीखते हैं। अलग अलग विधियों से सीखने की वजह से प्रत्येक बच्चे की प्रस्तुति एवं अभिव्यकित भी पृथक एवं विशिष्ट होती है। ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि बच्चों की शैक्षिक प्रगति के आकलन में मात्र कागज-कलम परीक्षा को ही नहीं प्रयुक्त किया जाए बल्कि इसके अतिरिक्त अन्य विधाओं का भी प्रयोग किया जाये। अन्य विधाओं के प्रयोग से बच्चों की स्मृति क्षमता के स्थान पर अन्य उच्चतर क्षमताओं यथा-अभिव्यकित, विश्लेषण, समस्या का समाधान एवं अनुप्रयोग आदि दक्षताओं का विकास संभव होगा। इनके उपयोग से ज्ञानात्मक के साथ ही भावात्मक गुणों का विकास और आकलन होगा। ऐसे में सतत और व्यापक मूल्यांकन अत्यन्त आवश्यक हो जाता है।

समग्र एवं सतत मूल्यांकन उच्च प्राथमिक स्तर पर प्रतिमान सामग्री, 2047, सतत तथा व्यापक आकलन की उपयोगिता बताते हुए स्पष्ट करती है कि सतत तथा व्यापक आकलन के अंतर्गत छात्र के मार्गदर्शन और सीखने तथा समग्र प्रदर्शन में सुधार हेतु अनेक प्रकार के आकलन के तरीकों का प्रयोग किया जाता है। आकलन के इस माध्यम को छत्र की सीखने की क्षमता का आकलन करने के लिए उपयुक्त माना जाता है क्योंकि यह सर्व समावेशी, संचयी तथा नैदानिक अनुकूल है जिसे सीखने वालों की प्रगति में सुधार तथा उनमें आत्म-जागरूकता विकसित करने के लिए प्रयोग किया जा सकता है ताकि अधिक देरी होने से पूर्व सुधार किया जा सके। नतीजतन, प्राप्त परिणाम तथा प्रतिपुष्टि अधिक मान्य, विश्वसनीय तथा शिक्षार्थी की समग्र क्षमता के अधिक सूचनात्मक (निर्देशात्मक) होते हैं।

सतत तथा व्यापक आकलन को परिभाषित करते हुए एस. एस. श्रीवास्तव लिखते हैं "सतत शब्द इस पर महत्व (बल) देता है कि व्यक्तित्व के पहचान क्षेत्रों का मूल्यांकन एक सतत प्रक्रिया है न कि अलग-थलग असंद्धित घटनाओं का एक संयोजन, यह सम्पूर्ण शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के अभिन्न अंग के रूप में बनाया गया है और एक शैक्षिक सत्र की पूरी अवधि में फैला हुआ है। दूसरा शब्द 'व्यापक' यह संकेत करता है कि यह शैक्षिक से परे व्यक्तित्व के विभिन्न- पहलुओं को समझने का प्रयास करता है जैसे योग्यता, कौशल, गुणों, रुचियों, व्यवहार, मूल्यों, बाहरी गतिविधियों इत्यादि। तीसरे शब्द 'मूल्यांकन' का तात्पर्य नही कि कुल प्रयास का उद्देश्य केवल छात्रों की उपलब्धि और प्रवीणता के स्तर को मापना नहीं है अपितु निदान और उपाय संवर्धन के माध्यम से सुधार करना है। (श्रीवास्तव (2040) करीकुलम एंड मेथड्स ऑफ़ टीचिंग पृष्ठ- 66)

सेंट्रल बोर्ड ऑफ सेकंडरी एजुकेशन, 2009 सतत और व्यापक आकलन को इस प्रकार से वर्णित करता है:

सीसीई का मुख्य जोर छात्रों के बौद्धिक, भावात्मक, शारीरिक, सांस्कृतिक और सामाजिक विकास को सुनिश्चित करते हूए उनकी सतत प्रगति पर होता है और इसलिए वह विद्यार्थी की शैक्षिक योग्यताओं तक

ही सीमित नहीं होगा। वह आकलन का उपयोग विद्यार्थियों […] को प्रतिक्रिया और अनुवर्ती काम की व्यवस्था करने के लिए जानकारी प्रदान करने को प्रेरित करने के साधन के रूप में करता है ताकि कक्षा में सीखने की प्रक्रिया को सुधारा जा सके और विद्यार्थी की प्रोफाइल की एक व्यापक तस्वीर प्रस्तुत की जा सके।

अतः कहा जा सकता है कि सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन की प्रक्रिया वास्तव में व्यापक गुणवतासुधार प्रक्रिया है। यह कक्षा में सीखने-सिखाने की विधा एवं विद्यार्थी के विद्यालय-आधारित आकलन व्यवस्था है जिसमें विद्यार्थी के सीखने के सभी पक्षों पर ध्यान दिया जाता है। यह आकलन प्रणाली जो मूलतः विद्यार्थी केन्द्रित प्रणाली है शिक्षा के गिरते स्तर को रोकते हुए विद्यार्थियों के प्रदर्शन में सुधार लाने में मुख्य भूमिका अदा करती है पर इसके आवश्यक है कि इसे सही रूप में अपनाया जाए।

सामाजिक विज्ञान में सतत तथा व्यापक आकलन का लक्ष्य है अन्तर्निहित समस्याओं को पहचानना, इसका क्रियान्वयन। सतत तथा व्यापक आकलन के लागू होने के पश्चात् शिक्षकों की समस्त भूमिका प्रक्रिया पर केन्द्रित हो जाती है। पर शिक्षक या विद्यालय इसके वास्तविक अर्थ को नहीं पा रहे हैं। शिक्षक इसे शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के साथ एकीकृत नहीं कर रहे हैं बल्कि इसे एक बाहरी गतिविधि के रूप में लेते हैं जिसे पाठ को पढ़ाने के पश्चात् या अलग से किया जाना चाहिए जो कि सतत तथा व्यापक आकलन की संकल्पना नहीं है और यही कारण है कि वह अपना अधिकांश समय विद्यार्थियों की परीक्षा से सम्बंधित आंकड़ों के संकलन में लगा रहे हैं और सतत तथा व्यापक आकलन को अपने ऊपर एक अनावश्यक बोझ के रूप में ले रहे हैं। सतत शब्द के अर्थ को शिक्षक नियमित रूप से परीक्षा लेना माना जाता है और समग्र का आशय व्यक्तिगत-सामाजिक विशेषताओं में से चार या पाँच विशेषताओं को ले लेते हैं और उनके आधार पर समस्त व्यक्तित्व का मापन करते हैं।

5.5.1 सामाजिक विज्ञान में सतत और व्यापक आकलन में मूल्यांकन के विभिन्न उपकरण और तकनीकें

सतत तथा व्यापक आकलन के अंतर्गत मूल्यांकन या आकलन के परंपरागत तकनीकों या उपकरणों के साथ कुछ नवीन उपकरणों या तकनीकों को सम्मिलित किया जात है। ऐसा नहीं है कि परंपरागत तकनीकें पूर्णरूपेण नकार दी गयी हैं पर इनका महत्व कम अवश्य ही हो गया है क्योंकि यह व्यक्तित्व के एक पक्ष के आकलन से ही सम्बंधित हैं। सतत और व्यापक आकलन का उद्देश्य निरंतर तथा विस्तृत आकलन है। आकलन को इसमें अध्यापन को साथ जोड़ने की आवश्यकता है। यदि आकलन मात्र कुछ कार्यों या सामान्य प्रश्नों पर आधारित होता है तो यह सीखने को प्रोत्साहित नहीं करता है। सतत एवं व्यापक आकलन के अंतर्गत आकलन भी किसी विषय-वस्तु को सीखने पर केन्द्रित होना चाहिए। आकलन के उपकरण एवं तकनीकों में विद्यार्थी की वैचारिक समझ, स्थिति को समझने की योग्यता तथा समस्या समाधान करने की क्षमता, तार्किक क्षमता का विकास करना होना चाहिए।

सामाजिक विज्ञान के लिए यह और भी महत्वपूर्ण हो जाता है अतएव इसके अंतर्गत जिन उपकरणों एवं तकनीकों को शामिल किया जाता है वह निम्नवत हैं।

- सतत अवलोकन अभिलेखन
- पोर्टफोलियो फाइल
- प्रोजेक्ट कार्य
- चैकलिस्ट
- स्रोत पुस्तिका
- कार्य पत्रक
- योजना एवं आकलन पंजिका
- विद्यार्थी मूल्यांकन प्रतिवेदन
- कक्षा कार्य
- गृह कार्य
- अन्य शिक्षिकाओं अभिभावकों एवं साथियों द्वारा आकलन इत्यादि

अभ्यास प्रश्न

5. विद्यार्थी के सर्वांगींण विकास में किन पहलूओं को सम्मिलित किया जाता है ?
6. सतत एवं व्यापक आकलन में "व्यापक" शब्द से क्या आशय है?
7. सतत एवं व्यापक आकलन में सामाजिक विज्ञान के आकलन हेतु जिन उपकरणों एवं तकनीकों का प्रयोग किया जाता है उनमें से किसी चार का नामोल्लेख करें।

5.6 सारांश

शिक्षा के सर्वमान्य और सर्वकालिक लक्ष्यों और उद्देश्यों को देखा जाए तो यह समाज में जीवन यापन कर सकने तथा इसके लिए आवश्यक ज्ञान, कौशल, अभिवृत्तियों और व्यवहारों को सीख सकें। विशेषकर सामजिक विषय से यह अपेक्षा रखी जाती है वह विद्यार्थियों में इन गुणों या कौशलों का विकास करे। वर्तमान समय में जब समाज और इसकी संरचना दिन प्रतिदिन और भी जटिल होती जा रही है ऐसे में सामाजिक विज्ञान की भूमिका और भी अहम् होती जा रही है। इस अध्याय में सामाजिक विज्ञान के इसी रूप और इसके आकलन से सम्बंधित तथ्यों का वर्णन किया गया।

5.7 शब्दावली

1. **सतत एवं व्यापक आकलन:** सतत एवं व्यापक आकलन वह आकलन प्रक्रिया है जो सतत और नियमित रूप से सम्पूर्ण शैक्षिक सत्र में शैक्षणिक के साथ-साथ पाठ्य-सहगामी उपलब्धियों तथा गतिविधियों का आकलन करती है।

5.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. सामजिक विज्ञान के अंतर्गत इतिहास, भूगोल, राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र एवं समाजशास्त्र विषयों को सम्मिलित किया जाता है
2. सामाजिक विज्ञान के द्वारा प्रेम, भाईचारा, परस्पर सम्मान, सहनशीलता, स्वतंत्रता, विश्वास, राष्ट्रीयता, विश्व बन्धुत्व, विविधता के प्रति सम्मान और स्वीकृति इत्यादि मूल्यों का प्रत्यारोपण विद्यार्थी में किया जा सकता है।
3. समीक्षात्मक प्रश्नों को हल करते हुए विद्यार्थी द्वारा दूरदर्शन, रेडियो, इंटरनेट, मैगजीन इत्यादि की मदद लेनी चाहिए।
4. सामाजिक विज्ञान के प्रश्नपत्र में नैतिक मूल्यों से सम्बंधित प्रश्न इसलिए रखे जाने चाहिए क्योंकि ये विद्यार्थी के विद्यार्थी के सम्बन्ध-परक एवं भावनात्मक कौशल के विकास से सम्बंधित होते हैं।
5. विद्यार्थी के सर्वांगींण विकास में शैक्षिक प्रगति के साथ-साथ, बौद्धिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, जीवन मूल्य, नैतिक मूल्यों के विकास को भी शामिल किया जाता है।
6. सतत और व्यापक आकलन में 'व्यापक' शब्द यह संकेत करता है कि यह शैक्षिक से परे व्यक्तित्व के विभिन्न- पहलुओं जैसे योग्यता, कौशल, गुणों, रुचियों, व्यवहार, मूल्यों, बाहरी गतिविधियों इत्यादि का आकलन भी करता है।
7. सतत एवं व्यापक आकलन में सामाजिक विज्ञान के आकलन हेतु जिन उपकरणों एवं तकनीकों का प्रयोग किया जाता है उनमें से चार निम्नवत हैं
    - सतत अवलोकन अभिलेखन
    - प्रोजेक्ट कार्य
    - चैकलिस्ट
    - कार्य पत्रक

5.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Myers, J. (n.d.). *Assessment and Evaluation in social Studies classroom: A Question of Balance*. Retrieved from

https://www.learnalberta.ca/content/ssass/html/pdf/assessment_and_evaluation_in_social_studies_classrooms.pdf

2. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् (2007). *सामाजिक विज्ञान का शिक्षण*. नयी दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद्.
3. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् (2044). *सतत एवं समग्र मूल्यांकन सी.सी.ई. प्राथमिक स्तर पर प्रतिमान सामग्री*. नयी दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद
4. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् (2047*). सतत एवं समग्र मूल्यांकन सी.सी.ई. उच्च प्राथमिक स्तर पर प्रतिमान सामग्री*. नयी दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद्.
5. श्रीवास्तव, एस.एस. (2040). *करीकुलम एंड मेथड्स ऑफ़ टीचिंग*. Cited in राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् (2047). सतत एवं समग्र मूल्यांकन सी.सी.ई. उच्च प्राथमिक स्तर पर प्रतिमान सामग्री. नयी दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद्.

5.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. सामाजिक विज्ञान के आकलन हेतु विभिन्न प्रकार के प्रश्नों का वर्णन करें तथा स्पष्ट करें कि ऐसे प्रश्न क्यों सम्मिलित किए जाने चाहिए?
2. सतत और व्यापक आकलन को परिभाषित करते हुए सामजिक विज्ञान के लिए प्रयुक्त किए जाने वाले विभिन्न उपकरणों का वर्णन करें।
3. सामजिक विज्ञान के आकलन के लिए सतत एवं व्यापक आकलन किया जाना आवश्यक है। इस कथन पर प्रकाश डालें।

खण्ड 2

Block 2

इकाई 1 - राजनीति विज्ञान विषय का अर्थ, प्रकृति एवं कार्यक्षेत्र; राजनीति विज्ञान विषय के मूल संप्रत्यय: लोकतन्त्र, सरकार, पंचायत, संविधान, अधिकार, कर्तव्य, राज्य, नागरिकता; राजनीति विज्ञान शिक्षण के लक्ष्य और उद्देश्य

(Meaning, Nature & Scope of Political Science as a discipline; Key concepts in Political Science- Democracy, Government, Panchayat, Constitution, Rights, Duties, Territory, Citizenship; Aims and Objectives of Political Science)

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 राजनीति विज्ञान विषय का अर्थ
1.4 राजनीति विज्ञान विषय की प्रकृति
1.5 राजनीति विज्ञान विषय का कार्यक्षेत्र
1.6 राजनीति विज्ञान के मूल संप्रत्यय
1.7 राजनीति विज्ञान शिक्षण के लक्ष्य और उद्देश्य
1.8 सारांश
1.9 शब्दावली
1.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.11 संदर्भ ग्रंथ सूची
1.12 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है वह अपनी आवश्यकता की पूर्ति व विकास के लिए समाज पर निर्भर करता है। सामाजिक शब्द मनुष्य में निहित सामूहिकता की मूल प्रवृत्ति का द्योतक है। मनुष्य की सामाजिकता के निम्नांकित कारण हैं यह मानव का स्वभाव है कि वह समाज में रहे जैसे बोलना विचार करना तथा वाणी द्वारा अपने विचारों को प्रकट करना मानव का मूल स्वभाव है। जीवन की आवश्यकता भी मनुष्य को इस बात के लिए विवश करती है कि वह समुदाय में संगठित हो, एकाकी रहता हुआ मनुष्य ना तो अपनी रक्षा कर सकता है और ना ही जीवन की आवश्यकता की पूर्ति कर सकता है।

नागरिक शास्त्र तथा राजनीति शास्त्र प्रारंभ में दोनों एक ही सामाजिक विज्ञान के रूप माने जाते थे क्योंकि इन दोनों की उत्पत्ति पाश्चात्य जगत में यूनान के नगर राज्यों से हुई नगर राज्यों में केंद्रित मनुष्यों के सामाजिक जीवन का अध्ययन करने वाले शास्त्र को नागरिक शास्त्र अथवा राजनीति शास्त्र कहा गया। परंतु आज के राज्य बहुत विशाल हैं उनमें विभिन्न प्रांतों, जिलों,नगरों, ग्रामों आदि का समावेश है आज मनुष्य का सामाजिक जीवन नगर राज्य तक ही सीमित ना होकर विशालकाय राज्यों में केंद्रित है। धीरे-धीरे नगर राज्य विशाल राज्यों या राष्ट्रों में परिणित हो गए तथा विदेशियों को राष्ट्रीयता एवं दासों को स्वतंत्रता प्रदान कर उन्हें नागरी अधिकार मिल गए। विकास की प्रक्रिया ने नागरिकता तथा नागरिक शास्त्र अथवा राजनीति शास्त्र के क्षेत्र को व्यापक बना दिया है। इस इकाई में राजनीति विज्ञान के अर्थ प्रकृति एवं इसी व्यापक क्षेत्र की चर्चा की गई है तथा राजनीति शास्त्र के कुछ महत्वपूर्ण संप्रत्यययों के अर्थ को स्पष्ट किया गया है तथा अंत में राजनीति विज्ञान शिक्षण के लक्ष्य एवं शैक्षणिक उद्देश्य की चर्चा भी की गई है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के अध्ययन के उपरांत विद्यार्थी

1. राजनीति विज्ञान का अर्थ स्पष्ट कर सकेंगे।
2. राजनीति विज्ञान की प्रकृति स्पष्ट कर सकेंगे।
3. राजनीति विज्ञान के कार्य क्षेत्र की व्याख्या कर सकेंगे।
4. राजनीति विज्ञान के मूल संप्रत्ययों को परिभाषित कर सकेंगे।
5. राजनीति विज्ञान शिक्षण के लक्ष्यों का वर्णन कर सकेंगे।
6. राजनीति विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य निर्मित कर सकेंगे।

1.3 राजनीति विज्ञान विषय का अर्थ

राजनीति शास्त्र शब्द की उत्पत्ति यूनानी शब्द ' पोलिस' शब्द से मानी जाती है जिसका अर्थ है ' नगर राज्य' राजनीति शास्त्र एक ऐसा विषय माना जाता था इसके अंतर्गत नगर राज्य की समस्त गतिविधियां एवं क्रियाओं का अध्ययन किया जाता था। प्राचीन ग्रीक दार्शनिक राज्य और सरकार के बीच कोई

अंतर नहीं मानते थे वह कभी भी वैयक्तिक जीवन एवं सामाजिक जीवन में कोई विभेद नहीं करते थे, उनके अनुसार राजनीति मनुष्य समाज राज्य एवं नैतिकता का समग्र अध्ययन है।

परंपरागत राजनीतिक चिंतकों के अनुसार राजनीति विज्ञान, राज्य का अध्ययन है। J.W. Ganner States के अनुसार- राजनीति विज्ञान राज्य के साथ ही शुरू होता है और राज्य के साथ ही समाप्त होता है। कुछ विद्वान इसे राज्य एवं सरकार का अध्ययन मानते हैं।

George Catlin States के अनुसार- राजनीति से तात्यपर्य या तो राजनीतिक जीवन की क्रियाओं या उन क्रियाओं के अध्ययन से है और यह समस्त क्रियाएं सामान्यतया सरकार के विभिन्न अंगों से संबंधित होती हैं। राजनीति विज्ञान एक ऐसा विवेचनात्मक अध्ययन है, जो राष्ट्रीय राजनीतिक संस्थानों के विवरण उनके इतिहास उनके सिद्धांतों उनकी कार्य विधि दिशा निर्देशक बलों, अंतर्निहित प्रभावों परिणामों जो उन प्रभावों से जनित है और उनका देश के जीवन पर प्रभाव तथा पड़ोसी राज्यों के साथ संबंधों को जोड़ता है। राज्य सरकार और राष्ट्रीय संस्थान के अध्ययन के रुप में राजनीति विज्ञान का संप्रत्यय वर्तमान में पर्याप्त नहीं माना जाता है उपरोक्त परिभाषाएं केवल विधिक स्वरूप को परिलक्षित करती है उनसे यह स्पष्ट नहीं हो पाता है कि राज्य के अंदर क्या घटित हो रहा है। इसलिए राजनीतिक चिंतको द्वारा इसे अलग तरीके से परिभाषित किया गया है।

Harold Lasswell के अनुसार- राजनीति राजनैतिक शक्तियों को आकार देना केवल उनको साझा करना है।

आधुनिक चिंतकों के अनुसार समस्त राजनैतिक क्रियाएं शक्ति को हासिल करने एवं उसे बरकरार रखने की ओर अग्रसर हैं। शक्ति राजनीति में केंद्रीय विचार है, शक्ति कौन प्राप्त करेगा? कैसे प्राप्त करेगा? कब प्राप्त करेगा? और क्या प्राप्त करेगा? इन प्रश्नों से संबंधित है।

कुछ विद्वानों ने राजनीति विज्ञान को द्वंद समाधान का अध्ययन माना है। राजनीतिक प्रक्रिया का उद्देश्य या तो परिवर्तन लाना है या परिवर्तन का विरोध करना है । लोग अपनी आवश्यक्ताओं की पूर्ति हेतु प्रतिस्पर्धा करते हैं जब संसाधन सीमित हैं और लोग उन्हें इस्तेमाल करना चाहते हैं तभी द्वंद उत्पन्न होते हैं। राजनीति इन्हीं द्वंद का समाधान करती है।

कुछ विद्वान राजनीति विज्ञान को अनेक बलों के सहसंबंध का अध्ययन मानते हैं। उनके अनुसार राजनीति संस्थान एवं राजनीति निर्वात में संचालित नहीं हो सकती है। सामाजिक एवं आर्थिक बल राजनीतिक प्रक्रियाओं को प्रभावित करते हैं, इसलिए इन बलों का सहसंबंध राजनीति में महत्वपूर्ण है।

उपरोक्त परिभाषाओं को संकलित कर निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है, कि राजनीति विज्ञान राज्य सरकार, राजनीतिक संस्थाओं, शक्ति सत्ता प्रभाव राजनैतिक प्रक्रियाओं एवं राजनीतिक बलों का क्रमबद्ध अध्ययन है।

अभ्यास प्रश्न

1. राजनीति विज्ञान शब्द ग्रीक भाषा के किस शब्द से बना है?
2. राजनीति विज्ञान की संप्रत्यय संबंधी आधुनिक अवधारणा क्या है?

1.4 राजनीति विज्ञान विषय की प्रकृति:

राजनीति विज्ञान को परिभाषित करने वाले विद्वानों ने इसे एक विज्ञान माना है। परंतु यह विषय अभी विवादास्पद बना हुआ है कुछ विद्वान इसे विज्ञान कहते है तथा कुछ इसे दर्शन कहते हैं। दर्शन हम शास्त्र को कहते हैं जिसका आधार अवलोकन व परीक्षण ना होकर कल्पना व तर्क होता है। राजनीति शास्त्र में मैं निश्चयात्मकता नहीं होती है, इस कारण राजनीति शास्त्र को विज्ञान नहीं माना जाता है। राजनीति शास्त्र को विज्ञान माननीय या ना माननीय के पक्ष व विपक्ष की तर्कों पर विचार करने से पूर्व विज्ञान का अर्थ देखना आवश्यक है। विकृति के विभाग के कार्य कारण संबंध में ज्ञान के प्रमुख संग्रह को विज्ञान कहा जाता है। इस प्रकार विज्ञान, ज्ञान का वह भंडार है जिसमें निरीक्षण परीक्षण तथा प्रयोगों द्वारा प्रकृति की समानता व असमानता का अध्ययन किया जाता है। हक्सले महोदय का कथन है 'मैं उस ज्ञान को विज्ञान मानता हूं, जो तर्क तथा परमाणु पर आधारित है' कार्ल पियरसन के शब्दों में 'विज्ञान की एकमात्र पहचान उसकी साध्य प्रणाली से होती है न कि उसकी अध्ययन सामग्री से'। गार्नर के शब्दों में 'विज्ञान का वास्तविक अर्थ वह है जिसका अध्ययन क्रमबद्धता के साथ किया जा सके,जो कार्य तथा कारण का संबंध स्थापित कर सके'।

विज्ञान की उपर्युक्त परिभाषाओं में निहित लक्षणों से स्पष्ट है कि विज्ञान कहलाने के लिए उसे विषय के नियमों का पूरी तरह निश्चित तथा अटल होना आवश्यक नहीं है वरन आवश्यकता इस बात की है कि उस विषय का अध्ययन ढंग से वैज्ञानिक प्रणाली के आधार पर किया जाए।

राजनीति शास्त्र को विज्ञान की श्रेणी में नहीं रखा गया हैं, इस संबंध में निम्नलिखित तथ्य प्रस्तुत किए गए हैं-

1. राजनीति शास्त्र के तथ्यों पर सहमति का अभाव है। राजनीति शास्त्र मान्यता है कि लोकतंत्र शासन प्रणाली सर्वश्रेष्ठ है, परंतु कुछ लोग इसे खराब मानते हैं।
2. राजनीति शास्त्र में बहुधा रसायन विज्ञान की तरह कार्य तथा कारण में निश्चित संबंध का अभाव पाया जाता है, जैसे फ्रांसीसी क्रांति का कोई एक स्पष्ट कारण को बता पाना कठिन है।
3. पर्यवेक्षण तथा परीक्षण का अभाव होना।

इसमें कोई संदेह नहीं कि संकुचित अर्थों में राजनीति शास्त्र को एक विज्ञान नहीं कहा जा सकता इसमें ऐसे सिद्धांतों या नियमों का अभाव है जो अटल हो परंतु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि राजनीति शास्त्र एक विज्ञान नहीं है, विज्ञान से अभिप्राय उस ज्ञान से है जो क्रमबद्ध होता है साथ ही नियमित पर्यवेक्षण, अनुभव तथा अध्ययन से प्राप्त होता है। इस कसौटी पर कसने से राजनीति शास्त्र भी एक विज्ञान है इसके विज्ञान होने के पक्ष में निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किए जा सकते हैं-

- राजनीति शास्त्र में वैज्ञानिक प्रणाली का प्रयोग किया जा सकता है। इसके माध्यम से क्रमबद्ध ज्ञान की प्राप्ति संभव है।

- नागरिक शास्त्र में विज्ञान की भांति कार्य कारण संबंध स्थापित किया जा सकता है। विशेष घटनाओं के अध्ययन के आधार पर सामान्य निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं। उदाहरण के लिए जनसाधारण का असंतोष तथा आर्थिक विषमता सदैव ही विद्रोह के कारण रहे हैं।
- राजनीति शास्त्र में भौतिक एवं प्राकृतिक विज्ञानों की भांति भविष्यवाणी नहीं की जा सकती परंतु इसमें हम संभावना व्यक्त कर सकते हैं। लार्ड ब्राइस के शब्दों में 'राजनीति शास्त्र वैसा ही विज्ञान है जैसा कि अंतरिक्ष विज्ञान, जिस प्रकार अंतरिक्ष विज्ञान के नियम सदैव सत्य नहीं होते वरन उनमें अनुमान की ही अधिक संभावना होती है, परंतु फिर भी वही विज्ञान है'। अतः हम कह सकते हैं कि राजनीति शास्त्र के नियम सदैव सत्य नहीं हो सकते क्योंकि यह शास्त्र मानव का अध्ययन करता है,जो की रुचि, स्वभाव, योग्यता, चिंतन कौशल तथा क्षमता में एक दूसरे से भिन्न होते हैं। इस समय केवल संभावना ही व्यक्त की जा सकती है।

विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि राजनीति शास्त्र को विज्ञान की परिभाषा के आधार पर विज्ञान की श्रेणी में रख सकते हैं। यह एक सामाजिक विज्ञान है, जिसके शब्दों में सामाजिक विज्ञान में भौतिक एवं प्राकृतिक विज्ञानों की भांति शुद्धता प्राप्त करना असंभव है, परंतु सामाजिक समस्याएं उन्हें वैज्ञानिक विधियों से प्रतिपादित की जा सकती हैं। जिनसे की भौतिक व रसायन विज्ञान की समस्याएं हल की जाती है। उपरोक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं, कि राजनीति शास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है। उत्तमबेकर के अनुसार 'नागरिक शास्त्र नागरिकता का विज्ञान तथा दर्शन है'।

राजनीति शास्त्र को कला की श्रेणी में भी रखा जाता है। कुछ विद्वानों का विचार है कि कला हमको व्यवहारिकता प्रदान करती है। कला का मुख्य कार्य, कार्य करना है इस प्रकार कलाकार अर्जित ज्ञान को अपने जीवन में प्रयोग करना है ताला स्टार के शब्दों में कला एक मानवीय प्रयास है जिसमें एक मानव अपनी इन भावनाओं को जिनका उसने अपने जीवन में साक्षात्कार किया है ज्ञान पूर्वक कुछ संकेतों द्वारा प्रकट करता है तथा उन भावनाओं का दूसरों पर प्रभाव पड़ता है और वह भी उसकी अनुभूति करते हैं। कला के इस अर्थ के आधार पर हम राजनीति शास्त्र को भी कला की श्रेणी में रख सकते हैं क्योंकि यह शास्त्र केवल यह नहीं बतलाता है कि नागरिकता के सिद्धांत तथा नियम क्या है? सफल नागरिक जीवन किसे कहते हैं? नागरिक शास्त्र केवल मानव के आदर्श आदर्श नागरिक तथा उसके जीवन की व्याख्या करके ही अपने को संतुष्ट नहीं रखता वरन वह इन नियमों तथा सिद्धांतों के अनुसार आचरण करने पर भी बल देता है जिससे आदर्श सामाजिक एवं नागरिक जीवन की प्राप्ति हो सके। राजनीति शास्त्र के मात्र सिद्धांतों को जानकर मनुष्य अच्छा नागरिक नहीं बन सकता अपितु उसको इन सिद्धांतों के अनुसार आचरण करना भी अनिवार्य है। जब राजनीति शास्त्र आचरण करने पर बल देता है तब वह कला की श्रेणी में रखा जाता है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि राजनीति शास्त्र एक विज्ञान के रूप में न केवल ज्ञान प्रदान करता है वरन एक कला के रूप में यह सामाजिक आदर्शों के प्रकाश में नागरिक को सक्रिय संवेदनशील एवं जिम्मेदार जीवन व्यतीत करने के लिए प्रेरित करता है। इस प्रकार राजनीति शास्त्र की प्रकृति विज्ञान तथा कला दोनों है।

अभ्यास प्रश्न

3. राजनीति शास्त्र को विज्ञान कहने का कोई एक कारण लिखिए?
4. राजनीति शास्त्र को कला की श्रेणी में क्यों रखा जाता है? बताइए।
5. राजनीति शास्त्र क्यों एक सामाजिक विज्ञान है?

1.5 राजनीति विज्ञान विषय का कार्यक्षेत्र

डॉक्टर ई एम व्हाइट के अनुसार नागरिक शास्त्र न्यूनाधिक रूप में मानव ज्ञान की वह उपयोगी शाखा है जो नागरिकों से संबंधित सभी पक्षों (सामाजिक, बौद्धिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा धार्मिक पक्षों का प्रतिपादन करता है) चाहे वह भूतकाल, वर्तमान तथा भविष्य से संबंधित हो चाहे स्थानीय, राष्ट्रीय तथा मानवीय हो।

उपर्युक्त परिभाषा से राजनीति शास्त्र के क्षेत्र से संबंधित निम्नलिखित बातें स्पष्ट हो जाती हैं

- राजनीति शास्त्र का अध्ययन अतीत, वर्तमान तथा भविष्य तीनों कालों से संबंधित है। राजनीति शास्त्र मनुष्य का एक सामाजिक सदस्य या नागरिक के रूप में अध्ययन करता है॥
- राजनीति शास्त्र का विषय क्षेत्र- स्थानीय राष्ट्रीय तथा मानवीय या अंतरराष्ट्रीय स्तर की समस्याओं से संबंधित है।
- नागरिक शास्त्र केवल हमारी वर्तमान सामाजिक परिस्थितियों का ही अध्ययन नहीं करता वरन इसमें अतीत एवं भावी समाज के दर्शन भी होते हैं वर्तमान को देखने के लिए अतीत की ओर देखना आवश्यक होता है।

राजनीति शास्त्र के अध्ययन की मुख्य विषय वस्तु मानव है परंतु यह समाज में रहने वाले मनुष्य का ही अध्ययन करता है। मानव सभ्यता का विकास जैसे-जैसे होता जा रहा है राजनीति शास्त्र का क्षेत्र भी वैसे-वैसे विस्तृत होता जा रहा है यह अब छोटे-छोटे नगर राज्यों तक सीमित नहीं है वरन इसका क्षेत्र धीरे-धीरे बढ़कर अंतर्राष्ट्रीय स्तर का हो गया है इस कारण नागरिकता का क्षेत्र स्थानीय क्षेत्र से बढ़कर वैश्विक हो गया है

राजनीति शास्त्र के अंतर्गत नागरिकों के अधिकार का अध्ययन किया जाता है जो हमें बतलाता है की व्यक्ति के नागरिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि क्या-क्या अधिकार हैं तथा हमें स्वयं अपने प्रति, माता-पिता के प्रति, ग्राम या नगर के प्रति, समाज के प्रति, राज्य एवं राष्ट्र तथा विश्व के प्रति किन-किन कर्तव्यों का पालन करना चाहिए? राजनीति शास्त्र यह समाज तथा व्यक्ति के संबंधों का अध्ययन करता है। अतीत में समाज का क्या स्वरुप था? उस का वर्तमान स्वरूप क्या है? भविष्य में उसका स्वरूप क्या होना चाहिए? इसमें इन बातों का अध्ययन किया जाता है।

अभ्यास प्रश्न

6. राजनीति विज्ञान की मुख्य विषयवस्तु क्या है ?

1.6 राजनीति विज्ञान के मूल संप्रत्यय

i. **लोकतन्त्र-**लोकतंत्र शासन का एक ऐसा रुप है जिसमें शासकों का चुनाव लोग करते हैं। लोकतंत्र में जनता के द्वारा चुनी हुई सरकार होती है।

- इसमें लोगों द्वारा चुने गए शासक ही सारे फैसले करते हैं।
- चुनाव लोगों के लिए निष्पक्ष अवसर और इतने विकल्प उपलब्ध कराता है कि वह चाहे तो मौजूदा शासकों को बदल सकते हैं।
- यह विकल्प और अवसर सभी लोगों को समान रूप से उपलब्ध होते हैं, और
- चुनाव से बनी सरकार संविधान द्वारा तय बुनियादी कानूनों और नागरिक अधिकारों के दायरे को मानते हुए काम करती है।

ii. **सरकार-** संस्थाओं का ऐसा समूह जिसके पास देश में व्यवस्थित जनजीवन सुनिश्चित करने के लिए कानून बनाने, लागू करने और उसकी व्याख्या करने का अधिकार होता है। व्यापक अर्थ में सरकार किसी देश के लोगों और संसाधनों को नियंत्रित और उनकी निगरानी करती है। हर एक देश को विभिन्न निर्णय लेने एवं काम करने के लिए सरकार की जरूरत होती है। यह निर्णय कई विषयों से संबंधित हो सकते हैं जैसे- सड़कें और स्कूल कहां बनाए जाएं? बहुत ज्यादा महँगी हो जाने पर किसी चीज के दाम कैसे घटाएं जाएं? अथवा बिजली की आपूर्ति को कैसे बढ़ाया जाए? सरकार कई सामाजिक मुद्दों पर भी कार्यवाई करता है उदाहरण के लिए सरकार गरीबों की मदद करने के लिए कई कार्यक्रम चलाती है। इनके अलावा वह अन्य महत्वपूर्ण काम भी करती है जैसे- डाक एवं रेल सेवाएं चलाना। सरकार का काम देश की सीमाओं की सुरक्षा करना और दूसरे देशों से शांतिपूर्ण संबंध बनाए रखना भी है। उसकी जिम्मेदारी यह सुनिश्चित करना है कि देश के सभी नागरिकों को पर्याप्त भोजन और अच्छी शिक्षा, स्वास्थ्य सुविधाएं मिले। जब प्राकृतिक विपदा आती है जैसे -सुनामी या भूकंप तो मुख्य रुप से सरकार ही पीड़ित लोगों की सहायता करती है। अगर कहीं कोई विवाद होता है या कोई अपराध करता है तो लोग न्यायालय जाते हैं। न्यायालय भी सरकार का ही अंग है।

iii. **सरकार के स्तर-** आपको अब पता है कि सरकार कितनी सारी अलग-अलग चीजों के लिए जिम्मेदार है। तो क्या आप सोच सकते हैं की सरकार यह सारे इंतजाम कैसे करती होगी? दरअसल सरकार अलग-अलग स्तरों पर काम करती है स्थानीय स्तर पर राज्य के स्तर पर एवं राष्ट्रीय स्तर पर। स्थानीय स्तर का मतलब आपके गांव शहर या मोहल्ले से है। राज्य स्तर का मतलब है जो पूरे राज्य को ध्यान में रखें जैसे- हरियाणा या असम की सरकार पूरे राज्य में काम करती है। राष्ट्रीय स्तर की सरकार का संबंध पूरे देश से होता है।

iv. **पंचायत-** पंचायती राज व्यवस्था एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा लोग अपनी सरकार में भाग लेते हैं। पंचायती राज व्यवस्था लोकतांत्रिक सरकार की पहली सीढी है। पंचायत ग्राम सभा के

प्रति जवाबदेह होती है क्योंकि ग्राम सभा के लोग ही उसको चुनते हैं। पंचायती राज व्यवस्था में लोगों की भागीदारी दो और स्तरों पर होती है ग्राम पंचायत के बाद दूसरा स्तर विकासखंड का होता है। इसे जनपद पंचायत या पंचायत समिति कहते हैं। एक पंचायत समिति में कई ग्राम पंचायतें होती हैं। पंचायत समिति के ऊपर जिला पंचायत जिला परिषद होती है। यह तीसरा स्तर होता है। जिला परिषद एक जिले के स्तर पर विकास की योजनाएं बनाती है। पंचायत समिति की मदद से जिला परिषद सभी पंचायतों में आवंटित राशि के वितरण की व्यवस्था करती है। संविधान में दिए हुए निर्देशों के आधार पर देश के हर राज्य ने पंचायत से जुड़े कानून बनाए हैं। इसलिए पंचायत संबंधी कानून हर राज्य में कुछ अलग अलग हो सकते हैं ।

पंचायती राज चुनाव, पंचायती राज संस्थाओं के तीनों स्तर के चुनाव सीधे जनता करती है। हर पंचायती निकाय की अवधि 5 साल की होती है। यदि प्रदेश की सरकार 5 साल पूरे होने से पहले पंचायत को भंग करती है तो इसके 6 माह के अंदर नए चुनाव हो जाने चाहिए। निर्वाचित स्थानीय निकायों के अस्तित्व को सुनिश्चित रखने वाला यह महत्वपूर्ण प्रावधान है। संविधान के 73वे संशोधन से पहले कई प्रदेशों में जिला पंचायती निकायों के चुनाव अप्रत्यक्ष रीति से होते थे और पंचायती संस्थाओं को भंग करने के बाद तत्काल चुनाव कराने के संबंध में कोई प्रावधान नहीं था

सभी पंचायती संस्थाओं में एक-तिहाई सीट महिलाओं के लिए आरक्षित है। तीनों स्तर पर अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए सीट में आरक्षण की व्यवस्था की गई है। यह व्यवस्था अनुसूचित जाति जनजाति की संख्या के अनुपात में की गई है। यह बात गौरतलब है कि यह आरक्षण पंचायत की मात्र साधारण सदस्यों की सीट तक सीमित नहीं है। तीनों ही स्तर पर अध्यक्ष पद तक आरक्षण दिया गया है। इसके अतिरिक्त सिर्फ सामान्य श्रेणी की सीटों पर ही महिलाओं को एक तिहाई आरक्षण नहीं दिया गया बल्कि अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित सीट पर भी महिलाओं के लिए एक तिहाई आरक्षण की व्यवस्था है। इसका अर्थ यह हुआ की कोई सीट महिला उम्मीदवार और अनुसूचित जाति और जनजाति के सदस्य के लिए साथ साथ आरक्षित की जा सकती है। इस तरह सरपंच का पद कोई दलित अथवा आदिवासी महिला धारण कर सकती है।

v. **संविधान-** संविधान वह दस्तावेज है, जिसमें देश की जनता व सरकार द्वारा पालन किए जाने वाले नियमों और अधिनियम को निरूपित किया गया है। यह दस्तावेज पूर्ण आदर्शों को सूत्रबद्ध करता है जिनके आधार पर नागरिक अपने देश को अपनी इच्छा और सपनों के अनुसार रच सकते हैं यानी संविधान ही बताता है कि हमारे समाज का मूलभूत स्वरूप क्या हो? देश के भीतर आमतौर पर कई समुदाय रहते हैं। उनके बीच कई बातें समान होती हैं लेकिन जरूरी नहीं कि वह सारे मुद्दों पर एक दूसरे से सहमत हूं। संविधान नियमों का एक ऐसा समूह होता है जिसको एक देश के सभी लोग अपने देश को चलाने की पद्धति के रूप में अपना सकते हैं। इसके जरिए बिना

केवल यह तय करते हैं कि सरकार किस तरह की होगी? बल्कि उन आदर्शों पर भी समझ विकसित करते हैं जिनकी हमेशा पूरे देश में रक्षा की जानी चाहिए

संविधान का दूसरा मुख्य उद्देश्य होता है- देश की राजनीतिक व्यवस्था को तय करना। लोकतांत्रिक समाजों में प्रायः संविधान ही ऐसे नियम तय करता है जिनके द्वारा राजनेताओं के अथवा सत्ता के इस दुरुपयोग को रोका जा सकता है। भारतीय संविधान में ऐसे बहुत सारे कानून मौलिक अधिकारों वाले खंड में दिए गए हैं। लोकतंत्र में संविधान का एक महत्वपूर्ण काम यह होता है कि कोई भी ताकतवर समूह किसी दूसरे या कम ताकतवर समूह या लोगों के खिलाफ अपनी ताकत का इस्तेमाल न करें

संविधान क्यों होना चाहिए- इसका महत्वपूर्ण कारण यह है कि हम खुद को अपने आप से बचा सकें यह बात सुनने में जरा अजीब लगती है। असल में इसका मतलब यह है कि कई बार हम किसी मुद्दे पर बहुत तीखे ढंग से सोचने लगते हैं। ऐसे विचार हमारे व्यापक हितों के लिए नुकसानदेह हो सकते हैं। संविधान हमें ऐसी भावनाओं से बचने में मदद करता है, संविधान हमें ऐसे फैसले लेने से भी रोकता है जिनसे उन बड़े सिद्धांतों को ठेस पहुंच सकती है जिनमें देश आस्था रखता है।

बाबा साहेब डॉ॰ अंबेडकर को भारतीय संविधान का जनक कहा जाता है। डॉक्टर अंबेडकर का विश्वास था कि संविधान सभा में उनकी हिस्सेदारी से अनुसूचित जातियों को संविधान के प्रारूप में कुछ सुरक्षात्मक व्यवस्था मिली है लेकिन उन्होंने यह भी कहा था कि भले ही कानून बन गए हो अभी भी अनुसूचित जातियां बेफिक्र नहीं हो सकती क्योंकि इन कानूनों का संचालन हिंदू सवर्ण अधिकारियों के हाथों में ही है। इसलिए उन्होंने अनुसूचित जातियों से आह्वान किया कि वे सरकार के अलावा लोक सेवाओं में भी बढ़-चढ़कर शामिल हो।

vi. **अधिकार एवं कर्तव्य-** अधिकार लोगों के तार्किक दावे हैं। इन्हें समाज से स्वीकृति और अदालतों द्वारा मान्यता मिली होती है। अधिकार किसी व्यक्ति का अपने लोगों अपने समाज और अपनी सरकार से दावा है। सभी खुशी से, बिना डर भय के और अपमानजनक व्यवहार से बचकर जीना चाहते हैं। इसके लिए हम दूसरों से ऐसे व्यवहार की अपेक्षा करते हैं जिससे हमें कोई नुकसान ना हो कोई कष्ट ना हो। इसी प्रकार हमारे व्यवहार से भी किसी को नुकसान नहीं होना चाहिए कोई कष्ट नहीं होना चाहिए। इसलिए अधिकार तभी संभव है जब आपका अपने बारे में किया हुआ दावा दूसरे पर भी समान रूप से लागू हो आप ऐसे अधिकार नहीं रख सकते और दूसरों को कष्ट दे, नुकसान पहुंचाए। आप इस तरह क्रिकेट खेलने के अधिकार का दावा नहीं कर सकते कि पडोसी की खिड़की के शीशे टूट जाए और आपके अधिकार को कुछ ना हो। लोकतंत्र की स्थापना के लिए अधिकारों का होना जरूरी है। लोकतंत्र में हर नागरिक को वोट देने और चुनाव लड़कर प्रतिनिधि चुने जाने का अधिकार है। लोकतंत्र में अधिकारों की एक खास भूमिका भी है। अधिकार बहुसंख्यकों के दमन से अल्पसंख्यकों की रक्षा करते हैं। यह इस बात की व्यवस्था करते हैं कि बहुत संख्यक किसी लोकतांत्रिक व्यवस्था में मनमानी ना करें।

अधिकार स्थितियों के बिगड़ने पर एक तरह की गारंटी जैसे हैं अगर कुछ नागरिक दूसरों के अधिकारों को हड़पना चाहें तो स्थिति बिगड़ सकती है। यह स्थिति आमतौर पर तब आती है जब बहुमत के लोग अल्पमत में आ गए लोगों पर प्रभुत्व कायम करना चाहते हैं। ऐसी स्थिति में सरकार को नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करनी चाहिए लेकिन कई बार चुनी हुई सरकार भी अपने ही नागरिकों के अधिकारों पर हमला करती है या संभव है वह नागरिक के अधिकारों की रक्षा न करें इसलिए कुछ अधिकारों को सरकार से भी ऊंचा दर्जा दिए जाने की जरूरत है ताकि सरकार भी उनका उल्लंघन न कर सके अधिकांश लोकतांत्रिक शासन व्यवस्थाओं में नागरिकों के अधिकार संविधान में लिखित रूप में दर्ज होते हैं।

भारतीय संविधान में मौलिक अधिकार

- **समानता का अधिकार -**हमारा संविधान कहता है कि सरकार भारत में किसी व्यक्ति को कानून के सामने समानता या कानून से संरक्षण के मामले में समानता के अधिकार से वंचित नहीं कर सकती। समानता का मतलब है हर आदमी को उसकी क्षमता के अनुसार काम करने का समान अवसर उपलब्ध कराना है। कई बार अवसर की समानता सुनिश्चित करने भर के लिए ही कुछ लोगों को विशेष अवसर देना जरूरी होता है। आरक्षण यही करता है आप सोच सकते हैं कि आरक्षण की इस तरह की व्यवस्था समानता के अधिकार के खिलाफ है पर असल में ऐसा नहीं है समानता का मतलब है हर किसी से उसकी जरूरत का ख्याल रखते हुए समान व्यवहार करना।
- **स्वतंत्रता का अधिकार-** स्वतंत्रता का मतलब बाधाओं का न होना है। व्यवहारिक जीवन इसका मतलब होता है हमारे मामलों में किसी किस्म का दखल न होना- न सरकार का नही व्यक्तियों का। इसीलिए भारतीय संविधान में प्रत्येक नागरिक को कई तरह की स्वतंत्रता दी है।
- अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, शांतिपूर्ण ढंग से जमा होने की स्वतंत्रता, संगठन और संघ बनाने की स्वतंत्रता, देश में कहीं भी आने जाने की स्वतंत्रता, देश के किसी भी भाग में रहने बसने की स्वतंत्रता और कोई भी काम करने धंधा करने या पेशा करने की स्वतंत्रता।
- **शोषण के खिलाफ अधिकार -**स्वतंत्रता और बराबरी का अधिकार मिल जाने के बाद स्वाभाविक है कि नागरिक को यह अधिकार भी हो की कोई उसका शोषण न कर सके। हमारे संविधान निर्माताओं ने इसे भी संविधान में लिखित रूप से दर्ज करने का फैसला किया ताकि कमजोर वर्गों का शोषण ना हो सके।
- **धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार-** हर किसी को अपना धर्म मानने उस पर आचरण करने और उसका प्रचार करने का अधिकार है। हर धार्मिक समूह या पंथ को अपने धार्मिक कामकाज का प्रबंधन करने की आजादी है जैसा कि हम जानते हैं भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है। धर्मनिरपेक्षता इस सोच पर आधारित है कि शासन का काम व्यक्तियों के बीच के लोगों को ही देखना है। व्यक्ति और ईश्वर के बीच के मामलों को नहीं धर्मनिरपेक्ष शासन वह है जहां किसी भी धर्म को आधिकारिक धर्म की मान्यता नहीं होती है। भारतीय धर्मनिरपेक्षता में सभी धर्मों के प्रति शासन

का समभाव रखना शामिल है। धर्म के मामले में शासन को सभी धर्मों से उदासीन और निरपेक्ष होना चाहिए।

- **सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकार -**नागरिकों में विशिष्ट भाषा या संस्कृति के किसी भी समूह को अपनी भाषा और संस्कृति को बचाने का अधिकार है, किसी भी सरकारी या सरकारी अनुदान पाने वाले शैक्षिक संस्थान मैं किसी नागरिक को धर्म या भाषा के आधार पर दाखिला लेने से नहीं रोका जा सकता, सभी अल्पसंख्यकों को अपनी पसंद का शैक्षिक संस्थान स्थापित करने और चलाने का अधिकार है । मौलिक अधिकार विधायिका, कार्यपालिका और सरकार द्वारा गठित किसी भी अन्य प्राधिकारी की गतिविधियों तथा फैसलों से ऊपर है।

  वर्ष 1976 में संविधान का 42 वां संशोधन किया गया अन्य प्रावधानों के अलावा इस संशोधन से संविधान में नागरिकों के मौलिक कर्तव्यों की एक सूची का समावेश किया गया जिस में कुल 10 कर्तव्यों का उल्लेख किया गया लेकिन इन्हें लागू करने के संबंध में संविधान मौन है नागरिक के रूप में हमें अपने संविधान का पालन करना चाहिए देश की रक्षा करनी चाहिए सभी नागरिकों में भाईचारा बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए तथा पर्यावरण की रक्षा करनी चाहिए ध्यान देने की बात है कि संविधान मौलिक कर्तव्यों के अनुपालन के आधार पर उनकी शर्त पर हमें मौलिक अधिकार नहीं देता। इस दृष्टि से संविधान में मौलिक कर्तव्यों के समावेश से हमारे मौलिक अधिकारों पर कोई प्रतिकूल असर नहीं पड़ा।

vii. **राज्य-** राज्य निश्चित क्षेत्र में फैली राजनैतिक इकाई है जिसके पास संगठित सरकार हो और घरेलू तथा विदेश नीतियों को बनाने का अधिकार हो। सरकारें बदल सकती है पर राज्य बना रहता है। बोलचाल की भाषा में देश, राष्ट्र और राज्य को समानार्थी के रूप में प्रयोग किया जाता है। राज्य शब्द का एक अन्य प्रयोग देश के अंदर की प्रशासनिक इकाइयों या प्रांतों के लिए भी होता है अर्थ में झारखंड राजस्थान त्रिपुरा आदि भी राज्य कहे जाते हैं।

viii. **नागरिकता-** नागरिकता की परिभाषा किसी राजनीतिक समुदाय की पूर्ण और समान सदस्यता के रूप में की गई है। समकालीन विश्व में राष्ट्र ने अपने सदस्यों को एक सामूहिक राजनीतिक पहचान के साथ-साथ कुछ अधिकार भी प्रदान किए हैं। इसलिए हम संबद्ध राष्ट्र के आधार पर अपने को भारतीय, जापानी या जर्मन मानते हैं।

नागरिकता सिर्फ राज्य सत्ता और उसके सदस्यों के बीच के संबंधों का निरूपण नहीं बल्कि उससे अधिक है। यह नागरिकों के आपसी संबंधों के बारे में भी है। इसमें नागरिकों के एक दूसरे के प्रति और समाज के प्रति निश्चित दायित्व शामिल है। इनमें सिर्फ राष्ट्र द्वारा थोपी गई कानूनी बाध्यताएँ नहीं बल्कि समुदाय के साथ जीवन में भागीदार होने और योगदान करने का नैतिक दायित्व भी शामिल होता है। नागरिकों को देश के सांस्कृतिक और प्राकृतिक संसाधनों का उत्तराधिकारी और न्यासी भी माना जाता है।

अभ्यास प्रश्न

7. सरकार किसे कहते हैं?
8. संविधान क्यों आवश्यक है?
9. अधिकार का क्या अर्थ है?

1.7 राजनीति विज्ञान शिक्षण के लक्ष्य और उद्देश्य:

i. **आदर्श नागरिकता-** इस विषय के शिक्षण से छात्रों में उन गुणों का विकास करना है जिनके द्वारा वह आदर्श नागरिक बन सकें आदर्श नागरिकता लोकतान्त्रिक सरकार की सुरक्षा एवं सफलता के लिए आवश्यक है क्योंकि किसी सरकार की सुरक्षा स्थाई तथा सफलता उसके नागरिकों की भक्ति तथा समझदारी पर आधारित है। राजनीति शास्त्र अधिकारों तथा कर्तव्यों के ज्ञान के साथ साथ उनको यह भी सिखाता है कि अधिकारों तथा कर्तव्यों का उपभोग इस प्रकार करना चाहिए जिससे मानव समाज का कल्याण हो छात्रों को दूसरे के अधिकारों को आदर देने की भावना प्रदान करने के लिए प्रशिक्षित करना चाहिए जिससे यह आदर्श नागरिकता प्राप्त कर सके। आदर्श नागरिकता के द्वारा हम अधिक से अधिक मानवों की अधिक भलाई कर सकते हैं। हमारे देश के संदर्भ में आदर्श नागरिकता से तात्पर्य लोकतांत्रिक नागरिकता से है। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने लोकतंत्रीय नागरिकता के अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखा है लोकतंत्र में नागरिकता एक चुनौती पूर्ण दायित्व है जिसके लिए प्रत्येक नागरिक को प्रशिक्षित किया जाता है इस में बहुत से बौद्धिक सामाजिक तथा नैतिक गुण निहित हैं जिनके अपने आप विकसित होने की अपेक्षा नहीं की जा सकती है इन गुणों को विकसित करने के लिए एक विशेष प्रकार का प्रशिक्षण देने की आवश्यकता है। देश के विद्यालयों को इस प्रशिक्षण को प्रदान करने का दायित्व अपने ऊपर लेना होगा।

ii. **नेतृत्व का विकास -**माध्यमिक शिक्षा आयोग का विचार है कि लोकतंत्र सफलता पूर्वक कार्य नहीं कर सकता जब तक उसके किसी वर्ग विशेष को नहीं वरन समस्त लोगों को अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह करने के लिए प्रशिक्षित नहीं किया जाए और इसमें अनुशासन के साथ साथ नेतृत्व का प्रशिक्षण है। नेतृत्व में सामाजिक मामलों की समझदारी तथा नागरिक कुशलता निहित है।

iii. **नागरिक चरित्र -**नागरिक शास्त्र के शिक्षण का प्रमुख उद्देश्य अथवा लक्ष्य अच्छे नागरिक तथा उच्च श्रेणी का नागरिक चरित्र उत्पन्न करना बताया है इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए छात्र विभिन्न शासकीय साधनों जैसे स्थानीय राजकीय तथा संघीय सरकारों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करें। इन साधुओं का स्थायित्व केवल समाज कल्याण के दृष्टिकोण से है यदि इनके द्वारा इस उद्देश्य की प्राप्ति नहीं होती है तो वह निरर्थक है।

iv. **राजनीतिक जागरूकता का विकास -** नागरिक शास्त्र के शिक्षण का एक अन्य लक्ष्य छात्रों को राजनीतिक सजगता तथा चेतनता प्रदान करना है। इसका अर्थ नागरिकों में राजनीतिक सक्रियता तथा सजगता उत्पन्न करना है। राजनैतिक प्रक्रियाओं, संस्थाओं की न केवल जानकारी होना बल्कि उनमें अपनी सहभागिता के लिए तत्पर रहना। आज के विद्यार्थी कल के नागरिक हैं जिन पर समाज के निर्माण तथा उसकी उन्नति का भार है। किसी भी राष्ट्र के प्रजातंत्र की सफलता के लिए राजनीतिक जागरूकता का होना अति आवश्यक है।

v. **सामाजिक कुशलता का विकास -** नागरिक शास्त्र शिक्षण का एक अन्य लक्ष्य छात्रों में सामाजिक कुशलता का विकास करना है। कुशलता के विकास के लिए आर्थिक कुशलता, सामाजिक सजगता, निषेधात्मक नैतिकता, विध्येयात्मक नैतिकता आदि गुणों का विकास आवश्यक है।

vi. **राष्ट्रीय दृष्टिकोण का विकास** - नागरिक शास्त्र का शिक्षण ऐसे दृष्टिकोण से किया जाए जिससे छात्रों में राष्ट्रीय दृष्टिकोण उत्पन्न हो सके अर्थात उनके राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण हो सके। राष्ट्रीय दृष्टिकोण के विकास के लिए छात्रों में निम्नलिखित भावनाओं का विकास करना आवश्यक है-

- अपनी सर्वोत्तम क्षमता के अनुसार देश की सेवा करने की भावना अपने देश की निर्बलताओं को सहर्ष स्वीकार करने की भावना।
- साथ ही निर्बलताओं को दूर करने के लिए प्रेरित करना।
- अपने देश की उपलब्धियों को समझने एवं उनकी सराहना करने की क्षमता का विकास।
- राष्ट्रीय हित के समक्ष अपने व्यक्तिगत हितों को न्योछावर करने की भावना।

vii. **अंतर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण का विकास**- वैज्ञानिक आविष्कारों ने संपूर्ण विश्व को एक बना दिया है। कोई भी राष्ट्र आत्मनिर्भर नहीं है। एक दूसरे से उन्हें सहायता लेनी पड़ती है। इन संबंधों का आधार प्रेम, सहानुभूति, सहयोग तथा सहकारिता होनी चाहिए। राजनीति शास्त्र हमें 'रहो तथा रहने दो' का सिद्धांत सिखाता है। इसके द्वारा हम को अपने छात्रों में अंतरराष्ट्रीय भावना का विकास करना चाहिए। भारत सदैव वसुधैव कुटुंबकम की अवधारणा में विश्वास व्यक्त करता रहा है और आज के भूमंडलीकरण के दौर में भी यह विचार समीचीन है। इस शास्त्र के द्वारा छात्रों में वसुधैव कुटुंबकम की भावना विकसित करनी चाहिए।

viii. **मानसिक शक्तियों का विकास**- नागरिक शास्त्र के शिक्षण का एक अन्य लक्ष्य बालकों की मानसिक शक्तियों का विकास करना है। उनमें कल्पना, तर्क, आलोचना, स्मरण तथा निर्णय आदि शक्तियों को विकसित करना है। नागरिक शास्त्र में ऐसी कोई पाठ्य वस्तु नहीं है जो तर्क रहित हो छात्रों को ऐसे बहुत से अवसर प्राप्त होते हैं जहां उन्हें अपने निर्णय तथा कल्पना शक्ति का प्रयोग करना पड़ता है। समस्याओं का हल निकालने में उनकी मानसिक शक्तियों का भी विकास होता है।

ix. **वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास** -वैज्ञानिक युग की यह प्रबल मांग है कि छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न किया जाए। नागरिक शास्त्र इस मांग को पूर्ण करने में बहुत सहायता प्रदान करता है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अंधविश्वास तथा अवैज्ञानिक वस्तुओं का त्याग करने में समर्थता हासिल हो जाती है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण तभी विकसित होता है। छात्र में निर्णय लेने तथा तर्क शक्तियों को विकसित करने का अवसर प्राप्त होता है।

x. **लोकतांत्रिक मूल्यों का विकास** -राजनीति विज्ञान शिक्षण का एक अन्य लक्ष्य बालकों में लोकतांत्रिक मूल्यों का विकास करना है । यह प्रजातांत्रिक मूल्य हमारे संविधान में उल्लिखित हैं। राजनीति विज्ञान शिक्षण द्वारा छात्रों में सहनशीलता, सहयोग, पारस्परिक विचार विमर्श करने का ढंग, स्वतंत्रता, समता तथा भ्रातृत्व नामक लोकतांत्रिक मूल्यों का विकास किया जाना चाहिए।

राजनीति विज्ञान के शैक्षिक उद्देश्य

ब्लूम तथा उसके साथियों ने उद्देश्यों का जो वर्गीकरण प्रस्तुत किया है। वह मौलिक रूप से तार्किक तथा मनोवैज्ञानिक वर्गीकरण पद्धति का अच्छा मिश्रण है। इस वर्गीकरण में बाल विकास के निम्नलिखित तीन पक्षों को आधार बनाया है-

(1)संज्ञानात्मक पक्ष, (2)भावात्मक पक्ष तथा (3) मनो पेशीय पक्ष

संज्ञानात्मक पक्ष के अंतर्गत ज्ञान का पुण्यस्मरण या पहचान तथा अन्य बौद्धिक योग्यताओं एवं कौशलों का विकास आता है। ब्लूम तथा उसके साथियों ने संज्ञानात्मक पक्ष की प्रक्रियाओं को निम्न वर्गों में रखा है- ज्ञान (Knowledge), बोध (Comprehension), अनुप्रयोग (Application), विश्लेषण (Analysis), संश्लेषण (Synthesis) तथा मूल्यांकन (Evaluation)। इस पक्ष के अंतर्गत राजनीति शास्त्र के तथ्यों पदों संकल्पनाओं सिद्धांतों सामान्य करणु समस्याओं उपकल्पना प्रक्रियाओं आदि का ज्ञान, बोध तथा अज्ञात परिस्थिति में इस ज्ञान एवं समझ का प्रयोग, विश्लेषण संश्लेषण एवं मूल्यांकन योग्यताओं का विकास सम्मिलित होता है।

भावात्मक पक्ष के अंतर्गत रुचियों तथा मूल्यों में परिवर्तन और अनुप्रयोगों का विकास आता है। भावात्मक पक्ष के अंतर्गत निन्नलिखित भावों का विकास- स्वीकार करना (Receiving), ध्यान देना(Attending), संवेदनशीलता अथवा अनुक्रिया(Responding), मूल्य निर्धारण (Valuing), संगठन या व्यवस्था (Organization) मूल्य का लक्षण वर्णन (Characterization of a Value or Value Complex)। इसके अंतर्गत देश तथा विश्व के नागरिकों एवं लोकतांत्रिक राजनीतिक जीवन से संबंधित समस्याओं में अभिरुचि विकसित करना। व्यापक दृष्टिकोण के विकास के लिए आवश्यक एवं वांछित अभिरुचियों का विकास करना, लोकतांत्रिक मूल्यों का विकास करना सम्मिलित होता है

मनोपेशीय पक्ष के अंतर्गत हस्त कौशलों का विकास सम्मिलित है। इस पक्ष को निम्नलिखित पांच उप वर्गों में विभक्त किया गया है- अनुकरण(Imitation), हस्तादि प्रयोग(Manipulation), सुतथ्यता (Precision), संधि योग(Articulation), स्वभावीकरण/नैसर्गीकरण (Naturalization)। इस

पक्ष के अंतर्गत राजनीति विज्ञान के संज्ञानात्मक एवं भावात्मक पक्ष के विकास हेतु अपेक्षित मनो पेशीय पक्षों का विकास सम्मिलित होता है।

अभ्यास प्रश्न

10. राजनीति विज्ञान शिक्षण के लक्ष्यों को सूचीबद्ध कीजिए।
11. राजनीति विज्ञान शिक्षण के संज्ञानात्मक पक्ष के उपवर्ग क्या हैं? लिखिए।

1.8 सारांश

इस इकाई के प्रारंभ राजनीति विज्ञान के मूल संप्रत्य को स्पष्ट करते हुए नागरिक शास्त्र को परिभाषित किया गया है एवं राजनीति विज्ञान की प्रकृति तथा उसका विषय क्षेत्र क्या है? इस पर मुख्य रुप से प्रकाश डाला गया है। प्राचीन चिंतकों के अनुसार राजनीति शास्त्र एक ऐसा विषय माना जाता था जिसके अंतर्गत नगर राज्य की समस्त गतिविधियां एवं क्रियाओं का अध्ययन किया जाता था। आधुनिक चिंतकों के अनुसार राजनीति विज्ञान राज्य सरकार राजनीतिक संस्थाओं, शक्ति सत्ता प्रभाव, राजनैतिक प्रक्रियाओं एवं राजनीतिक बलों का क्रमबद्ध अध्ययन है। राजनीति विज्ञान के अर्थ को समझने के उपरांत आपने अध्ययन किया कि राजनीति विज्ञान की प्रकृति विज्ञान एवं कला दोनों है। राजनीति शास्त्र को विज्ञान की श्रेणी में इसलिए रखा जाता है क्योंकि राजनीति विज्ञान से संबंधित समस्याओं का अध्ययन एवं उनका समाधान वैज्ञानिक विधियों के माध्यम से किया जाता है तथा यह शास्त्र नागरिकों के जीवन की समस्याओं के व्यवहारिक हल प्रदान करने पर भी बल देता है इस कारण यह कला भी है। राजनीति विज्ञान के विषय क्षेत्र के अंतर्गत यह स्पष्ट किया गया कि राजनीति विज्ञान न केवल मानव के तीनों कालों- भूतकाल वर्तमान काल भविष्य काल से संबंधित है बल्कि मानव के समस्त पक्षों यथा बौद्धिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक से संबंधित स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों को भी सम्मिलित किया जाता है।

इस इकाई के अंतर्गत आपने राजनीति विज्ञान के कुछ महत्वपूर्ण संप्रत्यय यथा सरकार, संविधान, नागरिकता, राज्य, अधिकार एवं कर्तव्य, पंचायत के अर्थ को भी समझा तथा इकाई के अंत में राजनीति विज्ञान शिक्षण के लक्ष्यों- लोकतांत्रिक नागरिकता का विकास, नेतृत्व का विकास, राष्ट्रीय चरित्र का विकास, लोकतांत्रिक मूल्यों का विकास, राजनीतिक जागरूकता का विकास, सामाजिक कुशलता का विकास, अंतरराष्ट्रीय भावना का विकास का भी विस्तृत अध्ययन किया तथा नागरिक शास्त्र शिक्षण के अनुदेशनात्मक उद्देश्य को ब्लूम के वर्गीकरण के संदर्भ में स्पष्ट किया गया जिसमें विकास के तीनों पक्षों संज्ञानात्मक भावात्मक एवं मनु पेशीय के माध्यम से संबंधित ज्ञान दृष्टिकोण भाव कौशलों एवं योग्यताओं को स्पष्ट किया गया।

1.9 शब्दावली

1. **राजनीति विज्ञान**: राजनीति विज्ञान राज्य सरकार, राजनीतिक संस्थाओं, शक्ति सत्ता प्रभाव, राजनैतिक प्रक्रियाओं एवं राजनीतिक बलों का क्रमबद्ध अध्ययन है।
2. **लोकतन्त्र:** लोकतंत्र शासन का एक ऐसा रूप है जिसमें शासकों का चुनाव लोग करते हैं।
3. **सरकार:** संस्थाओं का ऐसा समूह जिसके पास देश में व्यवस्थित जनजीवन सुनिश्चित करने के लिए कानून बनाने लागू करने और उसकी व्याख्या करने का अधिकार होता है। व्यापक अर्थ में सरकार किसी देश के लोगों और संसाधनों को नियंत्रित और उनकी निगरानी करती है।
4. **पंचायत:** पंचायती राज व्यवस्था एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा लोग अपनी सरकार में भाग लेते हैं पंचायती राज व्यवस्था लोकतांत्रिक सरकार की पहली सीढी है।
5. **संविधान:** देश का सर्वोच्च कानून इसमें किससे देश की राजनीति और समाज को चलाने वाले मौलिक कानून होते हैं।
6. **अधिकार:** अधिकार लोगों के तार्किक दावे हैं इन्हें समाज से स्वीकृति और अदालतों द्वारा मान्यता मिली होती है।
7. **कर्तव्य:** कर्तव्य मनुष्यों द्वारा स्वतः किया जाने वाला समाज सम्मत मूल्यनिष्ठ व्यवहार है।
8. **राज्य:** राज्य एक ऐसी राजनीतिक संस्था होती है जो निश्चित भूभाग मे रहने वाले संप्रभु लोगो का प्रतिनिधित्व करती है । सरकार राज्य का एक हिस्सा होती है।
9. **नागरिकता:** किसी राजनीतिक समुदाय की पूर्ण और समान सदस्यता।

1.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. राजनीति शास्त्र शब्द की उत्पत्ति यूनानी शब्द 'पोलिस' शब्द से मानी जाती है।
2. राजनीति विज्ञान राज्य सरकार राजनीतिक संस्थाओं शक्ति सत्ता प्रभाव राजनैतिक प्रक्रियाओं एवं राजनीतिक बलों का क्रमबद्ध अध्ययन है।
3. राजनीति विज्ञान में समस्याओं का अध्ययन एवं समाधान वैज्ञानिक विधि के द्वारा किया जाता है। इस कारण यह विज्ञान की श्रेणी में रखा जा सकता है।
4. राजनीति विज्ञान सफल नागरिक जीवन जीने हेतु आवश्यक ज्ञान, कौशल एवं योग्यता से सुसज्जित करता है इसलिए इसे कला की श्रेणी में रखा जाता है।
5. राजनीति विज्ञान में मनुष्य को एक सामाजिक प्राणी के रूप में अध्ययन किया जाता है। मनुष्य के सामाजिक सदस्य होने के नाते क्या कर्तव्य एवं अधिकार हैं? यह अध्ययन किया जाता है और इस कारण इसे सामाजिक विज्ञान कहा जाता है।
6. नागरिकों से संबंधित सभी पक्षों (सामाजिक, बौद्धिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा धार्मिक पक्षों का प्रतिपादन करता है) चाहे वह भूतकाल वर्तमान तथा भविष्य से संबंधित हो चाहे स्थानीय, राष्ट्रीय तथा मानवीय हो। यही विषय वस्तु है।

7. सरकार व्यक्तियों एवं संस्थाओं का ऐसा समूह जिसके पास देश में व्यवस्थित जनजीवन सुनिश्चित करने के लिए कानून बनाने, लागू करने और उसकी व्याख्या करने का अधिकार होता है।
8. हम खुद को अपने आप से बचा सकें यह बात सुनने में जरा अजीब लगती है असल में इसका मतलब यह है कि कई बार हम किसी मुद्दे पर बहुत तीखे ढंग से सोचने लगते हैं ऐसे विचार हमारे व्यापक हितों के लिए नुकसानदेह हो सकते हैं संविधान हमें ऐसी भावनाओं से बचाने में मदद करता है संविधान हमें ऐसे फैसले लेने से भी रोकता है जिनसे उन बड़े सिद्धांतों को ठेस पहुंच सकती है जिनमें देश आस्था रखता है।
9. अधिकार लोगों के तार्किक दावे हैं इन्हें समाज से स्वीकृति और अदालतों द्वारा मान्यता मिली होती है।
10. राजनीति विज्ञान शिक्षण के प्रमुख लक्ष्य हैं- लोकतान्त्रिक नागरिकता का विकास, राष्ट्रीय चरित्र का विकास, नेतृत्व का विकास, वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास, सामाजिक कुशलता का विकास, राजनैतिक जागरूकता का विकास, अंतर्राष्ट्रीयता की भावना का विकास।
11. राजनीति विज्ञान शिक्षण के संज्ञानात्मक पक्ष के उपवर्ग- ज्ञान, अवबोध, अनुप्रयोग, विश्लेषण, संश्लेषण एवं मूल्यांकन हैं।

1.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. त्यागी, जी.डी. (2014). सामाजिक अध्ययन शिक्षण का प्रणाली विज्ञान. आगरा: अग्रवाल पब्लिकेशन.
2. त्यागी, जी.डी. (2011). नागरिक शास्त्र का शिक्षण. आगरा: विनोद पुस्तक मंदिर.
3. सक्सेना,सरोज. (2007). नागरिक शास्त्र का शिक्षण. आगरा: साहित्य प्रकाशन.

1.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. भूमंडलीकरण के दौर में राजनीति विज्ञान के समक्ष एक विषय के रूप में वर्तमान में क्या चुनौतियाँ हैं?
2. राजनीति विज्ञान शिक्षण के लक्ष्यों को निर्धारित कारकों की व्याख्या कीजिए

इकाई 2- राजनीति विज्ञान में कौशलों (अवलोकन, तथ्यों का अभिलेखन एवं निर्वचन) का विकास; राजनीति विज्ञान शिक्षण में उपागम (आगमनात्मक, निगमनात्मक, अन्तर-अनुशासनात्मक, रचनात्मक इत्यादि), विधि एवं रणनीतियां (व्याख्यान, अभिनयीकरण, परियोजना, समस्या समाधान, परिचर्चा द्वारा अधिगम, सामाजिक अन्वेषण) और संसाधन (भारत का संविधान, एटलस, राजनैतिक मानचित्र-विश्व, एशिया, भारत, प्रदेश, जिले; ग्लोब, समाचार पत्र, समाचार पत्रिका, पुस्तकें, टेलीविज़न, रेडियो इत्यादि)

Developing Skills (Observation, Recording and Interpretation of Phenomena etc.) in Political Science; Approaches (Inductive, Deductive, Inter-disciplinary, Constructive), Method & Techniques (Lecture, Dramatization, Project, Problem Solving, Learning by discussing, Social Inquiry) and Resources (Constitution of India, Atlas, Political Maps- World, Asia, India, States, Districts; Globe, News papers, News Magazines, Textbooks, TV, Radio etc.) in teaching of Political Science

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 राजनीति विज्ञान शिक्षण में कौशलों का विकास

2.4 राजनीति विज्ञान शिक्षण में उपागम

2.4.1 आगमनात्मक उपागम

2.4.2 निगमनात्मक उपागम

2.4.3 अंतर- अनुशासनात्मक उपागम

2.4.4 रचनात्मक उपागम

2.5 राजनीति विज्ञान शिक्षण की विधियाँ एवं प्रविधियाँ

2.5.1व्याख्यान विधि

2.5.2 परियोजना विधि

2.5.3 समस्या समाधान विधि

2.5.4 अभिनयीकरण विधि

2.5.5 परिचर्चा विधि

2.6 राजनीति विज्ञान में शिक्षण में संसाधन

2.7 सारांश

2.8 शब्दावली

2.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

2.12 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

किसी भी विषय के प्रभावशाली शिक्षण हेतु आवश्यक है कि विद्यार्थियों में कुछ आवश्यक कौशल विकसित किए जाएं जिसके माध्यम से वह आसानी से उस विषय की विषय वस्तु को न केवल याद कर सकें बल्कि समझ विकसित कर उसका अनुप्रयोग नवीन परिस्थिति में कर सकें। सामाजिक विज्ञानों की प्रकृति के अनुकूल विद्यार्थियों में अवलोकन तथा तथ्य अभिलेखन एवं निर्वचन कौशल विकसित होना जरूरी माना जाता है। इसके उपरांत राजनीति विज्ञान शिक्षक के लिए यह महत्वपूर्ण प्रश्न होता है की वर्तमान में प्रचलित किस उपागम अथवा उपागमो के द्वारा शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को संपादित किया जाए। मनोवैज्ञानिकों एवं शिक्षाविदों द्वारा विभिन्न विषयों हेतु सुझाए गए उपागमो की व्यापक समझ भी राजनीति विज्ञान शिक्षक को होना आवश्यक है जिससे कि वह प्रकरण के अनुसार उपागम का चयन कर शिक्षण उद्देश्यों को प्राप्त कर सके। राजनीति विज्ञान शिक्षक इन्हीं उपागमो के आलोक में निश्चित समय अवधि में विद्यार्थियों के अंदर अपेक्षित ज्ञान और कौशल विकसित करने के लिए उचित शिक्षण विधियों का चुनाव करता है। सामाजिक विज्ञानों में व्याख्यान, प्रोजेक्ट, समस्या समाधान, अभिनयीकरण, परिचर्चा

इत्यादि महत्वपूर्ण शिक्षण विधियां मानी जाती हैं। विद्यार्थियों में अपेक्षित कौशल विकसित करना एवं प्रभावशाली शिक्षण विधियों का चयन करना संपूर्ण रूप से शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को तब तक प्रभावशाली एवं सार्थक नहीं बना सकता जब तक की शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में विद्यार्थियों की अधिकाधिक ज्ञानेंद्रियों को सक्रिय कर संलग्न करने की व्यवस्था न की जाए। इस हेतु श्रव्य- दृश्य शिक्षण सहायक सामग्री का प्रयोग अधिगम प्रक्रिया को सरल, रुचिकर, जीवंत एवं प्रभावशाली बनाता है। विषयवस्तु की आवश्यकता के अनुसार शिक्षण प्रक्रिया के दौरान उचित समय पर प्रयोग में लाए गए संसाधन शिक्षक को उद्देश्यों की प्राप्ति में हमेशा सहायक साबित होते हैं। इस इकाई के अंतर्गत आप उपरिवर्णित राजनीति विज्ञान से संबंधित कौशलों, उपागमो, शिक्षण विधियों एवं संसाधनों का विस्तृत अध्ययन करेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के अध्ययन के उपरांत विद्यार्थी

1. अवलोकन कौशल का संप्रत्यय स्पष्ट कर सकेंगे।
2. तथ्यों के अभिलेखन एवं निर्वचन कौशल प्रदर्शित कर सकेंगे।
3. आगमनात्मक, निगमनात्मक, अन्तर-अनुशासनात्मक, रचनात्मक इत्यादि उपगमों का राजनीति विज्ञान शिक्षण में किस प्रकार प्रयोग किया जाए? यह स्पष्ट कर सकेंगे।
4. राजनीति विज्ञान शिक्षण में विभिन्न विधियों यथा व्याख्यान, अभिनयीकरण, प्रोजेक्ट, समस्या समाधान, संवाद एवं सामाजिक अन्वेषण के उपयोग संबंधी गुणों एवं दोषों की व्याख्या कर सकेंगे।
5. राजनीति विज्ञान शिक्षण में विभिन्न संसाधनों का उपयोग किस प्रकार किया जाए? यह स्पष्ट कर सकेंगे।

2.3 राजनीति विज्ञान शिक्षण में कौशलों का विकास:

अवलोकन:

ज्ञानार्जन के दो सबसे प्रभावशाली माध्यम हैं: प्रथम -प्रश्न पूछना एवं द्वितीय -अवलोकन। विद्यार्थी जब किसी वस्तु व्यक्ति या घटना का प्रत्यक्ष अवलोकन करता है उस समय उसकी ज्ञानेंद्रियां सक्रिय एवं संलग्न होकर ज्ञानार्जन करती है। अवलोकन में विद्यार्थी स्वयं क्रियाशील रहकर किसी तथ्य का पता लगाता है। और जो ज्ञान तथ्य विद्यार्थी निरीक्षण या अवलोकन द्वारा प्राप्त करता है वह स्थाई होता है । लक्ष्य वस्तु, व्यक्ति या घटना के सभी संबंधित भागो, उप भागो, विषयों का प्रत्यक्षीकरण करना अवलोकन की श्रेणी में आता है। अवलोकन के दौरान विद्यार्थी की जिम्मेदारी अधिक होती है और अवलोकन से व्यवहारिक एवं जीवंत ज्ञान आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। अवलोकन कौशल के अंतर्गत ही निर्णय लेने, चिंतन करने तथा स्वतंत्र अभिव्यक्ति करने की कला का भी विकास होता है।

राजनीति विज्ञान विषय की माध्यमिक स्तर की विषय वस्तु एवं पाठ्य सामग्री इस प्रकार की है जिसमें कई संप्रत्ययों को अवलोकन के माध्यम से विद्यार्थियों को समझाया जा सकता है। लोकसभा राज्यसभा एवं न्यायालय की कार्य वाही के अवलोकन के माध्यम से राजनीति विज्ञान के विद्यार्थियों को ज्ञान प्रदान किया जाना इस कौशल के विकास हेतु अच्छा उदाहरण हो सकता है।

तथ्यों का अभिलेखन एवं निर्वचन

राजनीति विज्ञान में कई संप्रत्यय एवं प्रक्रियाएं ऐसी हैं जिनसे संबंधित तथ्यों का अभिलेखन एवं निर्वचन करना आवश्यक होता है। तथ्यों की अभिलेखन से तात्पर्य किसी राजनैतिक अथवा लोकतांत्रिक प्रक्रिया मैं सन्निहित महत्वपूर्ण तथ्यों को पहचानकर लिपिबद्ध करना जैसे लोकसभा चुनाव परिणामों को संसदीय क्षेत्र वार लिपिबद्ध करना। समाचार पत्रों की ऐसी खबरों जिनमें किसी जाति विशेष अथवा समुदाय विशेष के अधिकारों का हनन हुआ होसे महत्वपूर्ण तथ्यों की पहचान एवं उन तथ्यों का अभिलेखन का कौशल राजनीति विज्ञान पढ़ने वाले विद्यार्थियों मैं होना आवश्यक है। तथ्यों के निर्वचन से तात्पर्य तथ्यों के बीच अंतर्निहित संबंधों यथा कार्य-कारण संबंध, विभिन्नता, समानता, असमानता, अंतर इत्यादि की चर्चा एवं व्याख्या करना। उदाहरण स्वरुप किसी चुनाव के परिणामों के आधार पर बहुमत प्राप्त करने वाले राजनीतिक दल की जीत से संबंधित तथ्यों का निर्वचन करना। न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों का अन्य समान परिस्थितियों हेतु निर्वचन करना।

अभ्यास प्रश्न

1. राजनीति विज्ञान के किन प्रकरणों को अवलोकन के माध्यम से पढ़ाया जा सकता है ?
2. तथ्यों का अभिलेखन क्यों महत्वपूर्ण है ?

2.4 राजनीति विज्ञान शिक्षण में उपागम

राजनीति विज्ञान शिक्षण में कक्षा में कई उपागमों का प्रयोग किया जाता है जिससे शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को सरल, रोचक बनाया जा सके। कुछ उपागमों का विवरण नीचे वर्णित हैं।

2.4.2 आगमनात्मक उपागम

राजनीति विज्ञान शिक्षण में आगमनात्मक उपागम का उपयोग किया जाता है इस उपागम के अंतर्गत विद्यार्थी विशिष्ट से सामान्य की ओर अग्रसर होते हैं। विभिन्न विशिष्ट स्थितियों अथवा तथ्यों मैं छुपे उभयनिष्ठ तत्व एवं कारकों के आधार पर सामान्य निष्कर्ष पर पहुंचना आगमनात्मक उपागम है। दूसरे शब्दों में विद्यार्थी विशिष्ट उदाहरणों का निरीक्षण करके अपनी सूझ-बूझ के द्वारा सामान्य नियमों एवं संप्रत्यय का प्रतिपादन करता है। इस उपागम के अंतर्गत विद्यार्थी स्वयं क्रियाशील रहकर अवलोकन, तर्क तथा विवेचन के आधार पर पहले विशिष्ट उदाहरणों को संकलित करते हैं फिर उनमें समानता एवं उभयनिष्ठता देखकर सामान्य निष्कर्षों पर पहुंचने का प्रयास करते हैं। शिक्षक का कार्य उपयुक्त परिस्थिति

का निर्माण करना अर्थात विशिष्ट उदाहरणों को संकलित करने में तथा घनिष्ठता की खोज में सहायता करना मात्र होता है। इस उपागम के माध्यम से शिक्षण करते समय विद्यार्थियों की पाठ में पर्याप्त रुचि बनी रहती है। विद्यार्थियों में राजनीतिक सिद्धांतों की समझ विकसित करने के लिए आगमन उपागम का प्रयोग किया जाना उचित होगा।

इस उपागम का प्रयोग तभी सफल हो सकता है जब दिए गए उदाहरण विद्यार्थियों के मानसिक स्तर, अवस्था और पिछली कक्षा में अर्जित ज्ञान से संबंधित हो और इस हेतु अध्यापक को यह प्रयास करना चाहिए कि वह विद्यार्थियों के मानसिक स्तर, अवस्था और पिछली कक्षा में अर्जित ज्ञान के विषय में पूरी जानकारी रखे। राजनीति विज्ञान शिक्षक द्वारा कक्षा शिक्षण के दौरान अधिक से अधिक उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिए क्योंकि कभी-कभी कम उदाहरणों के आधार पर विद्यार्थियों द्वारा गलत निष्कर्ष पर पहुंचने की संभावना रहती है।

इस उपागम के माध्यम से शिक्षण करने में अधिक समय लगता है परंतु इसका लाभ है यह है कि इसमें विद्यार्थी मानसिक रूप से सक्रिय रहते हैं और स्वयं निष्कर्ष तक पहुंचने की कोशिश करते हैं वह अपने पूर्व ज्ञान पर आधारित अनुभव के द्वारा सामान्य करण की कोशिश करते हैं इसलिए उनका अधिगम अपेक्षाकृत स्थाई होता है।

लाभ:

1. यह उपागम विद्यार्थियों को स्व अधिगम के लिए प्रेरित करता है।
2. यह उपागम विद्यार्थियों को अवलोकन, चिंतन एवं मनन करने का अवसर प्रदान कर मानसिक विकास करता है।
3. यह उपागम मूर्त से अमूर्त शिक्षण सूत्र का अनुप्रयोग करता है इस कारण शिक्षण सरल एवं वास्तविक होता है
4. अधिगम विद्यार्थी केंद्रित होता है
5. यह उपागम विद्यार्थियों की समझ को विकसित करने का प्रयास करता है
6. विद्यार्थियों का आत्मविश्वास बढ़ता है

सीमायें:

1. विद्यार्थियों द्वारा स्वयं निष्कर्ष पर पहुंचने के प्रयास के कारण शिक्षकों हेतु यह समय-साध्य और श्रम-साध्य है।
2. छोटी कक्षओं के विद्यार्थियों के साथ इस उपागम का प्रयोग नहीं किया जा सकता क्योंकि मानसिक स्तर पर वे इतने विकसित नहीं होते हैं ।
3. शिक्षकों द्वारा कम उदाहरणों के प्रस्तुत किए जाने पर गलत सामान्यीकरण की संभावना रहती है।

2.4.2 निगमनात्मक उपागम

इसमें सामान्य से विशिष्ट की ओर अग्रसर होते हैं। इसमें शिक्षक सर्वप्रथम तथ्य, संकल्पनाओं, सामान्य नियम एवं सिद्धांतों विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत करता है तथा इसके पश्चात विभिन्न उदाहरणों के द्वारा उस नियम अथवा सिद्धांत की सत्यता को प्रमाणित करता है एवं विशिष्ट परिस्थितियों में उसके उपयोग को बताता है इससे यह स्पष्ट है कि यह उपागम आगमनात्मक उपागम के विपरीत होता है। इस उपागम के माध्यम से शिक्षण करने पर विद्यार्थी नियमों एवं सिद्धांतों का अन्वेषण नहीं करता है परिणामतः वह शिक्षण अधिगम में क्रियाशील नहीं रहता है।

उदाहरणतः- राजनीति विज्ञान विज्ञान का शिक्षक अपनी कक्षा में यह बताता है कि लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में नागरिकों को स्वतंत्रता मिलती है। भारत लोकतांत्रिक व्यवस्था है इस कारण भारत के नागरिकों को भी स्वतंत्रता प्राप्त है।

लाभ:

1. शिक्षण कार्य को शीघ्रता की दृष्टि से आयोजित करने हेतु उपयुक्त मानी जाती है
2. औसत तथा औसत से नीचे विद्यार्थियों के लिए भी काफी उपयोगी सिद्ध होती है
3. उच्च कक्षाओं में निगमन विधि का प्रयोग अधिक उपयोगी साबित हो सकता है। उच्च कक्षाओं में आगमन विधि द्वारा कार्य करने से बहुत सा समय व्यर्थ नष्ट हो जाता है।

सीमायें:

1. यह उपागम रटने की प्रवृत्ति को बढ़ावा देता है जिस कारण विद्यार्थी सिद्धांतों या नियमों को रट लेते हैं और उनसे संबंधित उदाहरणों को भी रख लेते हैं। इस कारण समझ विकसित करने में कठिनाई होती है।
2. विद्यार्थियों में निष्क्रियता एवं शिक्षक पर निर्भरता की प्रवृत्ति बढ़ जाती है

2.4.3 अन्तर-अनुशासनत्मक उपागम

प्रसिद्ध शिक्षाविद जैकटाट के अनुसार ज्ञान परस्पर संबंधित है, वह एक है, विभाजन केवल सुविधा मात्र है।

समस्त विषय प्राकृतिक रूप से परस्पर संबंधित है जीवन की विविध समस्याओं के समाधान हेतु किसी एक विषय का ज्ञान उपयोगी नहीं हो सकता है और ना ही विभिन्न विषयों का ज्ञान पृथक रूप से दिए जाने पर वह उपयोगी साबित होगा। किसी एक विषय का शिक्षण करते समय अन्य विषयो का ज्ञान प्रदान किया जाना भी महत्वपूर्ण होता है।

शिक्षा में अंतर अनुशासनात्मक उपागम का आशय है कि विद्यार्थियों में किसी संप्रत्यय की समझ विकसित करने के दौरान दो या दो से अधिक विषयों की विषय वस्तु का सहारा लेना । किसी समस्या के समाधान अथवा नवीन ज्ञान के सृजन हेतु एक ही विषय पर निर्भर न रहना और उस विषय की सीमाओं से पार जाकर अन्य विषयों के संदर्भों में को भी जोड़ना ही अंतर अनुशासनात्मक उपागम मूल मंतव्य है। विभिन्न विषयों को इस प्रकार पढ़ाना कि उनसे प्राप्त ज्ञान में पारस्परिक संबंध हो। एक विषय

को पढ़ाते समय कभी कभी ऐसे संदर्भ आ जाते हैं जो दूसरे विषयों से संबंधित होते हैं हम इन संदर्भों को परस्पर सह-संबंधित कर दें। नागरिक शास्त्र मानव की सामाजिक जीवन से संबंध रखता है इसीलिए इसमें जीवन के प्रत्येक अंग पर विचार किया जाता है प्रत्येक शास्त्र का अध्ययन नागरिक के जीवन पर एक विशेष प्रभाव डालता है अतः सामाजिक जीवन में एक संगठित तथा दृढता है और इसी एकीकरण को जानने के लिए हम विभिन्न सामाजिक शास्त्रों का अध्ययन करते हैं। नागरिक शास्त्र का मुख्य उद्देश्य आदर्श नागरिकता उत्पन्न करना है। इसकी प्राप्ति हम तभी कर सकते हैं जब नागरिक शास्त्र के शिक्षण का दूसरे विषयों से संबंध स्थापित किया जाए क्योंकि सामाजिक जीवन के अनेक पहलू हैं जैसे- आर्थिक, भौगोलिक, राजनीतिक, सामाजिक आदि।

लाभ:

1. अंतर अनुशासनात्मक उपागम से प्राप्त ज्ञान अपेक्षाकृत स्थाई होता है।
2. यह विद्यार्थियों को अल्प समय में अधिक ज्ञानार्जन करने में सक्षम बनाता है।
3. यह उपागम विद्यार्थियों में अध्ययन के प्रति रुचि उत्पन्न करता है।
4. यह उपागम पाठ्यक्रम की जटिलता को सरल करके विद्यार्थियों पर उसके भार को कम करता है।
5. यह उपागम ज्ञान को विस्तृत एवं व्यापक परिप्रेक्ष्य में विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत करता है।
6. इस उपागम के माध्यम से शिक्षण करने पर विद्यार्थी अपने जीवन से संबंधित आवश्य ज्ञान आसानी से प्राप्त कर लेता है ।
7. यह विषयों की अधिकता को कम करने में सहायक होता है
8. विद्यार्थी कार्य कारण संबंध स्थापित करने में सहजता महसूस करते हैं।
9. अधिगम का स्थानांतरण एवं अन्य परिस्थिति में अनुप्रयोग करने में विद्यार्थी दक्ष हो जाता है।

सीमायें:

- अंतर अनुशासनात्मक उपागम के माध्यम से शिक्षण कार्य करना शिक्षकों के लिए कठिन कार्य है।

2.4.4 रचनात्मक उपागम

रचनात्मक उपागम के अंतर्गत विद्यार्थियों को ज्ञान के एक 'निष्क्रिय ग्रहण कर्ता' के बजाए 'सक्रिय निर्माता' के रूप में देखा जाता है। विद्यार्थी शिक्षकों द्वारा निर्देशित पूर्व निर्मित ज्ञान को यथावत ग्रहण नहीं करता अपितु अपने अनुभव एवं प्रत्यक्षीकरण के आधार पर स्वयं के लिए ज्ञान की रचना करता है। उसके द्वारा रचित यह ज्ञान विभिन्न स्रोतों से विकसित उसकी समझ एवं परिस्थितिजन्य अनुभवों पर आधारित होता है। इस उपागम के आधार पर शिक्षण प्रदान करते समय विद्यार्थियों के समक्ष विषय वस्तु को छोटे-छोटे हिस्सों में प्रस्तुत करने के बजाय समग्र रूप से प्रस्तुत करना होता है।इसमें शिक्षक का यह प्रयास होता है कि विद्यार्थियों को वास्तविक अनुभव प्रदान किए जाए एवं अनुभवों पर उनका दृष्टिकोण विकसित किया जाए साथ ही साथ उस विषय वस्तु का सामाजिक परिप्रेक्ष्य स्पष्ट किया जाए। इस उपागम

के अंतर्गत विद्यार्थियों को प्रयोग करने, प्रोजेक्ट कार्य करने, चर्चा एवं संवाद करने तथा क्षेत्र भ्रमण करने के अवसर प्रदान किए जाते हैं।

राजनीति विज्ञान एक सामाजिक विज्ञान है जिसके माध्यम से विद्यार्थियों को सक्रिय संवेदनशील एवं जिम्मेदार (आदर्श) नागरिक बनाने का प्रयास किया जाता है। जिम्मेदार नागरिक वह तभी बन सकता है जब वह विद्यार्थी के रूप में सक्रिय रूप से पूरी जिम्मेदारी के साथ ज्ञान के सृजन एवं अनुशीलन में संलग्न हो। राजनीति विज्ञान की विषय वस्तु वस्तु एवं गतिविधियों का स्वरूप एसा है जिसमें विद्यार्थियों हेतु रचनात्मक उपागम का उपयोग करने के भरपूर अवसर उपलब्ध हैं। राजनीति विज्ञान के शिक्षक की भी यह जिम्मेदारी है कि वह लोकतांत्रिक वातावरण का निर्माण करे, वह भी अधिगम कर्ताओं की टीम का एक सक्रिय सदस्य हो, ज्ञान के सृजन में विद्यार्थियों के सहायक के तौर पर कार्य करें।

लाभ:

1. अधिगमकर्ता सक्रिय होकर सीखता है।
2. विद्यार्थी ज्ञान का सृजन स्वयं करते हैं इस कारण अर्जित ज्ञान स्थाई होता है।
3. विद्यार्थी का एक अन्वेषण कर्ता के रूप में प्रशिक्षण हो जाता है।
4. यह उपागम रटने की बजाय समझ को विकसित करने पर बल देता है।
5. विद्यार्थियों में स्वतंत्र चिंतन, निर्णय लेने की क्षमता का विकास होता है।

सीमायें:

i. इस उपागम की सफलता शिक्षकों पर निर्भर करती है । राजनीति विज्ञान की विषय वस्तु के शिक्षण हेतु सभी शिक्षक इतने समर्थ हैं कि इस उपागम का प्रयोग सफलतापूर्वक कर सकें ।

ii. उपागम के माध्यम से शिक्षण करने में समय अधिक खर्च होता है।

अभ्यास प्रश्न:

3. आगनात्मक उपागम एवं निगमनात्मक उपागम में क्या अंतर है?
4. रचनात्मक उपागम की विशेषताएं लिखिए।

2.5 राजनीति विज्ञान शिक्षण की विधियाँ एवं प्रविधियाँ:

राजनीति विज्ञान एक सामाजिक विज्ञान है। राजनीति विज्ञान में भी विद्यार्थी केंद्रित शिक्षण विधियों को अपनाने पर बल दिया जाता है। ऐसी विधियां जिनके माध्यम से विद्यार्थी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सक्रिय रुप से सहभागिता करते हैं एवं चर्चा अथवा क्रिया आधारित ज्ञान प्राप्त करते हैं। आइए अब हम राजनीति विज्ञान शिक्षण की कुछ महत्वपूर्ण शिक्षण विधियों की चर्चा करते हैं।

2.5.2 व्याख्यान विधि

रिस्क महोदय के अनुसार व्याख्यान उन तथ्यों, सिद्धांतों तथा संबंधों को स्पष्ट करता है जिनको अध्यापक चाहता है कि उसको सुनने वाले समझें। व्याख्यान से तात्पर्य शब्दों के माध्यम से पाठ्य वस्तु को प्रस्तुत करने से होता है। यह एक शिक्षक प्रधान विधि है भारतवर्ष में गुरुकुल प्रणाली में इसका प्रयोग होता था इसे कथन पद्धति भी कहते हैं।

इस संबंध में प्रसिद्ध विचारक वेस्ले ने कहा है की व्याख्यान विधि का प्रयोग करने हेतु चार आवश्यक परिस्थितियां हैं-

1. बालक को प्रेरित करना
2. पाठ को स्पष्ट करना
3. पाठक का पुनरावलोकन करना
4. विषय वस्तु का विस्तार करना

सामान्यतया हमें व्याख्यान विधि का प्रयोग निम्नलिखित परिस्थितियों में करना चाहिए-

1. विषय की बड़ी इकाई प्रकरण अथवा पाठ्यवस्तु के बड़े हिस्से पर विहंगम दृष्टि प्रदान करने हेतु।
2. नवीन प्रकरण की उपयुक्त भूमिका बनाने के लिए।
3. पाठ्यवस्तु का सारांश प्रस्तुत करने हेतु।
4. छात्रों में विषय के प्रति रुचि उत्पन्न करने हेतु।
5. उच्च मानसिक स्तर के विद्यार्थियों को कम समय में विषय ज्ञान प्रदान करने हेतु

गुण:

1. कम समय में अधिक विषय वस्तु को प्रस्तुत करने में सक्षम है।
2. विद्यार्थियों में सुनने की आदत का विकास करती है यह विधि कम खर्चीली क्या मितव्यई है।
3. इसके द्वारा छात्रों की तर्क शक्ति का विकास किया जा सकता है।
4. इसके द्वारा पाठ्यवस्तु के कठिन एवं जटिल बिंदुओं को सरलता से स्पष्ट किया जा सकता है।
5. उच्च मानसिक स्तर के विद्यार्थियों के लिए उपयोगी विधि है।

अवगुण:

1. यह विधि विद्यार्थियों को निष्क्रिय श्रोता बना देती है।
2. करके सीखने के सिद्धांत के लिए कोई स्थान नहीं है।
3. यह विधि विषय के सैद्धांतिक पक्ष पर अधिक बल देती है।
4. विद्यार्थियों को मौलिक चिंतन करने के लिए अवसर नहीं मिल पाता है।
5. विद्यार्थियों में स्वाध्याय की आदत का निर्माण करने में यह विधि असफल है।
6. यह शिक्षक नियंत्रित विधि है इसमें शिक्षक ही केंद्र बिंदु के रूप में कार्य करता है।
7. निम्न स्तर के विद्यार्थियों के लिए उपयोगी नहीं है।
8. प्रदान किया गया ज्ञान अधिक स्थाई नहीं होता है।

राजनीति विज्ञान शिक्षण में माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर पर व्याख्यान विधि का प्रयोग बहुत प्रचलन में है क्योंकि इस विषय की अधिकांश विषय वस्तु सामाजिक एवं अमूर्त होने के कारण व्याख्यान

विधि के माध्यम से उसका प्रस्तुतीकरण प्रभावशाली तरीके से किया जा सकता है। यदि व्याख्यान की तैयारी पूर्व में की जाए, श्यामपट का प्रयोग पाठ के प्रस्तुतीकरण में किया जाए, पाठ्यवस्तु से संबंधित शिक्षण सहायक सामग्री का प्रयोग किया जाए तथा खोजक प्रश्न कौशल का प्रयोग भली-भांति किया जाए तो यह विधि राजनीति विज्ञान शिक्षण हेतु बहुत उपयोगी साबित हो सकती है।

2.5.2 परियोजना विधि:

किलपैट्रिक के अनुसार प्रोजेक्ट वह सहृदय पूर्ण अभिप्राय उक्त प्रक्रिया है जो पूर्ण संलग्नता के साथ सामाजिक वातावरण में की जाए। योजना विधि जॉन डीवी के प्रयोजनवाद संबंधी सिद्धांत पर आधारित है। यह विचारधारा मानती है कि ज्ञान किसी समस्या के निराकरण हेतु किए जाने वाले प्रयासों के प्रत्यक्ष सक्रिय अनुभव द्वारा प्राप्त होता है यह बालक को सक्रिय बनाने की पक्षधर हैयोजना विधि प्रायोगिक कार्य पर आधारित विधि है। इस विधि में विद्यार्थियों को कोई समस्यापूर्ण कार्य दिया जाता है। समस्या का चयन युवा संपादन विद्यार्थियों द्वारा स्वयम के दैनिक जीवन से किया जाता है शिक्षक पथ प्रदर्शक की भूमिका में रहते हैं। विद्यार्थी शिक्षक की देख-रेख में प्रयोगशाला, पुस्तकालय इत्यादि का प्रयोग करते हुए उस समस्या को हल करने का प्रयास करते हैं।इस विधि में शिक्षक समस्या जुड़े उद्देश्यों को विद्यार्थियों को स्पष्ट कर देता है।विधि में शिक्षक अपने देख-रेख में कार्य कराता है तो इसे एक निरीक्षित अधिगम विधि के रूप में देखा जा सकता है।

योजना विधि में की जाने वाली योजनायें दो प्रकार की हो सकती हैं – पहला वैयक्तिक और दूसरी सामाजिक। दोनों ही प्रकार की योजनाओं में शिक्षक के द्वारा दिए निर्देशों और उद्देश्यों पर विद्यार्थी कार्य करते हैं। यह विधि विद्यार्थियों के क्रियाओं को अधिक महत्व देती है तथा इसमें कार्य प्रणाली का ज्ञान भी आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। विद्यार्थियों के पास कार्य के निष्पन सम्बन्धी पर्याप्त स्वतंत्रता रहती है।

किलपैट्रिक ने योजना विधि के चार चरण बताए हैं

1. योजना के उद्देश्यों का निर्धारण करना।
2. योजना का निर्माण करना।
3. योजना का क्रियान्वयन करना।
4. योजना का मूल्यांकन करना।

इस विधि का प्रयोग करते समय शिक्षकों को कुछ सावधानी रखने की भी आवश्यकता होती है।

1. योजना जीवन से संबंधित या वास्तविक होनी चाहिए।
2. योजना का प्रस्तुतीकरण स्वाभाविक होना चाहिए।
3. योजना के समाधान हेतु वास्तविकता क्यों ओवर विधियों का प्रयोग किया जाना चाहिए।
4. योजना का कार्यक्रम रोचक प्रेरक व सजीव होना चाहिए।
5. योजना समय बंद होनी चाहिए।
6. योजना छात्रों के लिए आसानी से प्राप्ति होना चाहिए।

7. अध्यापकों को दिशा निर्देशक की भूमिका का निर्वाह करना चाहिए।

लाभ:

1. विद्यार्थी केन्द्रित मनोवैज्ञानिक विधि है। विद्यार्थी स्वयं ही करके सीखते हैं।
2. अनुभव पर केंद्रित होने के कारण अर्जित ज्ञान स्थाई होता है।
3. विद्यार्थियों में स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता, सहयोग, आत्मविश्वास और सामूहिकता जैसे गुणों का विकास होता है।
4. विद्यार्थी योजना विधि को सामाजिक परिवेश में करते हैं तो ऐसे में उनमें सामाजिकता का विकास होता है।

सीमायें:

1. मंदबुद्धि विद्यार्थियों के लिए यह विधि उपयुक्त नहीं है।
2. संगठन की कमी के कारण सुनियोजित कार्यक्रम बना पाना कठिन होता है।
3. यह विधि कष्टसाध्य है। इसका संचालन कुशल एवं प्रशिक्षित अध्यापको पर निर्भर करता है।
4. इस पद्धति से संबंधित किताबों की उपलब्धता पर्याप्त नहीं है।

राजनीति विज्ञान शिक्षण में निम्नलिखित विषयों पर विद्यार्थियों द्वारा प्रोजेक्ट कार्य करवाया जा सकता है-

ग्राम के यातायात साधन, गांव में वोटरों की संख्या कम होने के कारण, नगर में यातायात संकेतकों की वास्तविक स्थिति इत्यादि।

2.5.3 समस्या समाधान विधि:

समस्या विधि योजना विधि से काफी मिलती जुलती है। योजना विधि में भी समस्या लेते हैं वॉइस में भी। अंतर यह है कि योजना विधि में समस्या के निदान हेतु मानसिक व शारीरिक दोनों ही क्रियाओं को समन्वित किया जाता है जबकि समस्या समाधान विधि में सिर्फ मानसिक क्रियाओं के विकास पर बल दिया जाता है। समस्या समाधान विधि एक वैज्ञानिक विधि है।

समस्या पद्धति के प्रमुख सोपान निम्नलिखित है-

1. समस्या की पहचान।
2. समस्या का परिभाषीकरण या प्रस्तुतीकरण।
3. समस्या से संबंधित तथ्यों का एकत्रीकरण।
4. समस्या संबंधी परिकल्पनाओं का निर्धारणएवं उनकी जांच करना।
5. समस्या संबंधी तथ्यों की विवेचना तथा विश्लेषण करके निष्कर्ष निकालना।
6. निष्कर्षों की सत्यता का मूल्यांकन करना।

लाभ:

1. यह जीवन की वास्तविक परिस्थितियों से संबंधित होती है।
2. विद्यार्थी केंद्रित एवं रुचिकर है।

3. विद्यार्थी क्रियाशील रहते हैं।
4. विद्यार्थियों में स्वयं कार्य करने की भावना विकसित होती है।
5. वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास किया जाता है विद्यार्थियों को पूर्वाग्रह से ग्रसित होने से बचाती है।
6. तथ्यों के एकत्रीकरण व्यवस्थित करण का ज्ञान प्राप्त हो जाता है।

सीमायें:

1. विषय का व्यापक ज्ञान प्रदान करने में असमर्थ है
2. प्रयोग में बहुत समय लगता है।
3. इसके प्रयोग हेतु कुशल शिक्षकों की आवश्यकता है
4. यह जटिल विधि है इसका प्रयोग बड़ी कक्षाओं में ही संभव है।

राजनीति विज्ञान मैं विभिन्न समस्याओं को उनके समाधान हेतु छात्रों के समक्ष प्रस्तुत किया जा सकता है जैसे - निरक्षरता की समस्या, निर्धनता की समस्या, नागरिक सुरक्षा की समस्या, वोटिंग प्रतिशत कम होने की समस्या आदि। इस विधि के माध्यम से राजनीति विज्ञान विषय के समस्या केंद्रित संप्रत्यय को आसानी से समझाया जा सकता है।

2.5.4 अभिनयीकरण विधि:

अभिनयीकरण से तात्पर्य अभिनय के माध्यम से शिक्षण संपादित करने से है। इसमें कथानक पर आधारित विभिन्न पात्रों के मध्य औपचारिक संवादों के द्वारा किसी विशेष पाठ्यवस्तु को समझने का प्रयास किया जाता है। विद्यार्थी संबंधित भूमिकाओं का निर्वहन स्वयं करते हैं। विद्यार्थियों को पात्रों के चरित्र से संबंधित भूमिकाओं का निर्वहन करना पड़ता है एवं पात्र के कार्य व्यवहार जीवन मूल्यों के अनुसार अभिनय करना पड़ता है और इस अभिनय की प्रक्रिया में रहकर विद्यार्थी सीखता है। यह शिक्षण विधि काफी रोचक एवं वास्तविकता के नजदीक मानी जाती है। राजनीति विज्ञान में इसका सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा सकता है। उदाहरण के तौर पर यदि विद्यार्थियों को संसद की कार्यवाही का ज्ञान प्रदान करना है तो युवा संसद का आयोजन किया जा सकता है जिसमें प्रधानमंत्री नेता प्रतिपक्ष केंद्रीय मंत्री लोकसभा अध्यक्ष के दायित्व को बांटकर अभिनय के माध्यम से श्री स्पष्ट किया जा सकता है। इसी प्रकार पहली बार मतदान करने जा रहे विद्यार्थियों को चुनाव प्रक्रिया का ज्ञान इस विधि के द्वारा प्रदान किया जा सकता है जिसमें वोटर की भूमिका, चुनाव कर्मचारियों, चुनाव अधिकारियों, गणना कर्मियों तथा सुरक्षाकर्मियों की भूमिकाएं विद्यार्थी निभा सकते हैं। शिक्षक का रोल इसमें निर्देशक का होता है । उपयुक्त पात्रों का चयन, योग्यता एवं क्षमताओं के आधार पर जिम्मेदारियों का बंटवारा तथा संवादों का लेखन शिक्षक द्वारा किया जाता है । यह विधि क्रिया पर आधारित है तथा इसमें विद्यार्थियों की अधिकाधिक ज्ञान इंद्रियां शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में शामिल रहती हैं इस कारण अधिगम सरल-सहज एवं स्थाई प्रकृति का होता है। यह विद्यार्थियों को करके सीखने का अवसर प्रदान करती है। विद्यार्थी विषय वस्तु से संबंधित अनुभव अर्जित करते हैं और भूमिकाओं के निर्वहन का उनके मस्तिष्क

पर गहरा एवं स्थाई प्रभाव पड़ता है। इस विधि की सीमा यह है कि राजनीति विज्ञान की समस्त विषय वस्तु को इसके माध्यम से नहीं पढ़ाया जा सकता है तथा इस विधि के प्रयोग हेतु कुशल शिक्षक की आवश्यकता होती है जो अभिनय में पारंगत हो तथा भाषा पर उसकी अच्छी पकड़ हो।

2.5.5 परिचर्चा/वाद-विवाद विधि

वाद विवाद अथवा परिचर्चा विधि शिक्षण की ऐसी विधि है जिसमें शिक्षक तथा छात्र मिलकर किसी प्रश्न प्रकरण या समस्या के संबंध में स्वतंत्रतापूर्वक सामूहिक वातावरण में विचारों का आदान प्रदान करते हैं इसमें अध्यापक एक दिशा निर्देशक के रूप में कार्य करते हुए छात्रों को क्रिया करने का अवसर प्रदान करता है। सिम्पसन के अनुसार वाद विवाद या परिचर्चा बातचीत का एक ऐसा विशिष्ट स्वरूप है। इसमें सामान्य बातचीत की अपेक्षा अधिक विस्तृत एवं विवेक युक्त विचारों का आदान-प्रदान होता है सामान्यतया वाद-विवाद में महत्वपूर्ण विचारों को शामिल किया जाता है। परिचर्चा अनौपचारिक एवं औपचारिक दोनों प्रकार की होती हैं अनौपचारिक परिचर्चा के अंतर्गत किन्ही निर्धारित नियम किसी पूर्व निर्धारित पद्धति की आवश्यकता नहीं है इसमें छात्र या भाग लेने वाले किसी समस्या पर स्वतंत्रता पूर्वक विचारों का आदान प्रदान करते हैं विधि का काफी प्रयोग किया जाता है इसमें शिक्षक ही नेतृत्व करता है वाद विवाद को संचालित करता है और उस से पूर्व विचार विमर्श के लिए प्रस्तुत की गई समस्या या प्रकरण को सदैव सम्मुख बनाए रखता है। औपचारिक परिचर्चा के अंतर्गत निर्धारित नियमों या विशिष्ट पद्धति के अनुसार परिचर्चा आयोजित की जाती है इसमें विद्यार्थी स्वयं में से अध्यक्ष मंत्री तथा अन्य पदाधिकारी चुनते हैं पर चर्चा में भाग लेने वाले सभी विद्यार्थी इन पदाधिकारियों के निर्देशन में समस्त कार्यों को करते हैं और शिक्षक एक साधारण सदस्य के रूप में कार्य करते हैं औपचारिक परिचर्चा के रूप जैसे -पैनल, साक्षात्कार, वाद-विवाद प्रतियोगिता एवं विचार गोष्ठी आदि हैं। परिचर्चा के द्वारा शिक्षण होने से विद्यार्थियों की बोलने की क्षमता का विकास होता है विद्यार्थी विषय वस्तु का चयन एवं संगठन करना सीख जाते हैं तथा उनमें तर्क चिंतन एवं निर्णय शक्ति का विकास होता है परस्पर सहयोग की भावना का विकास होता है स्वाध्याय की आदत का विकास होता है। परिचर्चा विधि द्वारा सीखने हेतु कुछ सीमाएं हैं जैसे परिचर्चा विधि छोटी आयु के विद्यार्थियों के लिए उपयोगी नहीं है, परिचर्चा कभी-कभी अवांछनीय रुप ले लेती है जिसमें वैमनस्य बढ़ने की संभावना रहती है। उद्देश्यहीन परिचर्चा समय व शक्ति का अपव्यय करती है। सभी विषय शिक्षण विधि द्वारा नहीं पढ़ाया जा सकते। इसका मूल्य अंकन एक कठिन प्रक्रिया है। किंतु इसके बावजूद राजनीति विज्ञान शिक्षण में परिचर्चा विधि का महत्वपूर्ण स्थान है। राजनीति विज्ञान विषय के अंतर्गत कई महत्वपूर्ण प्रकरण ऐसे हैं जिन पर अच्छी एवं स्वस्थ परिचर्चाएं आयोजित की जा सकती हैं। उदाहरण के तौर पर आरक्षण व्यवस्था पर परिचर्चा के माध्यम से विद्यार्थियों को ज्ञान प्रदान किया जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न

5. व्याख्यान विधि के दोष क्या हैं?
6. योजना विधि किस दार्शनिक सिद्धांत पर आधारित है?
7. अभिनयीकरण विधि में शिक्षक की क्या भूमिका है?

2.6 राजनीति विज्ञान में शिक्षण में संसाधन

किसी भी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि इसमें विद्यार्थियों की अधिक से अधिक ज्ञानेंद्रियों को इस प्रक्रिया में संलग्न किया जाए। फ्री बनाने हेतु शिक्षक द्वारा कई प्रयास किए जाते हैं शिक्षक अपने उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु अपने प्रकरण से संबंधित संसाधनों का उपयोग शिक्षण के दौरान करता है यह संसाधन शिक्षण प्रक्रिया को अधिक रोचक एवं सुबोध बनाने में सहायक होते हैं। यह संसाधन शिक्षण सहायक सामग्री के रूप में सैद्धांतिक मौखिक एवं नीरस पाठ को भी स्वाभाविक मनोरंजक तथा उपयोगी बनाते हैं। ज्ञानेंद्रियों पर आधारित जान अधिक स्थाई होता है। संसाधनों का प्रयोग विद्यार्थियों को न केवल आकर्षित करता है बल्कि उनमें रुचि एवं उत्साह उत्पन्न करता है उनके ध्यान को पाठ पर केंद्रित करने में सहायक होती है। विभिन्न संसाधनों के प्रयोग द्वारा कठिन से कठिन सामग्री का स्पष्टीकरण आसानी से किया जा सकता है। इसके द्वारा छात्रों को प्रत्यक्ष अनुभव प्रदान किए जा सकते हैं वास्तविक वस्तुओं एवं उनकी प्रतिकृति के माध्यम से व्यवहारिक एवं जीवंत अनुभव प्रदान किया जाना भी विद्यार्थियों के लिए लाभदायक साबित होता है। कुछ महत्वपूर्ण संसाधनों की चर्चा निम्नलिखित है।

i. भारत का संविधान -भारत का संविधान भी राजनीति विज्ञान के शिक्षकों एवं विद्यार्थियों हेतु महत्वपूर्ण संसाधन है जिसके द्वारा भारतीय शासन पद्धति चुनाव प्रक्रिया अधिकारों एवं कर्तव्यों का ज्ञान सप्रमाण प्रदान किया जा सकता है।
ii. राजनैतिक मानचित्र- मानचित्र इस धरातल को समतल रूप में प्रस्तुत करता है जिसमें प्रस्तुतीकरण हेतु पंक्तियों संकेतो शब्दों व रंगों का प्रयोग किया जाता है मानचित्र की सहायता से हम विभिन्न स्थानों का क्षेत्रफल स्थिति उपज जलवायु जनसंख्या तापक्रम लोकसभा क्षेत्र विधानसभा क्षेत्र राज्यों की सीमाएं आदि जानकारियों को सहायता से प्रदान किया जा सकता है राजनीति शास्त्र में राज्यों की सीमाओं राजधानियों संयुक्त राष्ट्र संघ इत्यादि विषयों का शिक्षण करते समय मानचित्र का उपयोग किया जाना आवश्यक होता है।
iii. ग्लोब- ग्लोब के माध्यम से विश्व के विभिन्न देशों की स्थिति को स्पष्ट किया जा सकता है। ग्लोब के माध्यम से यह स्पष्ट किया जा सकता है कि विश्व के किन-किन देशों में लोकतांत्रिक व्यवस्था लागू है। ब्लॉग के माध्यम से देशों की भौगोलिक स्थितियों को मूर्त रूप में विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है।

iv. समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ- समाचार पत्र पत्रिकाएं भी हमारा ज्ञानवर्धन करने का एक सशक्त माध्यम है। राजनीति विज्ञान शिक्षण के अंतर्गत कुछ महत्वपूर्ण पत्रिकाएं जैसे इंडिया टुडे आउटलुक मिरर इत्यादि ऐसी हैं जो राजनीतिक विचारधारा पर आधारित है इन पत्रिकाओं का उपयोग विद्यार्थियों में राजनीतिक जागरूकता उत्पन्न करने के लिए किया जा सकता है। दैनिक समाचार पत्रों का उपयोग राजनीति विज्ञान शिक्षण में आसानी से किया जा सकता है विभिन्न देशों राज्यों की महत्वपूर्ण खबरें हिंसा कानून का उल्लंघन अधिकार का हनन से संबंधित खबरों को भी कक्षा शिक्षण में शामिल करने के लिए दैनिक समाचार पत्रों को संसाधन के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।

v. पुस्तकें- पुस्तकें भी एक महत्वपूर्ण संसाधन है जिनके द्वारा शिक्षण प्रक्रिया को तथ्यपरक एवं सूचनात्मक बनाया जाता है पुस्तकों के माध्यम से विषय वस्तु को सरल क्रमबद्ध एवं नियोजित तरीके से विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। राजनीति विज्ञान के महत्वपूर्ण सिद्धांतों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए विभिन्न राजनीतिक दार्शनिकों द्वारा लिखी गई पुस्तकों का होना अति आवश्यक है।

vi. टेलीविज़न- टेलीविजन एक ऐसा महत्वपूर्ण संसाधन है जो विद्यार्थियों की श्रव्य एवं दृश्य दोनों प्रकार की ज्ञानेंद्रियों को अधिगम प्रक्रिया में सक्रिय बनाता है। राजनीति विज्ञान की कुछ विषय-वस्तु ऐसी है जिनको टेलीविजन के माध्यम से प्रभावशाली तरीके से समझाया जा सकता है । जैसे दूरदर्शन पर प्रसारित होने वाले कई महत्वपूर्ण कार्यक्रमों को विद्यार्थियों को दिखाया जाना लाभदायक साबित होगा। लोकसभा की कार्यवाही का सजीव प्रसारण भी राजनीति विज्ञान के विद्यार्थियों को वास्तविक एवं व्यवहारिक ज्ञान प्रदान कर सकता है। खबरों से संबंधित कुछ उच्चस्तरीय चैनलों की परिचर्चाओं के माध्यम से भी विद्यार्थियों को जानकारी प्रदान की जा सकती है ।

vii. रेडियो -रेडियो शिक्षा एवं मनोरंजन का महत्वपूर्ण कारण है रेडियो कक्षा शिक्षण का सहयोगी साबित हो सकता है रेडियो पर आने वाले अनेक कार्यक्रम विद्यार्थियों की रूचि अनुकूल होते हैं नागरिकता की शिक्षा नागरिकों के अधिकार कर्तव्य राज्य के उद्देश्य नागरिकों के प्रति राज्य के कर्तव्य आदि ऐसे विषय हैं जिनको रेडियो द्वारा बड़े रोचक ढंग से पढ़ाया जा सकता है रेडियो के द्वारा विद्यार्थियों का राजनीति विज्ञान संबंधी सामान्य ज्ञान बेहतर किया जा सकता है ।

अभ्यास प्रश्न

8. राजनीति विज्ञान शिक्षण में मानचित्र का प्रयोग किस प्रकार किया जा सकता है?
9. रेडियो राजनीति विज्ञान शिक्षण में एक सहायक संसाधन है, इसके पक्ष में तर्क दीजिए।
10. टेलीविजन के माध्यम से राजनीति विज्ञान के किस प्रकरण को पढ़ाया जा सकता है?

2.7 सारांश

इस इकाई के प्रारंभ में आपने राजनीति राजनीति विज्ञान के संप्रत्यय नियमों एवं सिद्धांतों की समझ विकसित करने हेतु आवश्यक कौशलों यथा अवलोकन तथ्य लेखन एवं निर्वचन का अध्ययन किया। अवलोकन विद्यार्थियों को स्वयं वास्तविक अनुभव प्राप्त करने का अवसर देता है अवलोकन से प्राप्त तथ्यों को लिपिबद्ध करना एवं तथ्यों के बीच संबंधों की पहचान करना उन तथ्यों के बीच संबंधों की व्याख्या करना यह कौशल भी आपने समझा। राजनीति विज्ञान शिक्षण में उपयोग में लाए जाने वाले विभिन्न उपागमो यथा आगमनात्मक निगमनात्मक अंतर अनुशासनात्मक तथा रचनात्मक उपागम की चर्चा के माध्यम से हमने यह जानने का प्रयास किया कि किस प्रकार राजनीति विज्ञान की विषयवस्तु को सरल, रुचिकर एवं उनके स्तर के अनुकूल विषयों को सह- संबंधित करते हुए रखा जाए ताकि विद्यार्थी स्वयं अपने अनुभव के आधार पर ज्ञान का सृजन कर ले। विशिष्ट उदाहरणों एवं परिस्थितियों में छिपे सामान्य करण को पहचान कर निष्कर्ष निकाल सके और इस पूरी प्रक्रिया के दौरान वह सक्रिय एवं रचनाशील रहे। राजनीति विज्ञान की प्रमुख शिक्षण विधियों का प्रयोग कैसे किया जाता है? उनके गुण एवं दोष क्या है? मुख्य रूप से आपने व्याख्यान विधि, योजना विधि, समस्या समाधान विधि, अभिनयकरण विधि, परिचर्चा विधि के संप्रत्यय को आपने समझा। इकाई के अंत में राजनीति विज्ञान शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को संसाधनों के प्रयोग द्वारा किस प्रकार प्रभावशाली बनाया जा सकता है यह अध्ययन किया। आपने यह समझा कि वास्तविक वस्तुओं, श्रव्य वस्तुओं, दृश्य वस्तुओं जैसे मानचित्र, रेडियो, टेलीविज़न के माध्यम से अधिगम को सरल रुचिकर एवं मनोवैज्ञानिक किस प्रकार बनाया जा सकता है।

2.8 शब्दावली

1. **आगमनात्मक उपागम**: आगमनात्मक उपागम में विद्यार्थी "विशिष्ट से सामान्य" की ओर अग्रसर होते हैं। आगमनात्मक में उदाहरण पहले बताए जाते हैं और कई उदाहरणों के आधार पर विद्यार्थी कुछ प्रश्नों के माध्यम से स्वयं निष्कर्ष पर पंहुचते हैं।
2. **निगमनात्मक उपागम**: निगमनात्मक उपागम में सामान्य से विशिष्ट की ओर जाते हैं। शिक्षक सामान्य नियम को स्पष्ट करने के पश्चात् कुछ विशिष्ट उदाहरणों को विद्यार्थियों के सामने प्रस्तुत करता है जैसे शिक्षक पहले तथ्यों, नियमों, सिद्धांतों या संकल्पनाओं को विद्यार्थियों को बताता है और तद्पश्चात उन तथ्यों, नियमों, सिद्धांतों या संकल्पनाओं के पक्ष में उदाहरणों को प्रस्तुत किया जाता है।

2.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. लोकसभा राज्यसभा एवं न्यायालय की कार्य वाही के अवलोकन के माध्यम से राजनीति विज्ञान के विद्यार्थियों को ज्ञान प्रदान किया जाना इस कौशल के विकास हेतु अच्छा उदाहरण हो सकता है।

2. तथ्यों के निर्वचन से विद्यार्थियों के अंदर विभिन्न तथ्यों के अंतर्निहित संबंधों की व्याख्या करने का कौशल विकसित होता है।
3. निगमनात्मक उपागम में सामान्य से विशिष्ट की ओर जाते हैं जबकि आगमनात्मक उपागम में विद्यार्थी विशिष्ट उदाहरणों के माध्यम से सामान्यीकरण के द्वारा नियम ज्ञात करते हैं।
4. (i) विद्यार्थी सक्रिय रूप से शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में भाग लेते हैं । (ii) विद्यार्थी नवीन ज्ञान का सृजन करते हैं तो इस उपागम के प्रयोग से अर्जित ज्ञान अपेक्षाकृत स्थायी होता है और इसके साथ ही विद्यार्थी स्वयं के जीवन में उस ज्ञान को प्रयोग में लाने में सफल होते हैं ।
5. व्याख्यान विधि विद्यार्थियों को निष्क्रिय बनाती है एवं निम्न कक्षाओं हेतु अनुपयुक्त है।
6. योजना विधि प्रयोजनवाद के सिद्धांत पर आधारित है
7. अभिनयीकरण विधि में शिक्षक की भूमिका निर्देशक की होती है।
8. राजनीति विज्ञान में राजनैतिक मानचित्र के द्वारा विभिन्न राज्यों की सीमाएं उनमें शासन करने वाले दलों की जानकारी प्रदान की जा सकती है।
9. रेडियो पर प्रसारित होने वाले राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय समाचारों का लेखन विद्यार्थियों द्वारा करवाने से उनके सामान्य ज्ञान में वृद्धि होती है इस प्रकार रेडियो एक महत्वपूर्ण संसाधन है।
10. टेलीविज़न पर आने वाले महत्वपूर्ण कार्यक्रमों जैसे लोकसभा या राज्यसभा की कार्यवाही का प्रसारण देखने का अवसर विद्यार्थियों को देखकर प्रत्यक्ष अनुभव प्रदान किए जा सकते हैं।

2.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. त्यागी, जी.डी. (2024). सामाजिक अध्ययन शिक्षण का प्रणाली विज्ञान. आगरा: अग्रवाल पब्लिकेशन.
2. त्यागी, जी.डी. (2022). नागरिक शास्त्र का शिक्षण. आगरा: विनोद पुस्तक मंदिर
3. सक्सेना,सरोज. (2007). नागरिक शास्त्र का शिक्षण. आगरा: साहित्य प्रकाशन.

2.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. राजनीति विज्ञान शिक्षण के विशेष संदर्भ में आगमनात्मक एवं निगमनात्मक उपागमो में उदाहरण सहित अंतर कीजिए।
2. राजनीति विज्ञान शिक्षण हेतु व्याख्यान को किस प्रकार प्रभावशाली बनाया जा सकता है? व्याख्या कीजिए।
3. राजनीति विज्ञान विषय से संबंधित एक समस्या पर परिचर्चा आयोजित करने की रूपरेखा प्रस्तुत कीजिए।

इकाई 3- एक अनुशासन के रूप में इतिहास का अर्थ, प्रकृति तथा क्षेत्र; इतिहास में मुख्य अवधारणाएं; एक प्रजातांत्रिक देश में इतिहास शिक्षण के उद्देश्य एवं लक्ष्य

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 इतिहास की अवधारणा
  3.3.1 इतिहास सम्बन्धी अवधारणा का विकास
  3.3.2 इतिहास का अर्थ
3.4 इतिहास की प्रकृति
3.5 इतिहास का क्षेत्र
  3.5.1 कालक्रम के अनुसार शब्दावली
  3.5.2 अध्ययन क्षेत्र के अनुसार संदर्भ ग्रंथ सूची
  3.5.3 विषयवस्तु के अनुसार
3.6 इतिहास में मुख्य अवधारणाए
3.7 एक लोकत्रांतिक देश में इतिहास शिक्षण के लक्ष्य एवं उद्देश्य
  3.7.1 इतिहास शिक्षण के उद्देश्य
  3.7.2 शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर इतिहास शिक्षण के उद्देश्य
  3.7.3 इतिहास शिक्षण के लक्ष्य
  3.7.4 शिक्षण लक्ष्यों का वर्गीकरण
3.8 उद्देश्यों तथा लक्ष्यों में अन्तर
3.9 सारांश
3.10 शब्दावली
3.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.12 संदर्भ ग्रंथ सूची
3.13 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

इतिहास को सामान्यत: प्रारम्भ में साहित्य की एक विधा के रूप में लिया जाता था, अपने विकास की दीर्घकाल अवधि तक यह साहित्यकार की कल्पना की परिधि में घिरा रहा। इसको वैज्ञानिक आधार प्राप्त करने में काफी वक्त लगा। वर्त्तमान वैचारिक परिदृश्य में इतिहास में अतीतकालीन या विगत मानवीय जीवन तथा स्मृतियों को ही वैज्ञानिक दृष्टीकोण में देखने की प्रवृति है जो मानव की सामाजिक चेतना और बौद्धिक जीवन की परिचायक है। मानव की सामाजिक चेतना व बौद्धिक उत्कृष्टता जितनी प्रबुद्ध होंगी उसी अनुपात में मानव अपनी अतीतकालीन स्मृतियों का वस्तुनिष्ठ विश्लेषण कर उन्हें उचित आधार प्रदान कर संयोजित करने का प्रयास करता है। अतीत के गर्भ में अनंत घटनाएँ समाहित है, किन्तु प्रत्येक घटना इतिहास की परिधि में नहीं रखी जा सकती है। इतिहास का क्षेत्र व विषय-वस्तु का सम्बन्ध केवल मानवीय विकास-क्रम और उससे सम्बंधित सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक सन्दर्भों तक ही सीमित रखना पर्याप्त होगा।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप इस योग्य हो जाएंगे कि:

1. इतिहास के विकासक्रम की अवधारणा को बता सकेंगे।
2. इतिहास को परिभाषित कर सकेंगे।
3. इतिहास की प्रकृति को स्पस्ट कर सकेंगे।
4. इतिहास की प्रकृति की व्याख्या कर सकेंगे।
5. इतिहास के क्षेत्र की व्याख्या कर सकेंगे।
6. इतिहास के क्षेत्रों का वर्गीकरण विभिन्न आधारों पर कर संकेंगे।
7. इतिहास में मुख्य अवधारणाओं की विवेचना कर सकेंगे।
8. एक प्रजातांत्रिक देश में इतिहास शिक्षण के मुख्य उद्देश्यों का वर्णन कर सकेंगे।
9. शिक्षण के उद्देश्य एवं लक्ष्य में अन्तर कर सकेंगे।
10. इतिहास शिक्षण के लक्ष्यों की विवेचना कर सकेंगे।

3.3 इतिहास की अवधारणा (Concept of History)

किसी भी विषय की अवधारणा का विकास एक दिन में न होकर एक दीर्घकालीन प्रक्रिया का परिणाम होता है। इतिहास विषय के संदर्भ में भी यही हुआ एक दीर्घकालीन चिंतन और विचारों के विकास की प्रक्रिया के फलस्वरूप इतिहास विषय की उत्पति होती है। अन्य विषयों की उत्पति के समान इतिहास विषय का विकास भी पश्चिम देशों मे हुआ है ।

3.3.1 इतिहास सम्बन्धी अवधारणा का विकास (Development of the Concept of History)

इतिहास का अध्ययन करने से पूर्व इसकी अवधारणा को जानना उपयुक्त होगा। इतिहास शब्द का विकास पश्चिम में हुआ एवं इसके उदभव से लेकर वर्तमान तक इसका स्वरुप परिवर्तित होता रहा। इतिहास शब्द के लिए अंग्रेजी में हिस्ट्री(History) शब्द का प्रयोग किया जाता है जोकि ग्रीक शब्द हिस्टोरिया (Historia) से निकला है जिसका अर्थ होता है- जानना या ज्ञात करना (To Know or Knowing)। इस शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग यूनानी इतिहासकार हिॅरॉडोटस(Herodotus) ने किया था। हिॅरॉडोटस (480-430 ई०पू०) को इतिहास का जनक माना जाता है। इन्होनें खोज की विधियों को अपनाकर अपने युग से पूर्व के फारस के युद्ध एवं समाज का कहानी रूप में वर्णन किया है। हिॅरॉडोटस के पश्चात इनकी एकत्रित सामग्री को हिस्टोरिया(Histroria) की संज्ञा दी जाने । यूनानी शब्द हिस्टोरिया ही कालांतर में लैटिन के शब्द हिस्टोरिया में भी व्यवहृत होने लगा और फिर अंग्रेजी में हिस्ट्री के नाम से प्रयुक्त किया जाने लगा।

हेरोडोटस के उपरान्त थ्यूसिडिडीज(Thusidides, 454 – 399 ई०पू०), जोकि हेरोडोटस का समकालीन था, ने इतिहास को भिन्न दृष्टीकोण में विवेचित किया। जहाँ हेरोडोटस का केंद्रबिंदु रुचिप्रद ढंग से भूतकालीन घटनाओं को प्रस्तुत करने मे था वही थ्यूसिडिडीज का आग्रह शिक्षात्मक पहलू पर केन्द्रित था। यह पहले व्यक्ति थे जो इतिहास को विश्वसनीय बनाने का प्रयास किए इसी लिए इन्होंनें भूतकाल का इतिहास न लिखकर वर्तमान का इतिहास लिखा। इतिहास को वैज्ञानिक आधार पर संयोजित एवं व्यवस्थित करने का श्रेय जर्मन लेखकों को जाता है । जर्मन लेखकों में लियोपाल्डवान रान्के(Leopold Van Ranke) प्रमुख थे। 19वी शताब्दी में इतिहास के क्षेत्र में एक नया स्वरुप उभर कर आया जिसके फलस्वरूप इतिहास के आयामों का विस्तार हुआ और इतिहास सम्बन्धी धारणाएं स्पस्टीकृत हुई।

3.3.2 इतिहास का अर्थ (Meaning of History)

किसी भी विषय का अध्ययन करने से पूर्व उसके अर्थ जानना जरूरी होता है। 'इतिहास' शब्द की व्युत्पति तीन शब्दो (इति+ह+आस) से हुई है- 'इति' का अर्थ है 'जैसा हुआ वैसा ही, 'ह' का अर्थ है 'सचमुच' तथा आस का अर्थ है 'निरन्तर रहना या बोध होना'। हेरोडोटस को 'इतिहास का जनक' माना जाता है। जैसा कि पूर्व में चर्चा की जा चुकी है कि मानव सभ्यता के क्रमिक विकास के साथ-साथ मानव जीवन और उसकी चिंतन पद्धतियों में भी परिवर्तन आता गया जिसके फलस्वरूप इतिहास सम्बन्धी संप्रत्ययों की अवधारणाओं में भी परिवर्तन होता आया। यही कारण है कि आजतक इतिहास सम्बन्धी संप्रत्ययों को लेकर सर्वसम्मति का आभाव है और इतिहास की कोई सर्वमान्य परिभाषा सुनिश्चित नहीं हो सकी है। इतिहास को समय-समय पर विभिन्न इतिहासकारों द्वारा अपने ढंग से परिभाषित करने का प्रयास किया, जिसका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है-

ई०एच०कार के अनुसार- "इतिहास, इतिहासकार तथा उसके तथ्यों के बीच अंतक्रिया की अविच्छिन्न प्रक्रिया तथा वर्तमान और अतीत के बीच अनवरत परिसंवाद है।"

जॉन हूज़िंग(John Huizinga) के अनुसार- "इतिहास वह बौद्धिक स्वरुप है, जिसमें सभ्यता अपने अतीत का चित्रण करती है।"

मेटलैंड के अनुसार- "मानव सभ्यता में मनुष्य द्वारा जो कुछ किया और कहा गया है, यहाँ तक कि उसने जो कुछ भी सोचा है, वह इतिहास है।"

रेप्सन के अनुसार- "इतिहास घटनाओं अथवा विचारों की उन्नति का एक सुसम्बद्ध विवरण है।"

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर यह स्पस्ट होता है कि इतिहासकार अतीतकालीन शेष चिन्हों एवं तथ्यों के आधार पर घटना का एक परिकल्पनात्मक एवं वास्तविक चित्रण प्रस्तुत करता है, जिसमें वर्णित घटनाएं उद्देश्यपूर्ण एवं व्यवस्थित होती है। इतिहास वह विषय है जिसमे किसी देश, समाज तथा मानव से सम्बन्धित सभी अतीतकालीन घटनाओं, तथ्यों व शेष-चिन्हों का अध्ययन समलोचानात्मक ढंग से किया जाता है जिससे वर्तमान के प्रति समझ विकसित की जा सके तथा एक अच्छे भविष्य के निर्माण किया जा सके।

3.4 इतिहास की प्रकृति (Nature of History)

मानव की किसी भी वस्तु को देंखने, समझने और इसके स्वरुप को स्पस्ट करने का दृष्टीकोण एवं विचार भिन्न-भिन्न होते है और मानव उसी परिप्रेक्ष्य में स्वयं को अभिव्यक्त करता है। इतिहास के स्वरुप के संदर्भ में भी ऐसा ही है। प्राच्य एवं पाश्चात्य इतिहासकारों ने भिन्न-भिन्न रूपों में अभिव्यक्त किया। कुछ इतिहासकारों ने इसके स्वरुप को कहानी व सामाजिक विज्ञान जैसा माना, तो कुछ ने ज्ञान, समसामयिक विचार और अतीत-वर्तमान के मध्य सेतु, कुछ ने घटनाओं का संग्रह अथवा संसार का सार्वभौम परिचय आदि माना है।

जान डीवी के अनुसार इतिहास का स्वरुप निरंतर परिवर्तनशील एवं सामाजिक आवश्कताओं के अनुरूप विकसित होता रहा है। कार्ल मार्क्स का मत है कि इतिहास का स्वरुप ऐसा होना चाहिए जो निरंतर विकसित एवं परिवर्तित होता रहे। स्प्रेंगलर के अनुसार इतिहास का स्वरुप प्रकृति विषयक तथा इतिहास विषयक, दोनों है। कालिंगवुड का मानना है कि इसमें निश्चित लक्ष्य तथा दिशा वाले बौद्धिक चिंतन द्वारा प्रस्तुत विचारों को समाहित किया गया हो, किन्तु प्रत्येक विचार को नहीं। प्रो० कार ने इतिहास को अतीत की घटनओं तथा कारण व परिणाम के पारस्परिक सम्बन्धों को क्रम से प्रस्तुत किए जाने से सम्बद्ध किया है। डॉ० काशीप्रसाद जयसवाल के मत में इतिहास का स्वरुप उसे यथावत स्वीकार कर लेने से यह घटनाओं के कारणों की वैज्ञानिक विधि से खोज से सम्बंधित होता है। डॉ० रमेशचन्द्र मजूमदार ने इतिहास के स्वरुप को सत्य के अन्वेषण से सम्बद्ध किया है।

उपरोक्त सभी विद्वानों ने इतिहास के स्वरुप के संदर्भ में मंतव्य व्यक्त किए है। सभी वर्णन इतिहास को मुख्यतः दो स्वरूपों में प्रस्तुत करते है- पहला इतिहास के वैज्ञानिक स्वरुप से सम्बंधित है तो दूसरा उसके कलात्मक स्वरुप से । अब ये प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि इतिहास की प्रकृति क्या है? यह कला है या विज्ञान अथवा दोनों है? या दोनों न होकर कुछ और है?

3.4.1 इतिहास एक विज्ञान है (History as a Science)

इतिहास को विज्ञान की श्रेणी में लाने का प्रयास सर्वप्रथम गिबन, वाल्टेयर, बूल्फ, रान्के, प्रो० डार्विन, प्रो० व्यूरी, प्रो० बरी आदि ने किया। प्रो० बरी का मानना है कि इस्तिहस का अध्ययन खोज और अन्वेषण के आधार पर अन्य विज्ञानों की भांति ही होना चाहिए और इस प्रकार इतिहास एक विज्ञान कि श्रेणी में आता है। जर्मन विद्वानों ने इतिहास को पूर्ण विज्ञान बनाया। उन्होंने इतिहास का अध्ययन तुलना तथा अन्वेषण आदि द्वारा किया और उसे क्रमबद्ध करके वैज्ञानिक श्रेणी में ला दिया। विज्ञान की भांति इतिहास भी अपने अध्ययन में विभिन्न परिस्थितियों और घटनाओं के कारण तथा परिणामों पर विचार करता है।

19वीं शताब्दी में इतिहास में विज्ञान का अवलोकन करने वाले हीगल के उत्तराधिकारी कार्ल मार्क्स ने अपने को वैज्ञानिक इतिहासकार समझा और जर्मनी के बाहर अपना प्रभाव बनाया। वैज्ञानिक इतिहास के विषय में इंग्लैंड, फ्रांस और जर्मनी में पत्रिकाएँ निकलने लगीं।

इतिहास के स्वरुप को विज्ञान मानने के निम्न आधार माने जाते है-

- किसी भी वैज्ञानिक पद्धति में अवलोकन, सत्यापन, वर्गीकरण, सामान्यीकरण, भविष्यवाणी एवं वैज्ञानिक प्रवृति की विशेषताएँ मिलती है। इतिहास में भी परिकल्पना का निर्माण, आंकड़ों का संकलन, सामग्री का वर्गीकरण, सत्यापन, सामान्यीकरण आदि संभव है, अत: यह एक विज्ञान है।
- इतिहास एक सुव्यवस्थित तथा क्रमबद्ध ज्ञान है। ए०एल० राउज ने स्वीकार किया है कि विज्ञान की भांति इतिहास में वस्तुनिष्ठ यथार्थता का अन्वेषण क्रमबद्ध विधियों एवं नियमों के माध्यम से किया जाता है।
- इतिहास सामान्यीकरण के आधार पर भी एक विज्ञान है । कार का मत है कि इतिहास यघपि विशेष से भी सम्बद्ध है, तो भी उसको सामान्यीकरण के सिद्धांत से पृथक करना उपहासास्पद और मूर्खतापूर्ण है।
- वैज्ञानिक भविष्यवक्ताओं की भांति इतिहासकार भी भावी घटनाओं के सम्बन्ध में भविष्यवाणी करने मे समर्थ है। प्रो० वाल्श, कार्ल आर० पापर, ई०एच० कर आदि ने इस मत का समर्थन किया है कि यदि एक वैज्ञानिक भविष्यवाणी करता है तो इतिहासकार परिस्थितियों के संदर्भ में भविष्य के लिए मार्गदर्शन करता है।
- इतिहास में भी वस्तुनिष्ठता का गुण पाया जाता है। आगस्ट कोम्टे कहते है कि जब इतिहासकार व्यक्तिगत भाव का परित्याग कर सिद्धांत का आश्रय लेता है तो इतिहास का विषयनिष्ठ स्वरुप वस्तुनिष्ठता में परिवर्तित हो जाता है।

उपरोक्त मत इतिहास के स्वरुप को वैज्ञानिक आधार प्रदान करते है किन्तु इनके विरद्ध विद्वानों का एक ऐसा वर्ग है जो इतिहास को विज्ञान नहीं मनाता है। इनका मानना है कि इतिहास के निर्णय निश्चित नहीं होते है जबकि विज्ञान के निश्चित होते हैं, अतएव इतिहास कभी भी विज्ञान नहीं हो सकता है। विज्ञान में

स्थान एवं परिस्थितियों का प्रभाव नहीं पड़ता हैं जबकि इतिहास में पड़ता है। सजीव मानव इतिहास का अध्ययन विषय है जबकि विज्ञान का निर्जीव वस्तुएं आदि।

3.4.2 इतिहास एक कला है (History as an Art)

इतिहास को कुछ विद्वान कला मानते है और कुछ इसे विज्ञान के साथ-साथ कला मानते है। कला उस ज्ञान को कहते हैं जो ज्ञान का व्यावहारिक प्रयोग करके और अच्छाई व बुराई का निर्णय करके, व्यक्ति या समाज को अच्छाई की ओर ले जाने का प्रयत्न करता है। इतिहास में ऐसा होता है इसलिए इसे कला कहते है। इतिहासकार एक कलाकार होता है वह सत्यता एवं घटनाओं की प्रमाणिकता के आधार पर भविष्य के निर्माण का आधार बनाता है। गिबन, मेकाले, कार्लाइल आदि इतिहासकार ऐसा ही स्वीकार करते है। हेनरी पिरेन ने इतिहास को प्राचीन काव्य से सम्बद्ध करके उसे कला कहा है। कला के समर्थकों ने ही इतिहास को साहित्य की शाखा माना है। इतिहासकार एवं कलाकार में यही समानता है कि इतिहासकार एक कलाकार के रूप में अनुभव करता है और अंतर यह है कि कला में केवल संभावनाओं का वर्णन होता है, जबकि इतिहास में यथार्थता का। इतिहास को कला की श्रेणी में इसलिए भी रखते है क्योकि इसमें यथार्थता के साथ विवरण सम्बन्धी कुशलता, रोचकता, दृष्टान्तों का चयन तथा चरित्र-चित्रण का निरूपण की विशेषताओं में विशेष आग्रह होता है। इतिहास में यदि कला जैसी रोचकता का आभाव होता तो इसका अध्ययन नीरस बन जाता। सामजिक आवश्यकता के परिवेश में ए० एल० राउज का स्पस्ट मत है कि इतिहास सदैव कला रहेगा।

विद्वानों का एक वर्ग ऐसा है जो इसे कला नहीं मानता है। प्रो० जे०बी० व्यूरी का मानना है कि यदि इतिहास को कला माना जाएगा तब तक इसमें सत्य एवं यथार्थ को स्थापित करना होगा। बूरी, एच० डब्ल्यू० टेम्परले, जी० एन० क्लार्क आदि इतिहास को साहित्य की शाखा नहीं मानते है। क्रोचे का मत है कि इतिहास को कला मानने की कोई आवश्यकता नहीं है इसे यथार्थ कहानी की तरह प्रस्तुत किया जाना चाहिए। किन्तु इसे यदि इतिहास को कला न माना जाए तब समस्या यह होंगी कि इतिहास की प्राचीनतम विषय सामग्री की विवेचना कैसे हो, क्योकि सामग्री के रूप में नर कंकाल व शेष-चिन्हों के अतिरिक्त कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ और जोकि पूर्णतया निर्जीव है। यहाँ कला के आभाव में इतिहास का प्रतिपादन संभव नहीं हो पाएगा क्योकि कला ही वह माध्यम जिसके माध्यम से निर्जीव नर-कंकालों व शेष-चिन्हों में सजीवता व प्राण फूंक कर उन्हें रोचक तथा सामान्य जन के समझने योग्य बनाया जाता है।

3.4.3 इतिहास कला और विज्ञान दोनों है (History is both a Science and an Art)

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पस्ट है कि इतिहास न तो केवल कला है और न ही केवल विज्ञान है, अपितु वह विज्ञान एवं कला दोनों है। विज्ञान में वह एक सामाजिक विज्ञान एवं कला में कल्पना प्रधान न होकर यथार्थ केन्द्रित है। इतिहास जब सत्य व तथ्यों का अन्वेषण या खोज करता है तब वह विज्ञान के अधिक नजदीक होता है और जब इन सत्यों व तथ्यों का प्रस्तुतीकरण एवं वर्णन करता है, तब कला के अधिक नजदीक होता है। इस प्रकार यह माना जा सकता है कि यह दोनों विधाओं का एक समन्वित रूप है।

3.5 इतिहास का क्षेत्र (Scope of History)

किसी भी विषय के क्षेत्र से आशय होता है कि किसी विषय विशेष की विषय-वस्तु का विस्तार कितना वृहद एवं विस्तृत है। देश, काल एवं परिस्तिथि के परिप्रेक्ष्य में किसी विषय का महत्व जितना अधिक विस्तृत होगा, उसका अध्यनन क्षेत्र भी उतना व्यापक होगा। इतिहास विषय का क्षेत्र अत्यंत विस्तृत एवं व्यापक है। इतिहास का मुख्य ध्येय अतीतकालीन समाज व उसके विकासक्रम को क्रमबद्ध तथा यथार्थ रूप में प्रस्तुत करना है। इतिहास देश, काल व परिस्थिति के अनुक्रम में प्राचीन काल से लेकर वर्तमान तक सतत विकास की ओर अग्रसर है। इतिहास में मानव व समाज के ऐतिहासिक विकासक्रम, भौगोलिक दशाओं, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, प्रशासनिक, धार्मिक आदि से सम्बंधित विवरणों का होना आवश्यक होता है। इसी कारण इसका क्षेत्र व्यापक एवं विस्तृत हो गया है। इतिहास के क्षेत्र को निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत करके भलीभांति समझा जा सकता है-

3.5.1 कालक्रम के अनुसार (According to Chronology)

कालक्रम के संदर्भ में इतिहास को सामान्यत: तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है। इतिहासकार मजूमदार ने भी भारतीय इतिहास को तीन कालखण्डों (प्राचीनकाल, मध्यकाल एवं आधुनिक काल)मे विभाजित किया है। कालक्रम के तीन विभाजन निम्न है-

प्राचीन इतिहास (Ancient History)- इतिहासकार मजूमदार ने प्राचीनकाल के इतिहास के अंतर्गत मानवीय इतिहास के आरम्भ से लेकर 1000 ई० तक के इतिहास को रखा है।

मध्यकालीन इतिहास (Medieval History)- इसमें 1000 ई० से लेकर 1818 ई० तक के इतिहास को रखा गया है।

आधुनिक इतिहास (Modern History)- इसमें 1818 ई० से लेकर वर्तमान तक के इतिहास को रखा गया है।

3.5.2 अध्ययन क्षेत्र के अनुसार (According to Area of Study)

इतिहास को अध्ययन क्षेत्र की सीमा के आधार पर तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है-

i. **स्थानीय इतिहास(Local History)-** इसके अंतर्गत विद्यार्थी के स्थानीय परिवेश से सम्बंधित ऐतिहासिक ज्ञान को रखा जाता है।
ii. **राष्ट्रीय इतिहास (National History)-** इसके अंतर्गत किसी राष्ट्र की उत्पत्ति, विकास तथा भौगोलिक स्थिति के साथ-साथ उसकी सामजिक,आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि सरोकारों को रखा जाता है।
iii. **विश्व इतिहास (World History**)- इसके अंतर्गत विश्व की विभिन्न सभ्यताओं व संस्कृतियों के उदभव, उत्थान, पतन व उनकी अन्योन्याश्रिता आदि के साथ राष्ट्रों के उदभव, स्थिति-प्रस्थिति आदि का क्रमिक विकास का अध्ययन किया जाता है।

3.5.3 विषयवस्तु के अनुसार (According to Content)

विषयवस्तु के आधार पर इतिहास के क्षेत्रों को निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है-

i. **राजनीतिक इतिहास (Political History):** राजनीतिक संस्थाओं के उदय, विकास, परिवर्तन, स्थिति-प्रस्थिति, कार्य, परिणाम, प्रभाव आदि का अध्ययन राजनीतिक इतिहास के अंतर्गत किया जाता है। राजनीतिक संस्थाएं समाज का वह रंगमंच होती है जहाँ शासक, प्रशासक, राजिनीतिकार एवं महापुरुष आदि के कार्यों का प्रदर्शन होता है। राज्य, राष्ट्र और राष्ट्रीयता के परिप्रेक्ष्य में भी राजनीतिक इतिहास का महत्वपूर्ण स्थान होता है।

ii. **आर्थिक इतिहास (Economic History)-** इसमें समाज द्वारा अपनी आजीविका हेतु अपनाए गए साधनों के सृजन, विकास एवं प्रभाव का अध्ययन करते है। आर० एच० टानी तथा एलीन पावर ने सर्वप्रथम आर्थिक इतिहास लिखा। आर्थिक इतिहास के अंतर्गत मानवीय आजीविका के साधनों का अध्ययन किया जाता है जैसे- कृषि, व्यापार-वाणिज्य, उधोग-धंधों, यातायात के साधनों, भूराजस्व, कर व्यवस्था, पूंजी विकास, श्रम स्तिथि आदि ।

iii. **सामाजिक इतिहास (Social History)-** इसके अंतर्गत मानव समूहों से समाज निर्माण की प्रक्रिया, मानव तथा समाज के सम्बन्धों, अंतक्रियाओं, क्रिया-कलापों, सामाजिक संरचना, सामजिक गतिशीलता, अन्तरण, सामाजिक जीवन आदि का अध्ययन किया जाता है। इसके महत्व के संदर्भ में ट्रेवेलियन का कथन है कि सामाजिक इतिहास के आभाव में आर्थिक इतिहास मरुस्थल तथा राजनीतिक इतिहास अवर्णनीय है।

iv. **सांस्कृतिक इतिहास (Cultural History)-** इसे विद्वान सामाजिक इतिहास का अंग मानते है। इसके अंतर्गत शिक्षा, साहित्य, वास्तुकला, चित्रकला, रीति-रिवाज़, संस्कार, परम्परा, प्रथा, सामाजिक व्यवहार मानदंड, आमद-प्रमोद के साधनों, संगीत, कला व कौशल आदि का अध्ययन किया जाता है।

v. **धार्मिक इतिहास(Religious History)-** इसमें विभिन्न धर्मों के उदभव, विकास, प्रभाव एवं विशेषताओं का अध्ययन किया जाता है। धार्मिक इतिहास के अंतर्गत हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, बौद्ध, जैन, पारसी आदि धर्मों का इतिहास आता है।

vi. **संवैधानिक एवं विधिक इतिहास(Constitutional and Legal History)** – इसके अंतर्गत विश्व या किसी राष्ट्र के परिप्रेक्ष्य में विविध संवैधानिक संस्थाओं की उत्पत्ति, विकास, परिवर्तन तथा वर्तमान स्थिति व उनकी कार्य प्रणालियों आदि का अध्ययन किया जाता है। इसके साथ ही इसमें परिवर्तित सामाजिक परिस्थितियों में समाज को संगठित व व्यवस्थित विधिक मान्यताओं एवं विधान संहिताओं को भी रखा जाता है। जैसे- मनु स्मृति, याज्ञवल्य स्मृति, हम्मुराबी संहिता, कोड ऑफ़ नेपोलियन आदि।

इसके अतिरिक्त इतिहास के अन्य बहुत सारे क्षेत्र जिनके सिर्फ नाम की चर्चा की जा रही है। सभी का वर्णन करने पर यह बिन्दु अत्यंत व्यापक हो जाएगा। जैसे- सैन्य इतिहास, राजनयिक इतिहास, बौद्धिक इतिहास,

औपनिवेशिक इतिहास, संसदीय इतिहास,विचारों का इतिहास, दार्शनिक इतिहास, स्वतत्रंता का इतिहास, शिक्षा, सभ्यता, कला और विज्ञान का इतिहास आदि।

अभ्यास प्रश्न

1. इतिहास विषय का जनक किसे माना जाता है?
2. इतिहास विषय को वैज्ञानिक आधार प्रदान करने की पहल सबसें पहले किस देश के इतिहासकारों द्वारा की गई?
3. इतिहास की प्रकृति को विज्ञान मानने के लिए किन्हीं दो आधारों को लिखिए?
4. कालक्रम के आधार पर इतिहास को कितने भागों में विभाजित किया जाता है?
5. विषयवस्तु के आधार पर इतिहास विभाजन के किन्ही पांच क्षेत्रों का नाम लिखिए?

3.6 इतिहास में मुख्य अवधारणाए (Key Concepts in History)

किसी भी विषय का ज्ञान एवं कौशल प्राप्त करने के उस विषय की मुलभूत अवधारणाओं को जानना व समझना विद्यार्थियों के लिए लाभकारी होता है। इतिहास के विद्यार्थियों में ऐतिहासिक ज्ञान एवं कौशल के विकास के लिए इस विषय की मुख्य अवधारणाओं को जानना आवश्यक है। यह अवधारणाएं इतिहास अनुशासन के प्रति वृहद विचारों के साथ समन्वयवादी चिंतन का विकास करती है। इनकी समझ जिन विद्यार्थियों में हो जाती है वो एक इतिहासकार की भांति इतिहास अनुशासन में चिंतन और कार्य अपनी विकास अवस्था के अनुकूल करने लगते है। यह मुख्य अवधारणाएं ऐतिहासिक अन्वेषण के लिए एक केन्द्र-बिन्दु, ऐतिहासिक सूचना को संगठित के लिए एक आधारशिला एवं ऐतिहासिक समझ विकसित करने के लिए मार्गदर्शक के रूप में कार्य करती है। इतिहास विषय की मुख्य अवधारणाएं निम्न है-

i. **इतिहास के स्रोत एवं साक्ष्य:** इतिहास में स्रोत वह विशेष सामग्री प्रदान करती है जिसके आधार पर इतिहासकार अतीत का इतिहास लिखता है। विद्यार्थियों का स्रोतों से परिचित व महत्व से अवगत कराना चाहिए कि किस प्रकार इनके आधार पर इतिहास लिखा गया है। स्रोतों का विभाजन मौलिक स्रोत अर्थात युग विशेष के प्रत्यक्ष अवशेषतथा सहायक स्रोत अर्थात मौलिक स्रोतों पर अवलम्बित सूत्र। इतिहास के अध्ययन में दोनों स्रोतों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

   साक्ष्य वह महत्वपूर्ण व प्रासंगिक सूचना है जो स्रोतों के द्वारा किसी विशेष अन्वेषण में प्राप्त की जाती है। विद्यार्थी किसी भी प्राप्त साक्ष्य का विश्लेषण व अर्थापन उसकी प्रमाणिकता या अप्रमाणिकता के संदर्भ में आसानी से कर सकता है किन्तु उसे इतिहास का ज्ञान व समझ का होना आवश्यक है।

ii. **इतिहास में निरन्तरता एवं परिवर्तन:** विद्यार्थी अपने जीवन की निरन्तरता एवं परिवर्तन के माध्यम से इतिहास विषय की सामग्री व घटनाओं की अतीतकालीन परिद्रश्य से लेकर वर्तमान तक हुए विकास व परिवर्तनों को निरन्तरता एवं परिवर्तन के सिद्धांत के माध्यम से भलीभांति समझ सकते है। विभिन्न प्रकार की उपर्युक्त क्रियाओं को आयोजित कर विद्यार्थियों को अवसर प्रदान किए जा सकते है कि वह निरन्तरता व परिवर्तन की पहचान (समानता और असमानता) छोटे स्तर पर कराई जा सकती है। उच्च स्तर पर विद्यार्थियों को परिवर्तित व अपरिवर्तित, परिवर्तन की गति व प्रकृति तथा उसके प्रभाव आदि से सम्बंधित गतिविधियों द्वारा निरन्तरता व परिवर्तन की अवधारणा को समझाया जा सकता है।

iii. **इतिहास में कारण तथा प्रभाव:** इतिहासकार ऐतिहासिक घटनाओं या विकास एवं क्रमिक परिणामों के कारकों की व्याख्या कारण तथा प्रभाव के नियम द्वारा करता है। विद्यार्थियों में यह धारणा विकसित करने हेतु की ऐतिहासिक विकास अनुक्रम में प्रत्येक घटना के पीछे कुछ निहित कारण रहे है जो परिणाम के रूप में प्रकट हुए और परिणाम के प्रभाव से पुन: नए कारकों या कारणों ने का प्रकटीकरण हुआ जो भावी परिवर्तन के लिए जिम्मेदार रहे है। यह एक कड़ी की भांति अतीतकाल से लेकर वर्तमान तक कारण तथा प्रभाव के रुप में विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक आदि पक्षों में देखें जा सकते है। किसी भी परिवर्तन का प्रभाव समूह से समूह के परिप्रेक्ष्य में अतीतकाल में अलग-अलग रहा है। इस सिद्धांत के द्वारा यह मनोवृति विकसित की जा सकती है प्रत्येक घटना या परिवर्तन के पीछे कुछ निहित कारक या कारण अवश्य होते है।विद्यार्थी इन्हें आरेखों या रेखाचित्र आदि के माध्यम से व्यक्त कर भलीभांति समझ सकते है।

iv. **इतिहास मे परिप्रेक्ष्य:** प्रत्येक व्यक्ति का परिप्रेक्ष्य उसका अपना नजरिया है , जिसके द्वारा वह अपने आस-पास की घटित व प्रवाहमान घटनाओं को देखता व समझता है। इसी प्रकार अतीत में भी लोगो में किसी घटना या समस्या, आश्रित कारकों जैसे-आयु, लिंग, जीवन अनुभव, सामाजिक प्रस्थिति, राजनीतिक दूरदर्शिता, मूल्य व विश्वास आदि का, को लेकर भिन्न-भिन्न नजरिया रहा होगा। किसी भी तथ्य या घटना की व्याख्या करने से पूर्व उसकी परिप्रेक्ष्यता को समझना आवश्यक है।

v. **इतिहास में समानुभूति:** ऐतिहासिक समानुभूति के द्वारा ही विद्यार्थी किसी विशेष समय व स्थान के परिप्रेक्ष्य में घटनाओं को देखने व समझने का प्रयास करके ऐतिहासिक ज्ञान प्राप्त कर सकता है। इसके लिए विधार्थी में गहन ज्ञान के साथ ऐतिहासिक संदर्भ एवं एक सचेतन प्रयास से कार्य करने की आवश्यकता होती है। विद्यार्थियों में इतिहास में समानुभूति विकसित करने हेतु इसके शिक्षण की आवश्यकता होती है जिसके लिए अत्यधिक तैयारी के साथ ऐतिहासिक संदर्भ में संवेदनशीलता का होना जरुरी है तभी विद्यार्थी उस परिप्रेक्ष्य विशेष में स्वयं को रखकर उचित दृष्टिकोण व ज्ञान की समझ विकसित कर ऐतिहासिक ज्ञान प्राप्त कर सकेगा।

vi. **इतिहास में सार्थकता :** इतिहास में सार्थकता का महत्व बहुत है, जब किसी नियत अतीत के विशेष पक्ष का अध्ययन किया जा रहा हो। इतिहास में सार्थकता को निर्धारित करना एक जटिल प्रक्रिया है क्योकि इस प्रकार के निर्णय परिप्रेक्ष्य एवं प्रयोजन पर आधारित रहते है। सार्थकता काल एवं समूह के संदर्भ में अलग-अलग हो सकती है। विद्यार्थी सार्थकता को समझे बिना इतिहास को भली-भांति नहीं जान सकते है। विद्यार्थी से विभिन्न प्रकार प्रश्नों को पूँछ कर सार्थकता का निर्धारण कर सकते है एवं उसके सोच व समझ के नजरिए को इतिहास शिक्षण के सिद्धांतों द्वारा परिमार्जित कर सकते है। जैसे- भारत के प्रथम स्वंतत्रता संग्राम का तत्कालिक भारत पर क्या प्रभाव रहा? या लोगों का उसके प्रति क्या नजरिया था? कितने लोग इससे प्रभावित हुए? आदि।

3.7 एक लोकत्रांतिक देश में इतिहास शिक्षण के लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives of teaching of history in a Democratic Country)

मानव हो या समाज दोनों ही प्रगति के पथ पर अग्रसर रहते है। दोनों ही ऐसे लक्ष्यों को प्राप्त करना चाहते है जोकि अधिकतम या आदर्श हो। इसी आदर्श या अधिकतम के मानदंड को लक्ष्य या उद्देश्य कहते है। आदर्श को सर्वमान्य रूप में न तो परिभाषित किया जा सकता है और न ही इसे सीमा में बांधा जा सकता है। उद्देश्य शब्द को उत और दिश शब्द के योग से बना मानते है। जहाँ उत का अर्थ है-ऊपर की ओर और दिश का अर्थ है-दिशा दिखाना। इस प्रकार इसका शाब्दिक आशय निकलता है- उच्च दिशा का संकेत। किसी भी विषय के उद्देश्य एक ऐसे कथन माने जाते है जो उस विषय के द्वारा व्यक्ति अथवा समाज में वांछित परिवर्तन की आदर्श स्थिति को इंकित करते है, जिनकी पूर्ण प्राप्ति वास्तविकता कभी संभव नहीं है।

3.7.1 इतिहास शिक्षण के उद्देश्य (Aims of History Teaching)

उद्देश्यों का निर्धारण किया जाना नितांत आवश्यक है क्योकि कोई भी शिक्षक उद्देश्यों के ज्ञान के आभाव में अपने शिक्षण को सफल नहीं बना सकता है और विद्यार्थी भी इनके ज्ञान के आभाव में कभी भी सही मार्ग पर चलकर अपने ध्येय को नहीं प्राप्त कर सकते है। उद्देश्यों के संदर्भ में भाटिया एवं भाटिया का कथन अत्यंत महत्वपूर्ण है कि " उद्देश्यों के ज्ञान के आभाव में शिक्षक उस नाविक के समान है , जो अपने लक्ष्य या मंजिल को नहीं जानता है और विद्यार्थी उस पतवार विहीन नौका के समान है, जो लहरों के थपेड़े खाकर किसी तट या किनारे पर जा लगेगी"। उद्देश्यों का निर्धारण शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को सुचारू एवं सुव्यवस्थित से चलाने हेतु आवश्यक है। इतिहास के शिक्षण हेतु निम्नलिखित सामान्य उद्देश्य प्रचलित है-

i. **इतिहास के प्रति रूचि जाग्रत करना(To Conscious interest towards History):** विद्यार्थिओं में इतिहास के प्रति रूचि जाग्रत करना एक प्रमुख उद्देश्य है। रूचि जाग्रत करके ही विद्यार्थियों को इतिहास का अध्ययन करने की प्रवृति का विकास किया जा सकता है। वर्तमान में

विज्ञान विषयों के सापेक्ष इतिहास का स्थान गौड़ हो गया है। इस दृष्टीकोण में परिवर्तन लाने हेतु विद्यार्थी को इतिहास विषय के महत्व व उपादेयता से परिचित कराना आवश्यक है। जोन्स महोदय का कथन इस परिप्रेक्ष्य में अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि इतिहास मानव जाति की अनुभूति एवं अनुभवों की खान है। इतिहास शिक्षण द्वारा विद्यार्थियों में यह भावना विकसित करनी चाहिए कि इतिहास के माध्यम से ही वर्तमान की अच्छी समझ का विकास किया जा सकता है एवं अतीत का अध्ययन इसलिए जरुरी है कि वर्तमान और भविष्य में विगत अनुभवों से लाभ उठाया जा सके।

ii. **आत्म-समझ के विकास के लिए (For the development of Self-Understanding)-** इतिहास शिक्षण के द्वारा विद्यार्थी में आत्म-समझ का विकास किया जा सकता है। इतिहास का अध्ययन विषय-वस्तु अतीत है और अतीत से ही वर्तमान की उपज हुई है। प्रत्येक मानव की अपनी एक अलग विरासत होती है जो जाति, प्रजाति, परिवार, समाज, संस्कृति, परम्परा आदि के रूप में उसके अस्तित्व से जुडी रहती है। विधार्थी अपनी रूचि व आदत विशेष के परिप्रेक्ष्य में किसी भी पक्ष जैसे-सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, जातिगत, प्रजातिगत, सांस्कृतिक, धार्मिक आदि के विषय में ऐतिहासिक ज्ञान की अभिवृद्धि के साथ-साथ व्यक्तिगत समझ को भी विकसित करता है। ऐतिहासिक ज्ञान व समझ के आभाव में कोई भी अपने अध्ययन क्षेत्र विशेष की वर्तमान स्थिति को सही प्रकार से नहीं जन सकता है।

iii. **सहयोग एवं सहिष्णुता की भावना का विकास करना (To Develop a sense of Co-operation and Tolerance)-** इतिहास शिक्षण के द्वारा विद्यार्थियों में इस भावना का विकास किया जाना चाहिए कि सहयोग और सहिष्णुता से एक अच्छे समाज, राज्य व राष्ट्र का निर्माण किया जा सकता है। इतिहास में अनेकों ऐसे संदर्भ है जो सहयोग एवं सहिष्णुता के महत्व को प्रदर्शित करते है। अतीत कालीन भारत के शासकों में यदि पारस्परिक सहयोग की भावना रही होती तो कभी भी कोई विदेशी आक्रमणकारी भारत में प्रवेश नहीं कर सकता था। सहयोग न केवल एक समाज या राज्य या राष्ट्र के परिद्रश्य में आवश्यक है अपितु विश्व के सभी राष्ट्रों के साथ शांति स्थापना के लिए सहयोग एवं सहअस्तित्व का होना आवश्यक है। भारत एक बहुधार्मिक एवं बहुसांस्कृतिक राष्ट्र है। जहाँ पर विभिन्न धर्मो को मानने वाले, विभिन्न संस्कृतियों,विभिन्न जातियों, विभिन्न आस्थाओं, विश्वासों, विचारों एवं आदर्शों को मानने वाले लोग रहते है। राष्ट्रीयता के सूत्र में पिरोए रखने के लिए इनमें सम-आदर व सहिष्णुता की भावना होना आवश्यक है।

iv. **मानसिक शक्तियों एवं वैज्ञानिक दृष्टीकोण का विकास करना (To development of Mental Powers and Scientific Attitude) -**मानसिक शक्तियों एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करना इतिहास शिक्षण का एक प्रमुख ध्येय है। इतिहास के अध्ययन में विद्यार्थियों अनेकों अवसर प्राप्त होते है जहाँ उनकी मानसिक शक्तियों का एक प्रकार से प्रशिक्षण होता है जिसमें वह अपनी मानसिक शक्तियों जैसे-स्मरण, कल्पना, तर्क, अवलोकन, निर्णय आदि का प्रयोग करते है। उच्च स्तर की कक्षाओं में विद्यार्थी ऐतिहासिक ज्ञान को बौद्धिक कसौटियों एवं कारण-प्रभाव नियम पर रखते हुए विवेचित व ग्रहण करते है। इतिहास शिक्षण का एक प्रमुख ध्येय यह भी की विद्यार्थियों

में वैज्ञानिक एवं वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण से इतिहास के विवादास्पद विषयों एवं अतीत कालीन तथ्यों को संकलन, निरीक्षण, परीक्षण, वर्गीकरण व तुलना करने की योग्यता का विकास करना है जिससे विद्यार्थी निष्पक्षतापूर्वक अपने मनोभावों को अलग रखते हुए किसी ऐतिहासिक विषयवस्तु की व्याख्या करने, विवेचना करने व निर्णय करने के योग्य बन सके।

v. **राष्ट्रीयता की भावना का विकास करना (To development of Nationalism Feeling)-** इतिहास शिक्षण के माध्यम से विद्यार्थियों में राष्ट्रीयता की भावना का संचार किया जा सकता है। इतिहास की विभिन्न ऐतिहासिक घटनाओं, महापुरुषों व क्रांतिकारियों के कृतित्व एवं व्यक्तित्व आदि के माध्यम से विद्यार्थिओं में त्याग, बलिदान, समर्पण, निष्ठा, संकल्प शक्ति आदि का विकास कर राष्ट्रीय हित में विचार व कार्य करने का जज्बा पैदा किया जा सकता है। राष्ट्रीयता का विकास करने के लिए लोगो के बीच समान हित के आधार पर करने की भावना होनी चाहिए और यह तभी विकसित की जा सकती है जब किसी राष्ट्र के लोग जातिगत, क्षेत्रीय, भाषागत, धार्मिक व सांस्कृतिक विभिन्नताओं के होते हुए भी एकता के सूत्र में बंधे रहे और अपने वैयक्तिक एवं सामूहिक हितों का त्याग करके एक वर्गविहीन व शोषण मुक्त समाज की स्थापना कर सके।

vi. **अंतर्राष्ट्रीय अवबोध का विकास करना (To Development of International Understanding) -**विद्यार्थियों में अंतर्राष्ट्रीय अवबोध के विकास के लिए उनमे सम्पूर्ण विश्व व मानवता के प्रति सहअस्तित्व एवं सहयोग की भावना का विकास करना होगा। इससे विद्यार्थियों में सभी देशों के नागरिकों के प्रति सम आदर एवं अपनत्व की भावना का विकास होता है। विद्यार्थियों को इस तथ्य से अवगत कराना होगा कि प्राचीन काल से ही विभिन्न राज्यों व देशों में सांस्कृतिक सम्बन्ध, व्यापार विनिमय व राजनयिक संबंध रहे है और वर्तमान में भी विभिन्न राष्ट्रों के मध्य इस प्रकार के सम्बन्ध है। अंतर्राष्ट्रीय अवबोध का विकास इस लिए भी आवश्यक है क्योकि आज कोई भी राष्ट्र ऐसा नहीं जो सभी प्रकार के संसाधनों की केवल अपने स्तर पर कर सकता हो। उसे अपनी और दूसरे देशों की आवश्यकता की पूर्ति हेतु आयत-निर्यात करना पड़ता है और इसके राष्ट्रों के मध्य समझ एवं सदभाव का होना आवश्यका है।

vii. **सामाजिक चेतना का विकास करना (Development of Social Consciousness) -**मानव एक सामजिक प्राणी माना जाता है और सामाजिक प्राणी होने के कारण उसके कुछ व्यक्तिगत एवं सामाजिक कर्त्तव्य, अधिकार एवं दायित्त्व है। इन कर्त्तव्यों, अधिकारों व दायित्वों का निर्वाहन मानव विभिन्न प्रकार सामाजिक क्रियाओं भाग लेते हुए कुशलतापूर्वक एक अच्छे नागरिक के रूप में कर सके, इसके लिए उसमें सामजिक चेतना का होना आवश्यक है। इतिहास के शिक्षण द्वारा विद्यार्थी में सामाजिक बोध का ज्ञान एवं सामाजिक कर्तव्यों व दायित्वों के प्रति सजग बनाया जा सकता है।

viii. **नैतिक भावना का विकास करना (To Development of Moral Feelings) -**इतिहास को अनुभवों की खान माना जाता है और ऐतिहासिक ज्ञान को व्यवहारिक ज्ञान। इतिहास विषय में अनेकों ऐसे संदर्भ है जो जीवन के प्रत्येक पक्ष के लिए एक सामजिक व व्यवहारिक मानदंड है। इतिहास की विषयवस्तु जैसे-पौराणिक आख्यानों व दन्त कथाएं, महापुरुषों के कृतित्व व व्यक्तित्व,

घटनाओं , कहानियों, महात्माओं, संतों, पवित्र ग्रंधों आदि के द्वारा विद्यार्थियों में उचित नैतिक भावना का संचार किया जा सकता है।

ix. **विवादस्पद मामलों को संभालने के लिए प्रशिक्षण देना (To give Training for handling Controversial Issues) -** इतिहास शिक्षण में विवादस्पद विषयों या मामलों के प्रति के समुचित दृष्टीकोण के साथ उन्हें संभालने का प्रशिक्षण देना विद्यार्थियों के आवश्यक माना जाता है। इतिहास में सामान्यत: तथ्यों से सम्बंधित, तथ्यों के विश्लेषण से सम्बंधित एवं तथ्यों की प्रासंगिकता व महत्व से सम्बंधित मामलों में न केवल इतिहासकारों अपितु लोगो में भी विवाद रहता है। विवाद का समाधान करने के लिए विद्यार्थियों में यह योग्यता लानी होंगी कि वह आत्मगत तत्व को विलग करते हुए ऐसे मामलों का समुचित व सर्वमान्य समाधान निकालने में सक्षम हो सके।

3.7.2 शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर इतिहास शिक्षण के उद्देश्य(Aims of History Teaching at different levels of Education)

प्राइमरी स्तर पर उद्देश्य (Aims at Primary Level)

- इतिहास के प्रति विद्यार्थियों में रूचि जाग्रत करना।
- ऐतिहासिक कल्पना शक्ति का विकास करना और उनमें प्रेक्षण, अभिज्ञान एवं वर्गीकरण की क्षमता का विकास करना।
- अतीत के आधार पर वर्तमान को जानने व समझने की योग्यता का विकास करना।
- विद्यार्थियों में समय बोध व कालक्रम ज्ञान का विकास करना।
- स्थानीयता के आधार पर प्रांतीय व राष्ट्रीय इतिहास को जानने की उत्सुकता का विकास करना।
- राष्ट्र प्रेम एवं विश्व-बंधुत्व की भावना का विकास करना।

उच्च प्राथमिक स्तर पर उद्देश्य (Aims at Upper Primary Level)

- ऐतिहासिक ज्ञान में अभिवृद्धि करना।
- वर्तमान को समझने के लिए अतीत के अध्ययन की प्रवृति विकसित करना।
- कालक्रम ज्ञान एवं समय बोध का विकास करना।
- ऐतिहासिक संदर्भो को आधार बनाते हुए नेतृत्व गुणों का विकास करना।
- विश्व के अन्य भागों में समकालीन विकास के संदर्भ में भारत के अतीत के अध्ययन के लिए विद्यार्थिओं को अभिप्रेरित करना।
- मानसिक शक्तियों का विकास करना।

- राष्ट्रीयता एवं अंतर्राष्ट्रीयता की भावना का विकास करना।

माध्यमिक स्तर पर उद्देश्य (Aims at Secondary Level)

- आधुनिक और समकालीन भारत तथा विश्व के अन्य भागों के सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक संदर्भो में हुए परिवर्तन और विकास की प्रक्रियाओं को समझने की क्षमता का विकास करना।
- समय, स्थान व काल का इतिहास, विकास एवं मानव जीवन पर पड़े प्रभाव को जानने, समझने एवं उसमें भविष्य में सुधार की संभावनाओं को ज्ञात करने की क्षमता का विकास करना।
- मानसिक शक्तियों के प्रभावी प्रयोग में दक्ष बनाना एवं वैज्ञानिक अभिवृति व वस्तुनिष्ठता से ऐतिहासिक संदर्भो की व्याख्या, विवेचना, विश्लेषण तथा मूल्यांकन की योग्यता का विकास करना।
- राष्ट्रीयता की उदारवादी भावना के साथ अंतर्राष्ट्रीय सदभाव, सहयोग, समझ तथा सहअस्तित्व की भावना का विकास करना।
- ऐतिहासिक ज्ञान में अभिवृद्धि व समझ बढाने हेतु इतिहास अध्ययन, ऐतिहासिक भ्रमण या पर्यटन, संकलन आदि गुणों का विकास करना।

3.7.3 इतिहास शिक्षण के लक्ष्य (Objectives of History Teaching)

इतिहास के किसी पाठ, प्रकरण या विषय-वस्तु के शिक्षण द्वारा विद्यार्थियों में जिन वांछित व्यवहारिक परिवर्तन की अपेक्षा रखी जाती है उन्हें शिक्षण लक्ष्य या विशिष्ट उद्देश्य या प्राप्य उद्देश्य की संज्ञा दी जाती है। शिक्षण लक्ष्य वह अभीष्ट बिन्दु है जिसकी दिशा में कार्य किया जाता है या वह वांछित परिवर्तन है जिन्हें किसी विषय के शिक्षण द्वारा प्राप्त किया जाता है। शिक्षण लक्ष्यों की प्रकृति स्पस्ट, सुनिश्चित एवं प्राप्य होती है और जिनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध विद्यार्थी के अधिगम से होता है।

3.7.4 शिक्षण लक्ष्यों का वर्गीकरण (Taxonomy of Teaching Objectives)

शिक्षण लक्ष्यों का वर्गीकरण का प्रारम्भ करने का श्रेय शिकागो विश्वविध्यालय के प्रो० ब्लूम और उनके सहयोगियों को दिया जाता है यघपि यह लक्ष्यों के वर्गीकरण की दिशा में पहला प्रयास नहीं था किन्तु यह अत्यंत महत्वपूर्ण था जिसके कारण अधिक उपयोगी सिद्ध हुआ। इसके अतिरिक्त अन्य देशों में भी विभिन्न शैक्षिक संस्थानों द्वारा इस पर कार्य किया और कई वर्गीकरण अस्तित्व में आए। इसमें मुख्य का उल्लेख किया जा रहा है। जोकि निम्न है-

ब्लूम का वर्गीकरण (Blooms taxonomy)

प्रो० ब्लूम और उनके सहयोगियों ने विद्यार्थियों के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों को तीन क्षेत्रों में वर्गीकृत किया। व्यवहार परिवर्तन के ये तीन क्षेत्र क्रमशः ज्ञानात्मक क्षेत्र (Cognitive Domain), भावात्मक क्षेत्र (Affective Domain) तथा क्रियात्मक या मनोचालक क्षेत्र (Conative or Psychomotor Domain)है।

ज्ञानात्मक क्षेत्र (Cognitive Domain)

ज्ञानात्मक क्षेत्र के अंतर्गत वह उद्देश्य आते हैं जिनका सम्बन्ध विद्यार्थी के ज्ञान, चिंतन तथा समस्या-समाधान से होता है। ब्लूम और उनके सहयोगियों ने ज्ञानात्मक उद्देश्य के बारे में लिखा कि ज्ञानात्मक क्षेत्र के अंतर्गत वे उद्देश्य समाहित रहते है जो ज्ञान के प्रत्यास्मरण या अभिज्ञान तथा बौद्धिक योग्यताओं व कौशल के विकास से सम्बंधित होते है। ज्ञानात्मक क्षेत्र के लक्ष्यों का विभाजन छ: भागों मे किया गया है। जोकि निम्न है-

1. **ज्ञान (Knowledge):** इसके अंतर्गत अधिगमकर्ता से सम्बंधित उन क्रियाओं का वर्णन होता है जिनका सम्बन्ध अधिगमकर्ता की स्मृति से होता है। अत: ज्ञान लक्ष्य के अंतर्गत इतिहास के विभिन्न तथ्यों, घटनाओं, कालक्रमों, प्रत्ययों, परिभाषाओं, तिथियों, कालखंडों, सामान्यीकरण आदि का प्रत्यास्मरण तथा अभिज्ञान से सम्बंधित व्यवहार निहित रहते है।
2. **बोध (Understanding):** बोध स्तर पर विद्यार्थी को ऐतिहासिक तथ्यों की जानकारी व सूचना का ज्ञान होने के साथ-साथ उनकी अच्छी समझ का भी होना आवश्यक है। इसके अंतर्गत मुख्य रूप से ज्ञान की व्याख्या, अनुवाद व उल्लेख करने की क्रियाएं समाहित रहती है।
3. **अनुप्रयोग (Application):** इस स्तर का संबंध ज्ञान और बोध के फलस्वरूप संचित जानकारी व अमूर्तकरण का नवीन या विशिष्ट परिस्थिति में प्रयोग करने से है। इसके अंतर्गत विद्यार्थी इतिहास संबंधी ज्ञान व बोध का प्रक्षेपण एक परिस्तिथि से दूसरी या नवीन परिस्थिति में करते है। जैसे- वैदिक कालीन शिक्षा की ऐसी कौन सी विशेषताएं है जो वर्तमान परिदृश्य में उपयोगी हो सकती है आदि।
4. **विश्लेषण (Analysis):** इसके अंतर्गत वे व्यवहार रखे जाते है जो किसी प्राप्त ऐतिहासिक सूचना या विषयवस्तु को कई भागों में या छोटी-छोटी ईकाइयों में विभक्त कर सूचना या विषयवस्तु को स्पस्ट करने या उनमें अन्तर्निहित संबंधो या क्रमबद्धता आदि से सम्बंधित होते है। इसका लक्ष्य होता है कि विद्यार्थी किसी सूचना के संदर्भ में उपयुक्त निर्णय या प्रमुख कारण या निहित विशिष्ट तत्व आदि को विश्लेषण द्वारा निकाल सके।
5. **संश्लेषण (Synthesis):** इसके अंतर्गत किसी विषयवस्तु के विभिन्न भागों तथा सूचानों को इस प्रकार व्यवस्थित व संयोजित किया जाता है कि एक नई समग्र रचना तैयार हो जाए जो पहले से संज्ञान में न हो।

6. **मूल्यांकन (Evaluation):** यह ज्ञानात्मक क्षेत्र का सर्वाधिक परिमार्जित स्तर है। इसमें किसी परिस्थिति विशेष की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए चयनित सामग्री तथा विधियों के मूल्य के निर्धारण के सम्बन्ध में मात्रात्मक एवं गुणात्मक निर्णय लिए जाते है एवं इसके उपरान्त इसकी उपादेयता तथा उपयोगिता का निर्णय आन्तरिक एवं वाह्य कसौटियों के आधार पर विधार्थी या किसी अन्य के द्वारा किया जाता है।

भावात्मक क्षेत्र (Affective Domain)

भावात्मक क्षेत्र में का संबंध विद्यार्थी के भावों, दृष्टीकोणों, मूल्यों, रुचियों संवेंगों आदि से है। क्रथावाल, ब्लूम तथा मसीआ ने भावात्मक क्षेत्र के लक्ष्यों के बारे में लिखा है कि इस क्षेत्र में वह लक्ष्य निहित है जिनका सम्बन्ध रुचियों, मूल्यों तथा अभिवृतियों में परिवर्तन से , सराहना से तथा समायोजन के विकास से है। भावात्मक लक्षों को पांच भागों में विभाजित किया गया है जोकि निम्न है-

1. **आग्रहण (Receiving):** यह स्तर किसी निश्चित या प्रदर्शित तथ्यों या उद्दीपनों के प्रति विद्यार्थिओं की संवेदनशीलता एवं आग्रहण की चाह से सम्बंधित होता है। इसके अंतर्गत उद्दीपन के प्रति जागरूकता, ग्रहण करने की इच्छा तथा नियंत्रित अवधान समाहित रहता है।
2. **प्रतिक्रिया (Responding):** इसके अंतर्गत वे क्रियायें सन्निहित होती है जो किसी उद्दीपन के आग्रहण के फलस्वरूप होती है। इसमें किसी निश्चित उद्दीपन के प्रति की गई प्रतिक्रिया की सहमति, प्रतिक्रिया करने की इच्छा तथा प्रतिक्रिया से संतोष आदि व्यवहार निहित रहते है।
3. **अनुमूल्यन (Valuing):** यह स्तर वस्तुओं, कार्यों या क्रियाओं या व्यवहारों के उपयोग के मूल्य की स्वीकृति देने तथा उसके प्रति निश्चित भावना के प्रकटीकरण से है। इसके अंतर्गत मूल्य को स्वीकारना, मूल्यों की प्राथमिकता तथा किसी निश्चित के प्रति वचनबद्धता आदि समाहित रहता है। इसमें स्वीकारना, प्रभावित करना, निर्णय लेना, प्रस्तावित करना, आमंत्रित करना आदि कार्य-क्रियाएं निहित मानी जाती है।
4. **व्यवस्थापन या संगठन (Organization):** इस स्तर पर विद्यार्थियों को विभिन्न आत्म-सात मूल्यों को एक निश्चित एवं व्यवस्थित क्रम में करना होता है। इसके उपरान्त विद्यार्थी विभिन्न सूत्रबद्ध मूल्यों को आत्मसात तथा उन्हें व्यवस्थापित करते है। इसमे क्रमिक रूप देना, संगठित करना, परिवर्तन करना, संशोधित करना तथा समायोजन करना आदि क्रियाएं निहित रहती है।
5. **चरित्रीकरण (Characterization):** भावात्मक क्षेत्र का सर्वोच्च स्तर है। इस स्तर पर विद्यार्थी स्वीकार्य मूल्यों के अनुरूप स्वाभाव का प्रदर्शन तथा कार्य करता है इनका स्पस्ट प्रभाव उसकी जीवन शैली में परिलक्षित होता है। इस स्तर पर मूल्य चरित्र के स्थायी अंग बन जाते है।

क्रित्यात्मक या मनोचालात्मक क्षेत्र (Conative or Psychomotor Domain)

इस क्षेत्र का संबंध विद्यार्थी के मांसपेशियों के विकास व उसके अनुप्रयोग तथा शारीरिक क्रियाओं के संचलन एवं समन्वय की योग्यता से है। इसमें विद्यार्थी के शारीरिक क्रियाओं के विकास तथा प्रशिक्षण एवं कौशल विकास के लक्ष्य निहित रहते है जिसके द्वारा विद्यार्थी में शारीरिक एवं गामक योग्यताओं व कौशल विकास किया जाता है। इस क्षेत्र को पांच भागों में विभाजित किया गया है जोकि निम्न है-

1. प्रत्यक्षीकरण (Perception): इस क्षेत्र का संबंध विद्यार्थी द्वारा किसी शारीरिक व गामक क्रियाओं का संचलन करने से पूर्व घटना, वस्तु, कार्य या उनकें संबंधो के प्रति सचेत होने की प्रक्रिया से है।
2. व्यवस्था (Set): इस स्तर पर विद्यार्थी अपने प्रत्यक्षीकरण के आधार पर किसी विशेष प्रकार के कार्य या क्रिया को करने के लिए मानसिक, शारीरिक तथा संवेगात्मक स्तर पर प्रारूप या योजना बना लेते है।
3. निर्देशित अनुक्रिया (Guided Response): इस स्तर पर विद्यार्थी किसी शारीरिक या गामक क्रिया का संपादन किसी अन्य व्यक्ति (शिक्षक या प्रशिक्षक या मार्गदर्शक) के निर्देशन में करता है क्योकि इसके अंतर्गत जटिल कौशल वाली क्रियाओं पर बल दिया जाता है।
4. कार्य प्रणाली (Mechanism): इस स्तर पर विद्यार्थी किसी शारीरिक या गामक क्रिया या कार्य को करने के लिए आत्मविश्वास के साथ कुशलता प्राप्त करने का प्रयास करता है।
5. जटिल प्रत्यक्ष अनुक्रिया (Complex Overt Response): इस स्तर पर विद्यार्थी किसी विशेष शारीरिक या गामक जटिल कार्य को सरलता व सहजता के साथ संपन्न कर लेता है। इसके अंतर्गत विद्यार्थी में किसी जटिल कार्य या क्रिया को करने की योग्यता एवं कौशल का विकास हो जाता है।

अन्य वर्गीकरण एवं उपागम (Other Taxonomies and Approaches)

ब्लूम के वर्गीकरण के आधार पर ही भारत में भी कई वर्गीकरणों का विकास किया गया है। इनमें से दो उपागम अधिक प्रचलित एवं महत्वपूर्ण माने जाते है। जिनका विवरण इस प्रकार है-

आर०सी०ई०एम० उपागम (R.C.E.M. Approach)

रीजनल कॉलेज ऑफ़ एजुकेशन, मैसूर के डॉ० डेव द्वारा 1967ई० में शिक्षण लक्ष्यों को व्यावहारिक ढंग से लिखने के लिए इस उपागम को विकसित किया था। इसमें लक्ष्यों के निर्धारण का आधार ब्लूम वर्गीकरण ही था किन्तु संज्ञानात्मक क्षेत्र को छ: के स्थान में चार स्तरों में विभाजित किया है। ये चार स्तर क्रमशः ज्ञान, बोध, अनुप्रयोग तथा सृजनात्मकता है। इसमें सृजनात्मकता के अंतर्गत ही विश्लेषण, संश्लेषण तथा मूल्यांकन स्तरों को निहित मान लिया गया है। यह उपागम सत्रह प्रकार मानसिक योग्यताओं के विकास में सक्षम माना जाता है। जिनका विवरण निम्न है-

लक्ष्य	मानसिक योग्यताएं
ज्ञान	प्रत्यास्मरण अभिज्ञान
बोध	सम्बन्ध देखना उदाहरण देना विभेद करना वर्गीकरण करना व्याख्या करना प्रमाणित या सिद्ध करना सामान्यीकरण करना
अनुप्रयोग	तर्क करना परिकल्पना बनाना परिकल्पना स्थापित करना परिणाम निकालना पूर्व कथन करना
सृजनात्मकता	विश्लेषण संश्लेषण मूल्यांकन

एन०सी०ई०आर०टी० उपागम (N.C.E.R.T. Approach)

शिक्षण लक्ष्यों को व्यवहारपरक ढंग से लिखने के लिए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली ने भी अपना वर्गीकरण विकसित किया। इस उपागम के अंतर्गत ब्लूम वर्गीकरण के तीनों क्षेत्रों को शामिल किया गया है किन्तु यह ब्लूम वर्गीकरण से अलग है। इसमें छ: स्तरों पर व्यवहारपरक ढंग से शिक्षण लक्ष्यों को लिखने पर बल दिया गया है। यह छ: निम्न है-

1. **ज्ञान (Knowledge):** इसमें ऐतिहासिक विषय वस्तु से सम्बंधित तथ्यों, घटनाओं, कालक्रमों, स्थानों, शासकों, महापुरुषों, विचारों, वर्गीकरण आदि सूचनाओं एवं जानकारियों का प्रत्यास्मरण तथा अभिज्ञान सम्बन्धी क्रियाएं निहित होती है।
2. **अवबोध (Understanding):** इसमें इतिहास सम्बंधित विषयवस्तु की जानकारी व ज्ञान के साथ-साथ विषयवस्तु की अच्छी समझ निहित रहती है।
3. **अनुप्रयोग (Application):** इसमें किसी परिस्थति विशेष में अधिगमित ऐतिहासिक ज्ञान का भिन्न या अलग या नवीन परिस्थिति में अनुप्रगोग किया जाता है।
4. **कौशल (Skill):** इसमें इतिहास सम्बंधित विषयवस्तु के प्रायोगिक प्रदर्शन एवं प्रस्तुतीकरण में कुशलता प्राप्त करने का व्यवहार सम्बंधित होता है।

5. **रूचि (Interest):** इसके अंतर्गत विद्यार्थी में इतिहास अध्ययन की रूचि को प्रबल बनाये जाने का प्रयास किया जाता है। इसके माध्यम से विद्यार्थी को इतिहास के प्रति जिज्ञासु बनाने का प्रयास किया जाता है।
6. **अभिवृति (Attitude):** इसके अंतर्गत विद्यार्थी में स्वस्थ एवं सकरात्मक मनोवृति का विकास किया जाता है।

अभ्यास प्रश्न

6. इतिहास शिक्षण के उद्देश्य किससे अधिक प्रभावित रहते है?
7. इतिहास शिक्षण के लक्ष्य की दो विशेषताएं लिखिए?
8. ज्ञानात्मक क्षेत्र के लक्ष्यों को ब्लूम ने कितने स्तरों में विभाजित किया है?
9. आर.सी.ई.एम. उपागम का विकास किसने किया है?
10. आर.सी.ई.एम. उपागम के सृजनात्मक स्तर के अंतर्गत कौन से स्तरों को शामिल किया गया है?

3.8 उद्देश्यों तथा लक्ष्यों में अन्तर (Difference between Aims and Objectives)

उद्देश्यों तथा लक्ष्यों में अंतर को समझना आवश्यक है क्योकि उद्देश्य एवं लक्ष्य दोनों एक ही प्रकार के परिप्रेक्ष्य में समनार्थक आशय या अर्थ में प्रयुक्त किए जाते है। यहाँ पर अंग्रेजी भाषा में इनके लिए प्रयुक्त शब्दावलियों द्वारा भली-भांति समझा जा सकता है। लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives) के इनके अन्तरों को निम्नलिखित तालिका द्वारा समझा जा सकता है-:

उद्देश्य (Aims)	**लक्ष्य (Objectives)**
यह एक प्रकार के सामान्य कथन होते है।	यह एक प्रकार के निश्चित एवं विशिष्ट कथन होते है।
उद्देश्य सदैव आदर्शवादिता से प्रभावित होते है इसी लिए इनकी पूर्ण प्राप्ति कभी संभव नहीं मानी जाती है।	लक्ष्य सदैव व्यावहारिकता एवं यथार्थता से प्रभावित होते है इसीलिए इनकी पूर्ण प्राप्ति संभव मानी जाती है।
उद्देश्यों का क्षेत्र अत्यंत व्यापक होता हैं क्योकि इसमें समाज व राज्य के द्वारा विषय विशेष से प्राप्त किए जा सकने वाले सभी आदर्शों को समाहित किया जाता है।	लक्ष्यों का क्षेत्र सीमित होता है क्योकि इसमें स्तर विशेष की विषय-वस्तु से सम्बंधित लक्ष्यों को ही समाहित किया जाता है।
उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए केवल शिक्षक ही	लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए शिक्षक और विद्यालय ही

उत्तरदायी नहीं होता है अपितु सम्पूर्ण शैक्षिक व्यवस्था, समाज एवं राष्ट्र सामूहिक रूप से उत्तरदायी होते है।	पूर्ण रूप से उत्तरदायी होते है।
उद्देश्यों के आधार पर ही विषयवस्तु का चयन, शिक्षण नीतियों का निर्धारण एवं विभिन्न प्रकार पाठ्य-क्रियाओं का नियोजन किया जाता है।	लक्ष्यों के आधार पर उपर्युक्त विधियों, प्रविधियों, युक्तियों आदि का चयन एवं अनुप्रयोग निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति हेतु किया जाता है।
इनकी प्राप्ति की कोई निश्चित समय सीमा निर्धारित नहीं की जाती है।	इनकी प्राप्ति की समय सीमा निर्धारित एवं निश्चित होती है।
उद्देश्य अधिगमकर्ता को प्रत्यक्ष रुप से निर्देशित एवं प्रभावित नहीं करते है।	लक्ष्य अधिगमकर्ता को प्रत्यक्ष रूप से निर्देशित एवं प्रभावित करते है।
इनका स्रोत मुख्य रूप से सामजिक दर्शन माना जाता है	इनके स्रोत का आधार मनोवैज्ञानिक होता है।

3.9 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अंतर्गत इतिहास विषय की उत्पत्ति, इतिहास अवधारणा का विकास, इसके अर्थ, प्रकृति एवं क्षेत्र की व्याख्या की गई है। इसमें इतिहास विषय में ऐतिहासिक विषयवस्तु विवेचना व पुष्टि हेतु मुख्य अवधारणाओं का वर्णन किया गया है। इस इकाई में प्रजातांत्रिक देश इतिहास शिक्षण के उद्देश्यों, लक्ष्यों, शिक्षण लक्ष्यों के वर्गीकरण एवं उद्देश्य एवं लक्ष्य के अन्तर की व्याख्या की गई है।

3.10 शब्दावली

1. **हिस्टोरिया:** इसका तात्पर्य जानना या ज्ञात करना या सत्य की खोज है।
2. **प्रकृति**: किसी विषय की अध्ययन विषयवस्तु का स्वरुप किस प्रकार है।
3. **क्षेत्र:** इसका अर्थ उस सीमा से है जहाँ तक किसी विषय का अध्ययन किया किया जाना चाहिए या किया जा सकता है।
4. **उद्देश्य:** एक ऐसा कथन जो किसी आदर्श प्राप्ति की वांछनीयता को इंकित करते है।
5. **लक्ष्य:** एक ऐसा कथन जो व्यवहारपरक तथा प्राप्त किया जा सकता हो।

3.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. हेरोडोटस
2. जर्मनी

3. वैज्ञानिक पद्धति एवं वस्तुनिष्टता
4. तीन भागों में
5. सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक, एवं सांस्कृतिक इतिहास
6. आदर्शवाद से
7. व्यवहारपरक एवं प्राप्य
8. छ: स्तरों में
9. प्रो०डवे ने
10. विश्लेषण, संश्लेषण एवं मूल्यांकन

3.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Kochar, S. K., (2009) Teaching of History, Sterling Publishers Private Limited, New Delhi
2. सिन्हा, अतुल कुमार, (2003) इतिहास मूल्य और अर्थ, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.) लिमिटेड, नई दिल्ली
3. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा (2005) सामाजिक विज्ञान का शिक्षण, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली
4. Singh, Y. K., (2008) Teaching of History: Modern Methods, APH Publishing Corporation, New Delhi

3.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. इतिहास को परिभाषित करते हुए इसकी प्रकृति एवं क्षेत्र का वर्णन कीजिए?
2. इतिहास के अर्थ को स्पस्ट करते हुए इसके विकास की अवधारणा की व्याख्या कीजिए?
3. इतिहास की प्रकृति का निर्धारण करते हुए इसके क्षेत्र की विवेचना कीजिए?
4. एक प्रजातांत्रिक देश में इतिहास शिक्षण के क्या उद्देश्य होने चाहिए? विवेचना कीजिए?
5. इतिहास शिक्षण के प्रमुख उद्देश्यों का वर्णन करते हुए उद्देश्यों एवं लक्ष्यों में अन्तर स्पस्ट कीजिए?
6. आप के दृष्टीकोण से इतिहास शिक्षण के लक्ष्यों को वर्गीकृत करने के लिए कौन सा उपागम उपयुक्त है? उसका वर्णन करते हुए उसकी व्याख्या कीजिए?
7. शिक्षण लक्ष्यों को स्पस्ट करते हुए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद के उपागम का वर्णन कीजिए?

इकाई 4- इतिहास में विकासशील कौशल: इतिहास के शिक्षण में उपागम, विधियाँ एवं प्रविधियाँ तथा साधन

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 इतिहास में विकासशील कौशल
4.3.1 कौशल
4.3.2 शिक्षण कौशल
4.4 इतिहास शिक्षण के उपागम
4.5 शिक्षण विधियाँ एवं प्रविधियाँ
4.6 इतिहास के शिक्षण में संसाधन या साधन
4.7 सारांश
4.8 शब्दावली
4.9 अभ्यास प्रश्नों का उत्तर
4.10 संदर्भ ग्रंथ सूची
4.11 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

इतिहास का अध्ययन भूतकाल का बोध कराता है, वर्तमान की समझ विकसित करता है एवं वर्तमान के लिए कर्तव्य-सन्देश प्रदान करता है और भविष्य के लिए बहुमूल्य संचित ज्ञान की धरोहर बन जाता है। इसी कारण इतिहास की मानव जीवन में सर्वथा असंदिग्ध मानी जाती है, क्योकि विद्यमान जगत का कोई भी अणु, जीव व चेतन तथा इससे निर्मित समूह या समाज ऐसा नहीं होगा जिसके विकास के अध्ययन इतिहास के माध्यम से न होता हो। इसकी उपयोगिता एवं महत्व की असंदिग्धता के सम्बन्ध में प्रो० शेक अली का मत है कि 'इतिहास की उपेक्षा करने वाले राष्ट्र का कोई भविष्य नहीं होता है।' इसीलिए इतिहास के अध्ययन को अत्यंत उपयोगी माना जाता है किन्तु कुछ विद्वान ज्ञानाभाव में इसे अनुपयोगी मानते है। वास्तविकता में अन्य विषयों के समान इतिहास भी एक महत्वपूर्ण विषय है। शैक्षिक विमर्श में माना गया है कि इतिहास मानव को भूतकाल की झाँकी प्रस्तुत करके उसे शिक्षित व प्रशिक्षित करता है। वर्तमान से तुलना करने हेतु अतीत का आधार प्रदान करता है और भविष्य के विषय में अनुमान लगाने में सहायता करता है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप इस योग्य हो जाएंगे कि:

1. कौशल को परिभाषित कर सकेंगे।
2. शिक्षण कौशल को परिभाषित एवं व्याख्या कर सकेंगे।
3. इतिहास शिक्षण के लिए शिक्षण कौशल के महत्व को स्पस्ट कर सकेंगे।
4. उपागम को परिभाषित कर सकेंगे।
5. आगमन उपागम की विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे।
6. निगमन उपागम को परिभाषित करते हुए उसके सोपानों का वर्णन कर संकेंगे।
7. अंतर्विषयक उपागम की अवधारणा को स्पस्ट कर सकेंगे।
8. रचनात्मक उपागम के महत्व का वर्णन कर सकेंगे।
9. शिक्षण विधि को परिभाषित कर सकेंगे एवं विधि तथा प्रविधि में अन्तर कर सकेंगे।
10. इतिहास शिक्षण व्याख्यान विधि की विवेचना कर सकेंगे।
11. इतिहास शिक्षण की अभिनय विधि को परिभाषित कर सकेंगे एवं उसके गुण और दोषों को बता सकेंगे।
12. प्रोजेक्ट विधि को स्पस्ट कर सकेंगे एवं इसके सोपानों का वर्णन कर सकेंगे।
13. इतिहास शिक्षण की समस्या-समाधान विधि की विवेचना कर सकेंगे।
14. वाद-विवाद विधि के गुणों और सीमओं का वर्णन कर सकेंगे।
15. स्रोत विधि की उपयोगिता तथा उसके स्रोतों के वर्गीकरण का वर्णन कर सकेंगे।
16. चर्चा विधि के गुण एवं सीमाओं का वर्णन कर सकेंगे।
17. कथन प्रविधि की व्याख्या कर सकेंगे।
18. इतिहास शिक्षण के लिए साधनों के महत्व की विवेचना कर सकेंगे।
19. इतिहास के लिए अवशेषों, स्थानों तथा इमारतों के महत्व को स्पस्ट कर सकेंगे।
20. इतिहास शिक्षण के लिए समाचार पत्र, पत्रिकाओं, रेडियो तथा टेलीविज़न की उपयोगिता के महत्व की चर्चा कर सकेंगे।

4.3 इतिहास में विकासशील कौशल

किसी भी विषय के अध्ययन व अध्यापन करने के लिए विषय ज्ञान व कौशल दक्षता के साथ-साथ किसी निश्चित उपागम व पद्धति के अनुपालन करते हुए प्रभावी शिक्षण प्रक्रिया का संपादन करने का प्रयास किया जाता है। अन्य विषयों के समान इतिहास विषय की भी अपने उपागम, पद्धतियां, शिक्षण विधियाँ, प्रविधियाँ तथा युक्तियाँ आदि है। किसी विषय की समझ एवं प्रदान किए जाने वाले ज्ञान की प्रभावशीलता हेतु विभिन्न उपयुक्त माध्यमों को अनुप्रयोग में लाया जाता है। विषय-वस्तु तथा आयुवय के अनुरूप इतिहास के अध्ययन-अध्यापन हेतु विभिन्न उपलब्ध माध्यमों को अनुप्रयुक्त किया जाता है। शिक्षण को

प्रभावी एवं ग्रहणशील बनाने में केवल उपलब्ध शिक्षण माध्यमों की भूमिका पर ही सब कुछ निहित नहीं होता है अपितु इनको अनुप्रयोग में लाने वाले व्यक्ति अर्थात शिक्षक पर भी निर्भर करता है कि वह कितने उत्तम कोटि का शिक्षण कर सकता है और उसके शिक्षण की प्रभावशीलता का आंकलन अधिगमकर्ताओं की उपलब्धियों के आधार पर होती है।

किसी शिक्षक के लिए एक विषय का गहनतम ज्ञान व जानकारी तथा विभिन्न उपलब्ध शिक्षण माध्यमों को जानना आवश्यक माना जाता है। शिक्षक को न केवल शिक्षण में अनुप्रयुक्त होने वाले विभिन्न उपागमों, पद्धतियों, विधियों-प्रविधियों, युक्तियों आदि का ज्ञान होना चाहिए अपितु उनको शिक्षण में प्रभावशाली रूप से अनुप्रयोग में लाने का कौशल तथा दक्षता का होना भी आवश्यक है। शिक्षक के पास जब तक विभिन्न कौशलों में दक्षता एवं प्रवीणता नहीं होंगी तब तक वह विभिन्न शिक्षण माध्यमों का प्रभावी सम्प्रेषण में अनुप्रयुक्त नहीं कर सकेगा। विद्यार्थी जीवन में आप को कई बार ऐसे अनुभव प्राप्त हुए होंगे कि शिक्षक के ज्ञान होने बावजूद भी अच्छा शिक्षण न कर पाया हो। इसके लिए कई कारक जिम्मेदार हो सकते है किन्तु इनमे से विभिन्न शिक्षण माध्यमों में शिक्षक की कौशलता भी अत्यंत महत्वपूर्ण कारक है। अब यहाँ यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि कौशल या कुशलता का शिक्षण में क्या महत्व या उपादेयता है?

4.3.1 कौशल

कौशल से तात्पर्य है कि किन्हीं विशेष अधिगम परिस्थितियों में ज्ञान को अनुप्रयोग में लाने की योग्यता से है। कौशल में वह योग्यताएं निहित मानी जाती है जो अच्छे कार्य प्रदर्शन तथा शिक्षण में सहायक होती है। किसी भी कौशल का विकास करना व उसमे उत्कृष्टता लाना अत्यंत कठिन कार्य है जिसके लिए अत्यधिक अभ्यास की आवश्यकता होती है। कौशलों का विकास के किए अधिक अभ्यास एवं ज्ञानेन्द्रियों के प्रभावी संयोजन आवश्यक होता है। जैसे- शिक्षण कौशल का विकास शिक्षक को विद्यार्थियों से अंत:क्रिया करने, उनसे बातचीत करने, उनकों सुनकर और उनकों देख कर प्रभावी रूप से शिक्षण करने में सहायक होता है। किसी भी कौशल में प्रवीणता प्राप्त करने हेतु प्रयत्न एवं त्रुटी का नियम सबसे उपयुक्त है किन्तु कभी- कभी यह भी देखने में पाया गया है कि कुछ व्यक्तियों में किन्ही क्षेत्र विशेष में जन्मजात कौशल पाए जाते है जिन्हें आसानी से कम समय एवं श्रम में परिष्कृत तथा परिमार्जित किया जा सकता है। विभिन्न क्षेत्रों में सफलतापूर्वक कार्य संपादन हेतु विभिन्न कौशलों में प्रवीणता होना आवश्यक है जैसे- शिक्षण कौशल, संगठन कौशल, प्रदर्शन कौशल, तकनीकी कौशल आदि। यहाँ पर चूँकि इतिहास शिक्षण के संदर्भ में विमर्श हो रहा है। अत: यहाँ पर शिक्षण कौशलों की संक्षिप्त में चर्चा करना आवश्यक है।

4.3.2 शिक्षण कौशल

शिक्षण प्रक्रिया अवधि में शिक्षक को अनेक कार्यों का संपादन एक साथ करना पड़ता हैं जैसे लिखना, कथन करना, प्रश्न पूंछना, वर्णन करना, स्पष्ट करना, प्रदर्शन करना आदि। इसी कारण शैक्षिक प्रक्रिया को

विभिन्न क्रियाओं का सकुल माना जाता है। शिक्षक का मुख्य ध्येय होता है कि विद्यार्थिओं को शिक्षण क्रियाओं में संलग्न रखना । सभी शिक्षण कौशलों की प्रकृति एक समान नही होती। इनमें निहित शिक्षण व्यूहरचनाओं तथा शिक्षण व्यवहारों में भी काफी अन्तर होता है। इसलिए शिक्षण कौशलों की अभ्यास प्रक्रिया एवं इनके विकास प्रक्रिया में अन्तर स्वाभाविक रूप से निहित रहता है। शैक्षिक धरातल पर किसी शिक्षक के शिक्षण कौशलों का प्रकटीकरण उसके शिक्षण व्यवहार में प्रदर्शित होता है। कक्षागत परिस्थिति में शिक्षक द्वारा सम्पादित की जाने वाली सभी क्रियाएँ विद्यार्थियों के अधिगम सफलता के प्रति केन्द्रित रहती हैं। इन क्रियाओं में व्याख्यान देना, उदाहरण प्रस्तुत करना, लेखन कार्य करना, प्रश्न पूंछना तथा प्रदर्शन आदि सम्मिलित रहती है। शिक्षण प्रक्रिया अवधि में प्रयुक्त की जाने वाली सभी प्रकार की क्रियाएँ ही शिक्षण कौशल मानी जाती हैं।

शिक्षक शिक्षा का मुख्य ध्येय है कि देश या समाज के लिए अच्छे एवं निपुण शिक्षकों का तैयार करना। इसके लिए शिक्षक शिक्षा के कार्यक्रम का नियोजन किया गया जिसमें प्रशिक्षुओं को विविध शिक्षण आयामों एवं विशिष्ट शिक्षण कौशलों में दक्ष तथा निपुण बनाया जाता है। शिक्षण कौशल को अनेकों विद्वानों ने परिभाषित किया उनमें से कुछ प्रमुख परिभाषाओं निम्न है-

- **श्री बी0 के0 पासी** जी ने शिक्षण कौशल शब्द को इस प्रकार परिभाषित किया हैं:- "शिक्षण कौशल उन परस्पर सम्बन्धित शिक्षण-क्रियाओं या व्यवहारों का समूह हैं जो विद्यार्थी के अधिगम को सुगम बना देते हैं।"
- **एन0 एल0 गेज के अनुसार** "शिक्षण कौशल वे अनुदेशनात्मक क्रियाएँ और विधियाँ है जिनका प्रयोग एक शिक्षक अपनी कक्षा में कर सकता है। ये शिक्षण के विभिन्न स्तरों से सम्बन्धित होती है या शिक्षक के कार्य-निष्पादन में निरन्तरता बनाए रखती हैं।"
- **शैक्षिक शब्दकोष के अनुसार** "कौशल मानसिक व शारीरिक क्रियाओं की क्रमबद्ध और समन्वित प्रणाली होता हैं।"

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर यह माना जा सकता है कि शिक्षण कौशल शिक्षक के पास शिक्षण क्रियाओं या व्यवहारों का वह समुच्चय है जो शिक्षण को प्रभावशाली तथा अन्त:क्रियापूर्ण बनाता है एवं शिक्षक के कार्य-निष्पादन में सुधार के साथ निरन्तरता बनाए रखता है। इतिहास शिक्षण में अनुप्रयोग होने वाले शिक्षण कौशल है जैसे-प्रस्तावना कौशल, व्याख्यान कौशल, उद्दीपन परिवर्तन कौशल, उदाहरण एवं दृष्टान्त कौशल, श्यामपट्ट कौशल, प्रश्न कौशल, अनुशीलन कौशल आदि।

शिक्षण कौशल निसंदेह शिक्षक के लिए प्रभावी साधन है जो शिक्षण के लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक है किन्तु अभी भी कौशलों को और अधिक प्रभावशाली बनाए जाने की आवश्यकता है जिसके कारण अभी इस ओर विकास के लिए प्रयास किए जा रहे है।

4.4 इतिहास शिक्षण के उपागम

एक उपागम शिक्षण के प्रति एक प्रबुद्ध दृष्टिकोण है। शिक्षण की सम्पूर्ण अनुदेशानात्मक प्रक्रिया को उपागम दर्शन प्रदान करता है। एक उपागम अधिगम का एक सिद्धांत या एक दर्शन के समान सामान्यत: विद्यार्थी कैसे अधिगम करते है, से सम्बद्ध है। ये मनोवैज्ञानिक दृष्टि से केन्द्रित हो सकते है जैसेकि व्यवहारवाद या संज्ञानात्मकवाद। उपागम को परिभाषित करना कठिन एवं अस्पस्ट है क्योकि इसकी प्रकृति अत्यंत व्यापक है फिरभी इसकी एक सामान्य परिभाषा यह मानी जा सकती है कि उपागम अधिगम की प्रकृति के संदर्भ में सिद्धांतों, विश्वासों या विचारों का एक समूह है जो कक्षा में व्याख्यायित होता है। उपागम शिक्षण प्रक्रिया के सम्पूर्ण वर्णक्रम के अपेक्षित समूहों एवं दिशा को उपलब्ध कराने के साथ उसकी समझ प्रदान करते है। यह सामान्य नियमों या सामान्य सिद्धांतों के समूहों से अधिगम को सरल, सुगम एवं संभव बनाते है। यहाँ पर कुछ प्रमुख उपागमों की चर्चा की जा रही है। जो निम्न है-

i. **आगमन उपागम-** आगमन उपागम दर्शन के उस विधा पर आधारित है जो विशिष्ट या विशेष ज्ञात ज्ञान या अनुभव या तथ्यों एवं घटनाओं के निरीक्षण व परीक्षण तथा विश्लेषण के आधार पर सामान्यीकृत नियमों तथा सिद्धान्तों के विकास की प्रक्रिया है। इस उपागम के आधार पर कुछ शिक्षण सूत्रों का भी विकास हुआ है। इनमें से प्रमुख है जैसे- ज्ञात से अज्ञात की ओर, विशिष्ट से सामान्य की ओर तथा मूर्त ज्ञान से अमूर्त ज्ञान की ओर आदि।

   इस उपागम का शिक्षण में अनुप्रयोग करते समय शिक्षक विद्यार्थी के संचित ज्ञान या अनुभव को उपयोग में लेते है और इसके आधार पर विभिन्न उदाहरणों या दृष्टान्तों का प्रस्तुत करते हुए विद्यार्थी को निरीक्षण, परीक्षण एवं विश्लेषण के अवसर प्रदान कर उनमें अन्तर्निहित सामान्य नियमों या सिद्धांतों को निकलवाने का प्रयत्न करता है। इस उपागम द्वारा ज्ञात ज्ञान या अनुभव की विशिष्टता को अन्तर्सम्बन्धों के आधार पर एक विशेष नियम में वर्गीकृत करते हुए इनका सामान्यीकरण किया जाता है। इतिहास का अध्यापन कराते समय विद्यार्थियों के समक्ष विभिन्न ऐतिहासिक तथ्यों, घटनाक्रमों व परिस्थितियों से सम्बंधित अनेक उदाहरणों व दृष्टान्तों का प्रयोग करते हुए सामान्य विचार या ज्ञान का प्रतिपादन किया जा सकता है। जैसे- विदेशी आक्रमणकारी भारत में क्यों सफल रहे? इसके लिए विभिन्न कालखंडों के घटनाक्रमों व परिस्थितियों का वर्णन करते हुए सामान्यीकृत तथ्य निकलवाएं जा सकते है। इस उपागम का प्रयोग सभी विषयों के शिक्षण में प्रभावी रूप से किया जा सकता है। आगमन उपागम के निम्न सोपान है-

   - **ऐतिहासिक घटनाक्रमों या दृष्टान्तों या उदाहरणों का प्रस्तुतीकरण** -इस सोपान के अंतर्गत विद्यार्थिओं के सम्मुख एक ही प्रकार या मिलते-जुलते ऐतिहासिक घटनाक्रमों या दृष्टान्तों या उदाहरणों को प्रस्तुत किया जाता है जोकि उनके संचित ज्ञान या अनुभव से सम्बंधित हो।
   - **घटनाक्रमों या दृष्टान्तों या उदाहरणों का विश्लेषण** -इस सोपान के अंतर्गत प्रस्तुत ऐतिहासिक घटनाक्रमों या दृष्टान्तों या उदाहरणों का विद्यार्थिओं से निरीक्षण करवाते हुए

उनका विश्लेषण कराया जाता है जिसके माध्यम से विद्यार्थिओं को उनमें निहित सामान्य तथ्यों या तत्वों को खोज कर एक ही परिणाम पर पहुंचने के लिए अभिप्रेरित किया जाता है।

- **सामान्यीकरण** -इस सोपान सामान्य तत्वों या तथ्यों के आधार पर सामान्यीकृत नियम या धारणा को स्थापित किया जाता है।
- **परीक्षण-** इस सोपान में विद्यार्थी सामान्यीकृत नियम या धारणा की विभिन्न उपलब्ध सूचना के आधार पर जाँच एवं परीक्षण करते है।

ii. **निगमन उपागम** -निगमन उपागम दर्शन की उस विधा पर आधारित है जो आगमन विधि की लगभग विपिरार्थक मानी जाती है। इस उपागम में सामान्यीकृत सामान्य से विशिष्टीकरण के ओर अथवा सामान्य नियम का प्रतिपादन कर उसे विशिष्ट या विशेष घटनाक्रमों या दृष्टान्तों या उदाहरणों के माध्यम से सिद्ध या प्रमाणित किया जाता है। साधारण दृष्टि में यह कहा जा सकता है कि इस उपागम में सर्वप्रथम शिक्षक द्वारा किसी सामान्य ऐतिहासिक धारणा या विचार या नियम को प्रस्तुत किया जाता है और फिर इसके प्रमाणन या सत्यता हेतु विशिष्ट घटनाक्रमों या दृष्टान्तों या उदाहरणों का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए जैसे सिन्धु नदी घाटी सभ्यता को हड़प्पा सभ्यता मानने की उपयुक्तता हेतु विभिन्न तार्किक विचारों या कारणों द्वारा इस सभ्यता को हड़प्पा सभ्यता ही मानने की धारणा को सिद्ध करना। आगमन के समान निगमन उपागम भी विषयों के शिक्षण प्रभावी रूप से अनुप्रयोग में लाया जा सकता है। इस उपागम में सामान्यत: निम्न सोपान अनुपालित होते है-

- **सामान्य नियमों या धारणाओं या विचारों का प्रस्तुतीकरण-** इस सोपान के अंतर्गत शिक्षक सर्वप्रथम विद्यार्थिओं के सम्मुख किसी सामान्य नियम या धारणा या विचार आदि को प्रस्तुत करते है।
- **विभिन्न नियमों या धारणाओं या विचारों में सम्बन्धों की स्थापना** -इस सोपान में सामान्य नियम या विचार या धारणा को विश्लेषित करते हुए उनमें अन्तर्निहित तर्क-युक्त-सम्बन्धों का निरूपण किया जाता है।
- **उदाहरणों, घटनाओं या धारणाओं आदि द्वारा परीक्षण** -इस सोपान में सामान्य नियम या धारणा या विचार के परीक्षण हेतु विभिन्न समदर्शी धारणा या विचार या घटना या तथ्य के प्रस्तुत करते हुए सामान्य की पुष्टि या प्रमाणन किया जाता है।

iii. **अंत:विषयक या अंतर्विषयक उपागम-** इस उपागम में विधियों एवं विश्लेषणात्मक संरचना के एकीकृत समन्यवयन से एक से अधिक शैक्षिक अनुशासन से सम्बंधित प्रसंग, विषय, प्रश्न या प्रकरण की समीक्षा एवं अनुदेशन किया जाता है। इस उपागम की कसौटी बहु-विषययी धारणाओं एवं मार्गदर्शक सिद्धान्तों का एकीकरण व पूर्ण व्यवस्थित स्वरुप से है जोकि किसी परीक्षित प्रकरण या विषय की सुसंगत व विश्लेषणात्मक ज्ञान के साथ सुस्पस्ट समझ प्रदान करता है। यह उपागम शिक्षा एवं शिक्षण के व्यापक दृष्टीकोण पर आधारित है जो शिक्षक और विद्यार्थी

को सक्रियतापूर्वक शैक्षिक गतिविधियों में संलग्न रखते हुए एक साथ कई उद्देश्यों की प्राप्ति का प्रयोजन निहित रहता है। इसमें ज्ञान को एक इकाई के रूप में ग्रहण किया जाता तथा उसकी सम्पूर्णता तथा अखण्डता को बनाए रहने का प्रयास किया जाता है।

अंतर्विषयक उपागम में एक से अधिक अनुशासन का संश्लेषण होता है तथा विषय सम्बंधित शिक्षकों एवं विद्यार्थिओं के दल बनाए जाते है जोकि संपूर्ण शैक्षिक अनुभव व ज्ञान को समद्ध बनाते है। इस संदर्भ में हेईडी हयेस जैकब्स ने कहा है कि अंतर्विषयक उपागम एक ज्ञप्ति दृष्टीकोण तथा पाठ्यक्रम उपागम है जिसमें किसी एक केन्द्रीय विषय, प्रकरण, मुद्दा, समस्या या कार्य में एक से अधिक अनुशासन की कार्य पद्धति एवं भाषा का जागरुक अनुप्रयोग है। यह उपागम विद्यार्थिओं को विभिन्न अनुशासनों के अन्तर्निहित अर्थपूर्ण सम्बन्धों को जानने तथा समझने में समर्थ बनाता व सहायता करता है। इस उपागम के लिए लक्ष्य है कि विद्यार्थिओं को अधिक से अधिक सुसंगत, कम खंडित तथा प्रेरित अनुभव दिए जाए। इसके अनुप्रयोग के तीन सोपान निम्न है-

- **विषयवस्तु** -इस सोपान के अंतर्गत अधिगम कराए जाने वाले विषय से सम्बंधित निश्चित प्रकरणों, मुद्दों, प्रसंग या समस्या आदि का चयन व निर्धारण किया जाता है।
- **कौशल एवं चिंतन प्रक्रियाएं-** इस सोपान के अंतर्गत विधार्थियों के अधिगम के लिए उपयुक्त मानदंडों को विकसित किया जाता है जैसेकि आलोचनात्मक चिंतन, अध्ययन बोध, विश्लेषण, कौशल आदि। इस सोपान में ही शैक्षिक गतिविधियों से सम्बंधित क्रिया-प्रक्रिया भी सम्पादित होती है।
- **आंकलन-**इस सोपान में अधिगम उपलब्धि के जाँच हेतु कौशल एवं चितन प्रक्रियाओं के प्रदर्शन जैसे निबंध लिखने, प्रोजोक्ट्स, कक्षा सहभागिता, चर्चा आदि के अवसर देकर अधिगम आंकलन किया जाता है। अंतर्विषयक उपागम को नीचे दिए गए चित्र से भलीभाति समझा जा सकता है

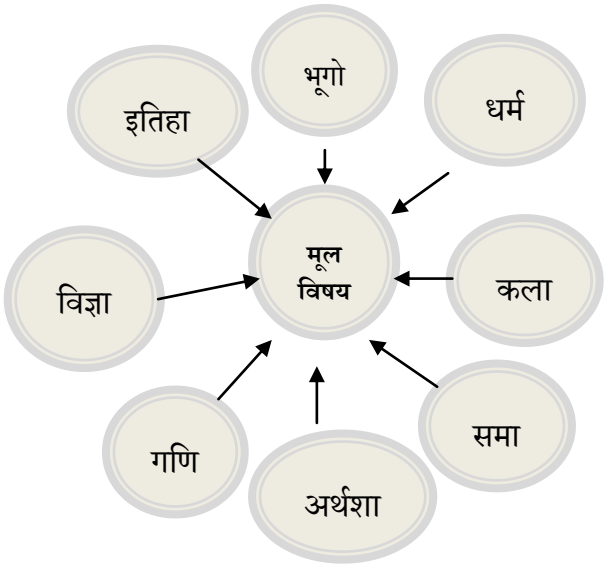

अंतर्विषयक उपागम प्रक्रियात्मक स्वरुप

iv. **रचनात्मक या संरचनात्मक उपागम -** रचनात्मक मूलभूत रूप से इस सिद्धांत पर आधारित है कि अवलोकन एवं वैज्ञानिक अध्ययन के आधार पर विद्यार्थी कैसे अधिगम करते है । इसके अंतर्गत माना गया है कि विद्यार्थी विभिन्न परिस्थितियों द्वारा प्राप्त अनुभव व इनके परावर्ती अनुभव के आधार पर ही अपने ज्ञान व समझ के आयामों की रचना करता है। इस उपागम में किसी विशेष शिक्षण-अधिगम विधि या प्रविधि के स्थान पर बहुपक्षीय गतिविधियों को अधिगम परिस्थितियों में अनुप्रयोग का विकल्प सुझाया गया है। इस उपागम का मूल ध्येय है कि कोई भी विद्यार्थी स्वयं के प्रयास से निरीक्षण, परीक्षण, जिज्ञासु प्रवृति तथा आत्म-चिंतन से ही ज्ञान, बोध, कौशल आदि का अधिगम करता है। कक्षा में अध्ययनरत प्रत्येक विद्यार्थी पारिवारिक, सामजिक-आर्थिक एवं शैक्षिक पृष्ठभूमि तथा शारीरिक, मानसिक व ग्राहता की क्षमता में अन्तर रखता है। ऐसी परिस्थिति में कितना ही ज्ञानी शिक्षक क्यों न हो या कितना प्रभावशाली शिक्षण क्यों न करता हो किन्तु विद्यार्थियों के लिए शिक्षण समान लाभदायक नहीं हो सकता है। इसी कारण यह उपागम शिक्षण के स्थान पर अधिगम पर अधिक केन्द्रित है।

अधिगम केन्द्रित होने के कारण यह उपागम किसी विशेष शिक्षण पद्धति की अनुशंसा नहीं करता है अपितु अधिगम परिस्थितियों के निर्माण को अधिक महत्व देता है जो विद्यार्थिओं को अधिगम हेतु प्रोत्साहित करे, एवं ज्ञान, बोध, अनुभव ग्रहण करने व कौशल के विकास में सहायक हो।

इस उपागम को मीनिंग-मेकिंग सिद्धांत के रूप परिभाषित किया जाता है जोकि ज्ञान की प्रकृति एवं विद्यार्थी कैसे अधिगम प्रारंभ करते है, को व्याख्यायित किया जाता है। इस उपागम की अधिगम परिस्थितियों में विद्यार्थी को एक सक्रिय सामाजिक भूमिका प्रदान की जाती है। इसमें

विद्यार्थी को आलोचनात्मक चिंतन व प्रयोजित अभिप्रेरणा तथा स्वतंत्रता के अवसर दिए जाते है। इस उपागम के आधार पर कक्षागत विशेषताएं निम्न मानी जाती है-

- विद्यार्थी अधिगम में सक्रिय सहभागिता ले।
- कक्षा का वातावरण पूर्णतया प्रजातांत्रिक होना चाहिए।
- क्क्षागत शैक्षिक गतिविधियाँ अंतर्क्रियात्मक एवं विद्यार्थी केन्द्रित होनी चाहिए।
- शिक्षक अधिगम प्रक्रिया में एक मार्गदर्शक के रूप में विद्यार्थियों को उत्तरदायित्वपूर्ण एवं स्वायत्त अधिगम हेतु प्रोत्साहित करता रहे।

नीचे प्रदर्शित चित्र द्वारा रचनात्मक अधिगम प्रक्रिया को भली-भांति समझा जा सकता है।

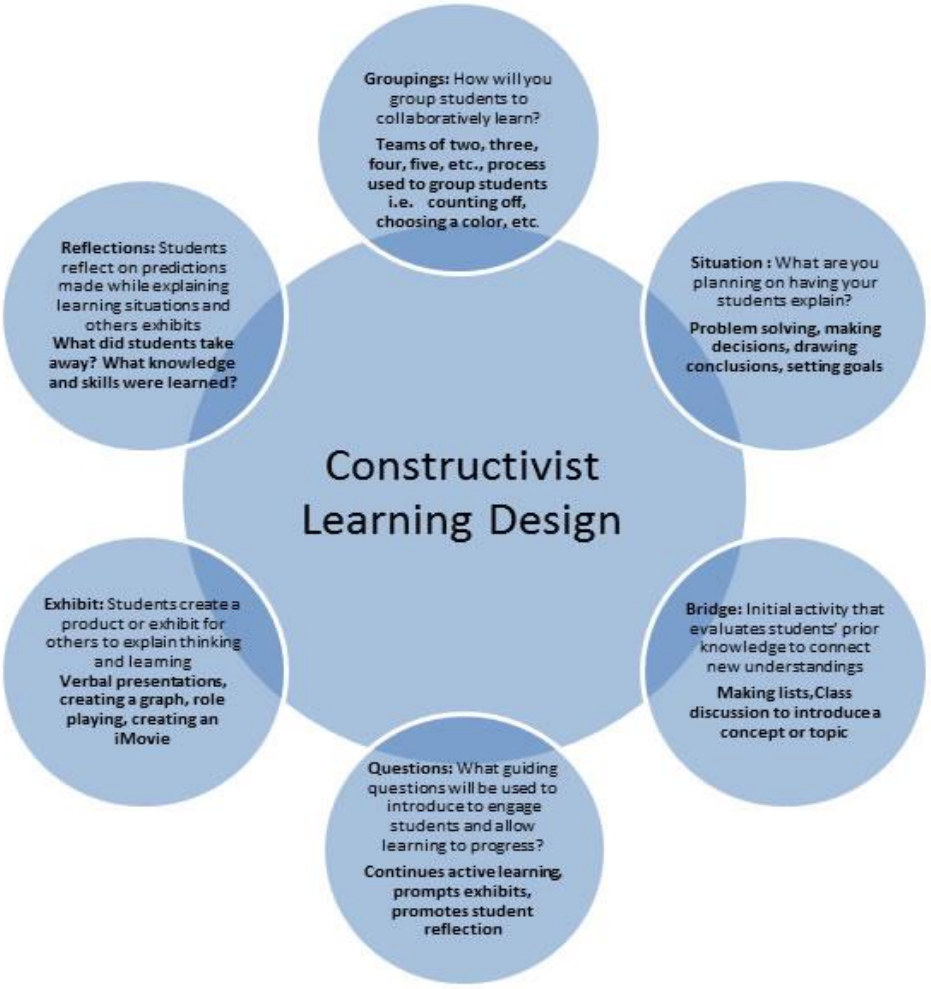

रचनात्मक उपागम का प्रारूप

अभ्यास प्रश्न

1. यह कथन किसका है कि इतिहास की उपेक्षा करने वाले राष्ट्र का कोई भविष्य नहीं होता है?
2. शिक्षण कौशल उन परस्पर सम्बन्धित शिक्षण-क्रियाओं या व्यवहारों का समूह हैं जो विद्यार्थी के अधिगम को सुगम बना देते हैं| यह परिभाषा किसने दी है?
3. किस उपागम में एकीकृत समन्यवयन से एक से अधिक शैक्षिक अनुशासन से सम्बंधित प्रसंग, विषय, प्रश्न या प्रकरण की समीक्षा एवं अनुदेशन किया जाता है?
4. किस उपागम के आधार पर विद्यार्थी अपने अनुभव व इनके परावर्ती अनुभव के आधार पर ही अपने ज्ञान व समझ के आयामों की रचना करता है?
5. कौन सा उपागम विशिष्टीकरण से सामान्यीकरण के नियम आधारित होता है?

4.5 शिक्षण विधियाँ एवं प्रविधियाँ

शिक्षण लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु शिक्षक विभिन्न प्रणालियों या ढंगों को अपनाते है जिससे वह अपने शिक्षण को सरलतम एवं प्रभावपूर्ण ढंग से विद्यार्थिओं तक सम्प्रेषित कर सकें। इसके लिए शिक्षक विभिन्न माध्यमों एवं साधनों का चयन करता है जो शिक्षण के प्रभावपूर्ण प्रस्तुतीकरण में व विद्यार्थियों के अधिगम में अधिक ग्राहता लाने के साथ-साथ शिक्षण लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक होते है। इन विभिन्न माध्यमों व साधनों को ही शिक्षण विधि व प्रविधि की संज्ञा दी जाती है। विधि से आशय शिक्षण की प्रणाली या ढंग से है जिसके माध्यम से शिक्षक किसी विषयवस्तु को विद्यार्थियों तक सम्प्रेषित करता है। शिक्षण विधि को **थट एवं गेरबेरिच** ने इस प्रकार परिभाषित किया है कि ' विधि प्रक्रियाओं की वह सुपरिभाषित संरचना है जिसमें परिस्थितियों की आवश्यकता के अनुसार विभिन्न प्रविधियाँ एवं युक्तियाँ निहित होती है।' इसी प्रकार **बाइनिंग एवं बाइनिंग** ने अच्छी शिक्षण विधि को यह परिभाषित किया कि ' सर्वोत्तम विधियाँ वह है जो रूचि और प्रयास को उत्प्रेरित करती है, जो स्व-क्रिया एवं स्व-प्रेरणा को विकसित करती है, जो विधार्थियों को स्वतन्त्र विचार और निर्णय हेतु प्रेरित करती है तथा जो सहयोग एवं समाजीकरण हेतु प्रतिपादित करती है।'

उपरोक्त आधार पर यह कहा जा सकता है कि शिक्षण विधि एक विशेष प्रणाली या ढंग है जो निश्चित संरचनाओं पर आधारित विशिष्ट सम्प्रेषण कौशलों का समुच्चय है जो परिस्थितिजन्य आवश्यकता के अनुरूप प्रविधियों व युक्तियों का सहयोग लेते हुए शिक्षण लक्ष्यों की प्राप्ति का प्रयास करती है। इसे यह भी कहा जा सकता है कि यह किसी चयनित उपागम पर आधारित अधिगम के लिए विषय-वस्तु के प्रस्तुतीकरण की निश्चित योजना है।

शिक्षण विधि के समान शिक्षण प्रविधि का भी प्रयोग इतिहास शिक्षण में व्यापक रूप से होता है और कभी-कभी विधि और प्रविधि को एक ही मान लिया जाता है किन्तु वास्तविकता में ऐसा होता नहीं है। शिक्षण प्रविधि एक अतिविशिष्ट एवं मूर्त युक्ति के रूप में शिक्षण के किसी तत्कालिक लक्ष्य का प्राप्ति हेतु है। यह एक एकल क्रिया के रूप किसी प्रक्रिया के अधीन प्रयुक्त की जाती है।

विधि और प्रविधि में अन्तर

शिक्षण विधियों एवं प्रविधियों को एक समान मान लेने पर कई बार भ्रम की स्तिथि उत्पन्न हो जाती है। वस्तुतः इतिहास शिक्षण में विधि, प्रविधि, रीति, युक्ति तथा प्रक्रिया आदि शब्द प्रयोग में लाये जाते है। यहाँ पर केवल विधि और प्रविधि पर ही चर्चा की जा रही है। इनमें बहुत सूक्ष्म अन्तर करना कठिन है फिर भी यह कहा जा सकता है कि विधि अधिक व्यापक एवं स्वतन्त्र अस्तित्व रखती है। एक विधि के आंचल में कई विधियाँ समाहित हो सकती है जबकि प्रविधि में स्व निर्भरता नहीं होती है। प्रविधियों को एक विशेष ज्ञानावसर तरीका जिनके द्वारा किसी विशिष्ट ज्ञान प्राप्ति या अधिगम में सहायता मिलती है। विधियों के समान प्रविधियों की भी सामान्य संरचना या निश्चित पैटर्न होता होता है किन्तु प्रविधियाँ विधियों के समान व्यापक नहीं होती है। इतिहास शिक्षण में निम्नलिखित प्रमुख विधियाँ एवं प्रविधियाँ है-

i. **व्याख्यान विधि (Lecture Method) -** इतिहास शिक्षण की परम्परागत एवं सर्वाधिक प्रचलित विधि है। व्याख्यान का शाब्दिक आशय भाषण देने से है। यह विधि उच्च स्तर की कक्षाओं के लिए अत्यधिक उत्तम मानी जाती है। इसमें लिखित या मौखिक या दोनों स्वरूपों के आधार शिक्षक द्वारा शिक्षण सम्प्रेषित किया जाता है। इसकों चाक और टॉक विधि (Chalk and Talk Method)के रूप में भी जाना जाता है। इस विधि में शिक्षक सक्रिय होकर किसी पकरण विशेष पर व्याख्यान देते है और विद्यार्थी निष्क्रिय श्रोता की भांति व्याख्यान सुनते है। व्याख्यान विधि को प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति से सम्बंधित माना जाता है। प्राचीन काल में गुरु या शिक्षक आश्रमों व गुरुकुलों में भाषण या प्रवचन या व्याख्यान द्वारा शिक्षण किया करते थे। इस विधि को क्रिया-विधि एवं विचारों की प्रवाहशीलता की दृष्टी से एक पक्षीय माना जाता है। फिर भी इस विधि का प्रयोग बहुतायत में शिक्षा के सभी स्तरों में किया जाता है।

व्याख्यान विधि के गुण(Merits of Lecture Method)

- सरल एवं संक्षिप्त विधि
- समय और श्रम की दृष्टि से मितव्ययी
- तथ्यात्मक सूचनाओं के प्रस्तुत्तीकरण व सम्प्रेषण की उत्तम विधि
- प्रेरणात्मक शिक्षण विधि
- विषयवस्तु का प्रस्तुतीकरण व्यापकता व स्पष्टता के साथ
- विद्यार्थियों के बड़े समूह के लिए उपयोगी
- तार्किक क्रम स्थापना के लिए उत्तम विधि
- द्रुत शिक्षण विधि

व्याख्यान विधि के दोष (Demerits of Lecture Method)

- सीखने के कम अवसर तथा प्रजातांत्रिक मूल्यों के विरुद्ध
- तार्किक चिंतन के विकास में बाधक
- स्मरण पर अधिक बल
- स्वतन्त्र चिंतन का पूर्ण आभाव
- शिक्षक केन्द्रित व प्रभुत्ववादी
- विषयवस्तु के अवबोध में कठिनाई
- विद्यार्थिओं में निष्क्रियता
- वैज्ञानिक दृष्टीकोण का आभाव

ii. **अभिनय विधि या नाट्यीकरण विधि (Dramatization)-** तिहास शिक्षण में अभिनय विधि अत्यंत उपयोगी है। इसके माध्यम से विद्यार्थियों में सहज प्रवृतियों को प्रोत्साहित करने का अवसर मिलता है तथा इतिहास का अध्यापन करने में सरलता होती है। ऐतिहासिक घटनाक्रमों , पात्रों एवं भावों को सजीवता देने व प्रत्यक्ष अनुभव प्रदान करने में यह विधि श्रेष्ठ है। अभिनय से आशय होता है कि अतीत या वर्तमान की किसी स्थिति को क्रिया और जीवन द्वारा सजीव बना देने से है। अभिनय एक ऐसा सशक्त माध्यम है जिसके माध्यम से विद्यार्थिओं को अभिव्यक्ति का अवसर मिलता है। विभिन्न ऐतिहासिक पात्रों के विषय में अध्ययन कर व अभिनय कर विद्यार्थिओं में कल्पना शक्ति का विकास होता है। अभिनय से विद्यार्थीयों को नई जानकारी व सीखने में सहायता मिलती है, मनोभावना का उन्नयन होता है और भ्रांतियां नष्ट होती है। अभिनय संपादन हेतु विद्यार्थियों में पहल करने की भावना, उचित आरोह-अवरोह का ज्ञान, उच्चारण दोष मुक्त , योजना बनाने तथा उसे क्रियान्वित करने की योग्यता व क्षमता का होना आवश्यक माना जाता है। इस विधि से भावनाओं का परिष्कृत होती है तथा अनुभवों में व्यापकता आती है।

अभिनय विधि के गुण (Merits of Dramatization Method)

- सहज वृतियों का विकास
- अध्यापन में सरलता व सुविधा
- विषयवस्तु को रुचिप्रद एवं वास्तविक बनाती है
- प्रत्यक्ष अनुभव प्रदान करती है

- कल्पना शक्ति का विकास
- मनोभावना का उन्नयन
- विद्यार्थियों की सक्रिय सहभागिता
- अभिनय गुणों का विकास एवं अभिव्यक्ति का अवसर

अभिनय विधि के दोष (Demerits of Dramatization Method)

- विद्यार्थियों में अभिनय-कला के ज्ञान का आभाव
- अनुशासन भंग होने की समस्या
- काल्पनिकता अधिक तथा वास्तविकता कम
- आर्थिक कठिनाईयां
- समय व श्रम अधिक
- स्थितियों का मंचन संभव नहीं
- अभिव्यक्ति का अवसर श्रेष्ठ को अधिक व कमजोर को कम

iii. **प्रोजेक्ट या योजना विधि (Project Method) -**प्रयोजनवाद की दार्शनिक पृष्ठिभूमि पर आधारित प्रोजेक्ट विधि का प्रतिपादन जॉन डीवी के शिष्य डब्लू. एच. किलपैट्रिक ने किया था। **किलपैट्रिक** महोदय ने प्रोजेक्ट को परिभाषित किया कि "प्रोजेक्ट एक उद्देश्यपूर्ण क्रिया है जिसे लगन के साथ सामाजिक वातावरण मे किया जाता है।" इसी प्रकार **जे.ए. स्टीवेन्सन** ने प्रोजेक्ट को परिभाषित करते हुए कहा कि "प्रजोएक्ट एक समस्यामूलक कार्य है जो अपनी स्वाभाविक परिस्थितियों के अंतर्गत पूर्णता को प्राप्त करता है।" इस विधि में विद्यार्थी विभिन्न मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के आधार पर अधिगम करता है जैसे- विद्यार्थी साहचर्य, सहयोग एवं क्रियाशीलता, करके सीखना, जीवन द्वारा सीखना, सामाजिक विकास, उपयोगिता, स्वतंत्रता एवं वास्तविकता आदि।

प्रोजेक्ट विधि के पद (Steps of Project Method)

1. परिस्थिति तैयार करना (Providing a Situation)
2. समस्या का चयन करना एवं सुझाव देना (Selection of a Problem and suggestion)
3. योजना तैयार करना (Planning)
4. कार्यान्वित करना (Executing)
5. मूल्यांकन करना (Evaluating)
6. रिकॉर्ड करना (Recording)

प्रोजेक्ट विधि की प्रक्रिया

इस विधि की प्रक्रिया में इतिहास शिक्षक सर्वप्रथम कक्षा चर्चा व परिचर्चा के माध्यम से ऐसी परिस्थितियों को सृजित करता है कि समस्या का स्वरुप उभर कर सामने आ जाए और फिर शिक्षक एवं विद्यार्थी मिलकर एक समस्या या प्रोजेक्ट का चयन करते है। शिक्षक की भूमिका मार्गदर्शक की रहती है। समस्या सम्बन्धी जिज्ञासाओं की संतुष्टि शिक्षक द्वारा सुझाव के माध्यम से विद्यार्थियों को प्रदान की जाती है। अगले चरण में विद्यार्थी शिक्षक की सहायता से एवं इतिहास के गहन अध्ययन के आधार पर प्रोजेक्ट को पूरा करने के लिए एक योजना को तैयार करते है। फिर प्रोजेक्ट के कार्यो का विभाजन छोटे-छोटे खण्डों में करके कक्षा को छोटे समूहों में विभाजि कर दिया जाता है तथा प्रत्येक समूह को प्रोजेक्ट सम्बन्धी कार्य की निश्चित जिम्मेदारी दे दी जाती है। प्रोजेक्ट सामूहिक या व्यक्तिगत दोनों तरीकों से पूर्ण किए जा सकते है। शिक्षक प्रोजेक्ट की सम्पूर्ण प्रक्रिया में पथ-पदर्शक के रूप में विद्यार्थिओं का सहयोग करता रहता है। प्रोजेक्ट के पूर्ण हो जाने पर उसका मूल्यांकन किया जाता है तथा उससे सम्बंधित अभिलेखों को तैयार व रिकॉर्ड किया किया जाता है।

प्रोजेक्ट विधि के गुण

- इतिहास शिक्षण की प्रभावशाली एवं रुचिप्रद विधि है।
- इसमें शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों ही सक्रिय रहते है।
- इसमें विधार्थिओं को कार्य करने तथा विचार प्रस्तुत करने की स्वतंत्रता रहती है।
- इस विधि के माध्यम से विद्यार्थिओं में रचनात्मक चिंतन, तर्क शक्ति एवं निर्णय क्षमता का विकास किया जाता है।
- इस विधि में विद्यार्थिओं को उनकी शंका, समस्या व जिज्ञासाओं की संतुष्टि एवं समाधान के लिए पर्याप्त अवसर दिया जाता है।
- इस विधि द्वारा विद्यार्थिओं में स्वाध्ययन की आदतों का विकास किया जा सकता है।
- यह एक मनोवैज्ञानिक विधि है जोकि शिक्षण सिद्धांतों व सूत्रों पर आधारित है।
- इसमें विद्यार्थी को रूचि व क्षमता के अनुकूल कार्य करने की स्वतंत्रता होती है जिससे उनमें नेतृत्व, सहयोग, श्रम के प्रति श्रध्दा एवं करके सीखने की प्रवृति का विकास होता है।
- यह विधि विद्यार्थिओं को यथार्थ, व्यावहारिक एवं सामाजिक ज्ञान प्रदान करती है।

प्रोजेक्ट विधि की सीमाएं

- यह एक दीर्घ विधि है जिसमें समय और शक्ति का अपव्यय अधिक होता है।
- इसके माध्यम से क्रमबद्ध व व्यवस्थित रूप में विषय का अध्ययन संभव नहीं है।
- यह विधि प्राथमिक स्तर के विद्यार्थिओं के लिए अनुपयोगी है।
- इतिहास विषयवस्तु के प्रत्येक प्रकरण का शिक्षण इसके द्वारा संभव नहीं है।

- इस विधि में शिक्षक पर अधिक कार्यभार रहता है।
- इस विधि द्वारा प्राप्त ज्ञान को सतही माना जाता है।
- प्रोजेक्ट कार्यों का पुनरीक्षण भली-भांति नहीं हो पता है।
- पुस्तकालय एवं शिक्षण सहायक सामग्री के आभाव में विधि का अनप्रयुक्त होना।
- कभी- कभी सामान्य एवं महत्वहीन समस्याओं के प्रोजेक्ट में समय की बर्बादी।

iv. **समस्या समाधान विधि (Problem Solving Method) -**समस्या समाधान विधि को भी प्रयोजनवाद पर आधरित माना गया है। यह शिक्षण की एक महत्वपूर्ण विधि है जिसमें विद्यार्थिओं को समस्या समाधान का प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। यहाँ समस्या से तात्पर्य उस अनुत्तरित प्रश्न से है जिसका समाधान खोजना शेष है। इस विधि को वैज्ञानिक या विज्ञान की विधि की संज्ञा दी जाती है। रिस्क (Risk) के अनुसार " विद्यार्थिओं के मन में समस्या को उत्पन्न करने की ऐसी प्रक्रिया है जिसमें वह उद्देश्य से उत्साहित होकर एवं गम्भीरतापूर्वक चिंतन कर एक युक्तिसंगत समाधान निकालते हैं जिसे समस्या समाधान कहते है।"

इस विधि में शिक्षक विद्यार्थिओं के सम्मुख इतिहास विषय से सम्बंधित पाठों, प्रकरणों या समस्याओं को प्रस्तुत करता है। विधार्थी अपनी रूचि व क्षमता के अनुकूल समस्या का चयन कर उसके समाधान में लग जाते है। समस्या चयन के समय यह सावधानी रखी जाती है कि समस्या का स्वरुप स्पस्ट हो तथा विद्यार्थी के अधिगम अनुभव के अनुकूल हो। शिक्षक के मार्गदर्शन व सहायता से विद्यार्थी समस्या का विश्लेषण व संश्लेषण करते हुए समाधान तक पहुंचने का प्रयास करते है।

समस्या की विशेषताएं (Characteristics of the Problem)

समस्या का चयन करते समय यह ध्यान दिया जाना आवश्यक है कि समस्या में निम्नलिखित गुण होना चाहिए-

- समस्या का शैक्षिक मूल्य होना चाहिए।
- समस्या व्यावहारिक तथा उपयोगी हो।
- समस्या विद्यार्थिओं की रूचि एवं मानसिक स्तर के अनुकूल हो।
- समस्या में नवीनता होनी चाहिए।
- समस्या तार्किक व विद्यार्थियों के पूर्वज्ञान से सम्बंधित हो।
- समस्या परिकल्पनाजन्य हो।
- समस्या से सम्बंधित संसाधन व पुस्तकालय की उपलब्धता हो।

समस्या समाधान विधि के पद (Steps of Problem Solving Method)

1. समस्या का चयन
2. समस्या का परिभाषिकरण
3. तथ्यों या आंकड़ों का संग्रह
4. परिकल्पनाओं का प्रतिपादन
5. समाधानात्मक निष्कर्ष पर पहुंचना
6. मूल्यांकन
7. कार्य का अभिलेखन

समस्या समाधान विधि के गुण (Merits of Problem Solving Method)

समस्या समाधान विधि के निम्नलिखित गुण है-

- समस्याओं को हल करने तथा करके सीखने की प्रवृति का विकास होता है।
- इसके द्वारा विद्यार्थिओं में वैज्ञानिक दृष्टीकोण एवं विभिन्न प्रकार के कौशलों का विकास होता है।
- इससे विद्यार्थिओं में आत्मनिर्भरता पूर्वक एवं मिल-जुल कर कार्य करने के गुण का विकास होता है।
- विद्यार्थी में तर्क, चिंतन तथा निरीक्षण शक्ति का विकास होता है।
- अतीतकालीन सन्दर्भों का नवीन परिप्रेक्ष्य में देखने व प्रयोग में लाने के गुण का विकास होता है।
- इसे ज्ञान प्राप्ति का सुलभ साधन एवं व्यक्तिगत ध्यान में वृद्धि करने में सहायक है।

समस्या समाधान विधि के दोष (Demerits of Problem Solving Method)

समस्या समाधान विधि के निम्नलिखित दोष माने जाते है-

- समय और श्रम की दृष्टि से अत्यंत अपव्ययी एवं दीर्घकालीन विधि है।
- इसमें प्रयोग पर अधिक बल दिया जाता है।
- विद्यालय स्तर पर संसाधनों व पुस्कालयों का आभाव होता है।
- इसके प्रयोग के लिए योग्य एवं निपुण शिक्षकों का आभाव।
- छोटी कक्षाओंमें यह विधि अनुपयोगी है।
- सम्पूर्ण विषयवस्तु का अध्यापन इस विधि से संभव नहीं है।

v. **चर्चा विधि (Discussion Method) -** चर्चा विधि इतिहास शिक्षण की एक प्रमुख विधि है। इसके अंतर्गत इतिहास विषय से सम्बंधित किसी विषय या प्रकरण पर शिक्षक और विधार्थी पारस्परिक विचारों का आदान-प्रदान करते है। इसमें शिक्षक सर्वप्रथम किसी प्रश्न या प्रकरण को निर्धारित करता है फिर शिक्षक और विद्यार्थी निर्धारित प्रकरण या प्रश्न पर स्वतंत्रतापूर्वक विचार-विमर्श करते है। विचार-विमर्श या वाद-विवाद में विद्यार्थी विभिन्न संज्ञानात्मक योग्यताओं का प्रयोग करते हुए एक सर्वमान्य निष्कर्ष निकालने का प्रयास करते है। इस विधि की सफलता विचार प्रकटीकरण की स्वतंत्रता एवं सक्रिय अंत:क्रिया पर निर्भर करती है। ली के अनुसार "चर्चा विधि एक शैक्षिक समूह क्रिया है जिसमें शिक्षक एवं विद्यार्थी सहयोगात्मक रूप से किसी समस्या या प्रकरण पर पारस्परिक चर्चा करते है। "

चर्चा के प्रकार (Types of Discussion)

इस विधि को सामान्यत: दो भागों में विभाजित किया जाता है-

1. **औपचारिक चर्चा (Formal Discussion)**

   इस चर्चा की एक निर्धारित योजना तथा उद्देश्य होते है एवं चर्चा निश्चित नियम व सिद्धांतों पर आधारित होती है। चर्चा के व्यवस्थापन एवं नियंत्रण हेतु सक्षम व्यक्तियों को चयनित या नियुक्त किया जाता है।

2. **अनौपचारिक चर्चा (Informal Discussion)**

   इस चर्चा में नियमों एवं सिद्धांतों का बंधन नहीं होता है इसका मुख्य ध्येय विद्यार्थिओं को भावाभिव्यक्ति एवं विचारों को स्वतंत्रतापूर्वक व्यक्त करने योग्य बनाना है। इसमें शिक्षक और विद्यार्थी किसी समस्या या प्रकरण पर स्वतंत्रता के साथ आपसी विचार-विमर्श करते है।

चर्चा विधि के गुण (Merits of Discussion Method)

इस विधि के निम्नलिखित गुण है-

- इसमें भावों एवं विचारों को व्यवस्थित रूप में अभिव्यक्ति करने की क्षमता व कला का विकास होता है।
- विद्यार्थी सक्रिय रहते है तथा उनमें गहन अध्ययन व चिंतन प्रवृति का विकास होता है।
- विद्यार्थिओं की संज्ञानात्मक योग्यताओं का समुचित विकास होता है जैसे-निर्णय शक्ति, चिंतन, तर्क, निरीक्षण आदि।
- उच्च स्तर की कक्षाओंके लिए अत्यंत प्रभावी व उपयोगी विधि है।
- इससे आत्मविश्वास एवं स्व-अनुशासन का विकास होता है।
- विद्यार्थिओं में ध्यानपूर्वक सुनने, सहयोग करने, सहिष्णुता आदि गुणों का विकास होता है।

चर्चा विधि की सीमाएं (Limitations of Discussion Method)

इस विधि के निम्नलिखित सीमाएं है-

- इसमें सभी विद्यार्थिओं को समान रूप से अभिव्यक्ति के अवसर नहीं मिलते है।
- इस विधि से शिक्षण में अधिक समय लगता है एवं शिक्षण विषय या प्रकरण से दूर जाने की समस्या रहती है।
- यह निम्न स्तर की कक्षाओं के लिए उपयोगी नहीं होती है।
- इस विधि में कई बार व्यर्थ विवाद या अति अनावश्यक आलोचना समय व लक्ष्यों को नष्ट करते है।
- इसमें कक्षा के उन विद्यार्थिओं की सहभागिता कम रहती है जो स्वाभावता शर्मीले एवं बौद्धिक क्षमताओं में निम्न होते है।

vi. **वाद-विवाद विधि (Debate Method) -** वाद-विवाद विधि को प्राचीन यूनान या ग्रीस में सोफिस्ट्स सुकरात, अरस्तु आदि के चिंतन में अनौपचारिक शिक्षण साधन के रूप में प्रयुक्त होती थी। वर्तमान में वाद-विवाद का बहुतायत अनुप्रयोग राजनैतिक क्षेत्र में, अदालती प्रक्रियाओं में, मीडिया में एवं प्रतिदिन की दैनिक जीवनचर्या में जहाँ व्यक्ति विभिन्न सामाजिक अंतक्रिया में प्रतिवाद करता रहता है, देखा जा सकता है। एक अनुदेशन विधि के रूप में वाद-विवाद वह विधि है जिसमें विद्यार्थिओं की सहभागिता एक उद्देश्य के दो पक्षों या परिप्रेक्ष्यों पर अभिमतों या तर्कों को आदान-प्रदान करने की प्रक्रिया है जिसमें शिक्षक एक पथप्रदर्शक या मार्गदर्शक की भूमिका निभाता हुआ किसी सर्वमान्य निष्कर्ष या विचार को प्रतिपादित करने का प्रयत्न करता है।

सामान्य रूप में वाद-विवाद को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है कि दो या दो से अधिक व्यक्तियों या विद्यार्थिओं में किसी प्रकरण या समस्या पर विचारों या अभिमतों को आदान-प्रदान करने की प्रक्रिया है। इतिहास शिक्षण में यह विधि अत्यंत उपयोगी है। इतिहास विषय की विषयवस्तु का स्वरुप इस प्रकार का है कि इसके किसी प्रकरण या विषय के निर्धारण में कई प्रकार के साक्ष्यों व तुलनात्मक आधारों पर कोई विचार या धारणा का प्रतिपादन किया जाता है।

वाद-विवाद विधि के गुण (Merits of Debate Method)

वाद-विवाद विधि के निम्नलिखित गुण है-

- उच्च कक्षाओं के अत्यंत उपयोगी तथा प्रभावी विधि है।
- इसके द्वारा विद्यार्थी में आलोचनात्मक विश्लेषण तथा संश्लेषण करने की योग्यता का विकास होता है।

- विद्यार्थिओं में सुनने, बहस करने या तर्क करने, अभिव्यक्त करने आदि गुणों का विकास होता है।
- विद्यार्थिओं में अर्थापन या व्याख्या करने के कौशलों का विकास होता है।
- विचारों या अभिमतों को क्रमबद्ध व सुव्यवस्थित में अभिव्यक्त करने की योग्यता का विकास होता है।
- वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास तथा अर्थपूर्ण व सृजनात्मक अधिगम में सहायक होती है।

वाद-विवाद विधि की सीमाएं(Limitations of Debate Method)

वाद-विवाद विधि के निम्नलिखित सीमाएं है-

- निम्न स्तर की कक्षाओं के लिए अनुपयोगी है।
- कक्षा के अनुशासन भंग होने तथा आपसी विवाद होने की संभावनाएं अधिक होती है\
- सभी विद्यार्थियों को अभिव्यक्ति का समान अवसर नहीं प्राप्त हो पाता है।
- वाद-विवाद विधि से शिक्षण करने की क्षमता रखने वाले शिक्षकों का आभाव है।
- पाठ्यक्रम को इस विधि से पूर्ण कर पाना संभव नहीं है।
- समय और श्रम की दृष्टी से दीर्घ व मितव्ययी है।
- इतिहास विषय में सामान्य निष्कर्ष प्रतिपादित कर पाना कठिन कार्य है।

vii. **स्रोत विधि (Source Method) -**यह विधि इतिहास विषय के लिए अतिविशिष्ट एवं उपयोगी है। यहाँ पर स्रोत से आशय उस सूत्र से है जिससे कोई विशेष सामग्री प्राप्त की जाती है और इतिहासकार उस सामग्री के आधार पर अतीत का इतिहास लिखता है। विद्यार्थिओं में यह भावना विकसित करना कि इतिहास कपोल-कल्पना पर आधारित न होकर वास्तविकता तथा सत्य पर आधारित है। इसके लिए उनको स्रोतों की जानकारी होनी आवशयक है। इतिहास शिक्षण में ऐतिहासिक भ्रमण, निरीक्षण तथा क्रिया आधारित शिक्षण पर अधिक बल दिया जाता है किन्तु इतिहास का विषय क्षेत्र विस्तृत होने के कारण यह पूर्णरूप से सम्भव नहीं है। उस परिस्थिति में विभिन्न स्रोतों के माध्यम से इतिहास का वास्तविक एवं प्रभावपूर्ण शिक्षण किया जाता है। इतिहास विषय की विषय सामग्री विभिन्न स्रोतों से ही एकत्रित की गई है। स्रोत ही शेष-चिन्ह, तथ्य, सूचना आदि के आधार है जिनके आधार पर इतिहास लिखा जाता है।

स्रोतों का वर्गीकरण (Classification of Sources)

इतिहास जानने या उनके माध्यम से प्राप्त सूचना, तथ्य, सामगी, सूत्र आदि एवं उनकी प्रकृति के आधार पर स्रोतों को तीन भागों में वर्गीकृत किया जाता है। जोकि निम्न है-

1. **पुरातात्विक स्रोत (Archaeological Sources)**
   इस स्रोत से प्राप्त होने वाली ऐतिहासिक सामग्री को तीन भागों में विभाजित किया जाता है-

- **स्मारक-संबंधी (Monumental)-** इसके अंतर्गत विभिन्न स्मारकीय अवशेषों जैसे महल, भवन, बर्तन आदि को रखा जाता है।
- **पुरालेख संबंधी (Epigraphic) -**इसके अंतर्गत विभिन्न शासकों या राजाओं के पाषाणों, स्तम्भों, चट्टानों, गुफाओं की दीवारों, भवनों की दीवारों, तमपत्रों, मुहरों आदि पर उत्कीर्ण लेख, चित्र एवं आकृति आदि आते है।
- **मुद्रा संबंधी (Numismatics) -**इसके अंतर्गत विभिन्न शासकों की विविध स्थानों तथा कालों की मुद्राएँ आती है।

2. **साहित्यिक स्रोत (Literary Sources)**
   इन स्रोतों को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है-

- **धार्मिक साहित्य (Religious Literature) -**इसके अंतर्गत वैदिक, बौद्ध, जैन, सिख, इसाई, मुस्लिम आदि साहित्य आता है।
- **लौकिक साहित्य (Secular Literature) -**इसको दो भागों में विभाजित किया गया है-
  क- निजी साहित्य- इसके अंतर्गत वह कृतियाँ या साहित्य आता है जोकि किसी लेखक द्वारा व्यक्तिगत रूचि एवं प्रयासों के आधार पर लिखा गया है। जैसे- कालिदास, चाणक्य, पतंजलि, वाणभट्ट आदि।
  ख- राजकीय या प्रशासकीय साहित्य- इसके अंतर्गत वह साहित्य आता है जोकि किसी शासक या प्राधिकारी द्वारा तैयार किया गया या करवाया गया हो। जैसे- शासकीय आदेश, फरमान, घोषणा-पत्र, विवरण पत्र आदि।
- **विदेशी प्रमाण (Foreign Testimony)-** इसके अंतर्गत वह विवरण आता है जोकि विदेशी लेखकों द्वारा लिखा या वर्णित किया गया हो। जैसे- फाह्यान, मेगास्थनीज, प्लूटार्क, जस्टिन, ह्वेनसांग आदि के विवरण।

3. **मौखिक परम्पराएँ (Oral Traditions)**
   इसके अंतर्गत वह विवरण आता है जोकि मौखिक रूप में कहानी या अन्य किसी माध्यम से परंपरागत चला आ रहा हो।

स्रोतों के विभाजन की दूसरी विधा के अनुसार इन्हें दो भागों में विभाजित किया जथा है-

1. **प्राथमिक या मौलिक स्रोत (Primary Sources)-** इसके अन्तर्गत इतिहास के किसी युग या काल विशेष से संबन्धित प्रत्यक्ष अवशेष या विवरण आते है। यह वस्तु, शेष-चिन्ह या

अवशेष या अभिव्यक्ति के किसी रूप आदि में हो सकते है। जैसे- शासन-देश, फरमान, सन्धियां, ग्रंथ, लेख आदि।

2. **सहायक स्रोत (Secondary Sources)-** इसके अंतर्गत वह स्रोत रखे जाते है जो प्राथमिक या मौलिक स्रोत पर आधारित होते है अर्थात मौलिक स्रोत या प्राथमिक स्रोत के आधार पर तैयार किया गया विवरण।

स्रोत विधि की प्रक्रिया (Process of Source Method)

इस विधि में सर्वप्रथम शिक्षक किसी इतिहास सम्बन्धी समस्या या प्रकरण को चयनित एवं प्रस्तुत करता है फिर विधार्थियों को समस्या या प्रकरण से सम्बंधित विभिन्न स्रोत सामग्री की जानकारी प्रदान करता है। फिर कक्षा एवं एवं समस्या का विभाजन छोटे-छोटे भागों में कर लिया जाता है। समस्या या प्रकरण का विभाजन इस प्रकार किया जाता है कि इसमें कुछ अनुत्तरित प्रश्न निहित होने चाहिए। इसके पश्चात विद्यार्थिओं को ऐतिहासिक स्थलों के भ्रमण या विद्यालय पुस्तकालय या विभिन्न पुस्तकालयों या संग्रहालयों पर ले जाकर स्रोतों से परिचय एवं तथ्यों व आंकड़ों के संग्रह हेतु भेजा जाता है। विद्यार्थी विभिन्न स्रोतों से अपनी-अपनी समस्या के तथ्यों या आंकड़ो को संकलित तथा लिपिबद्ध करते हुए समस्या या प्रकरण के अनुत्तरित प्रश्न का समाधान निकालने का प्रयास करते है। विद्यार्थिओं के समाधान पर आवश्यकता अनुरूप संशोधन कक्षा में चर्चा या आपसी विचार-विमर्श के माध्यम से शिक्षक करवाता है। इस प्रकार विद्यार्थी किसी समस्या पर व्यापक व गहन अध्ययन करते हुए निर्धारित अधिगम करते है।

स्रोत विधि के गुण (Merits of Source Method)

इस विधि के निम्नलिखित गुण है-

- इस विधि द्वारा विद्यार्थी इतिहास का यथार्थ एवं वास्तविक ज्ञान प्रत्यक्ष निरीक्षण से प्राप्त करते है।
- यह विधि विद्यार्थिओं को करके या क्रिया द्वारा ज्ञान प्राप्त करने का अवसर देती है।
- इसके माध्यम से विद्यार्थी में तथ्यों या आंकड़ो या सक्ष्यों को एकत्रित करने, संग्रहित करने तथा उनकी प्रमाणिकता जांचने, व्याख्या व अर्थापन करने की योग्यता का विकास होता है।
- यह विधि उच्च स्तर की कक्षाओं के लिए सर्वोत्तम है।
- ऐतिहासिक अनुसंधान के कौशलों तथा संज्ञानात्मक योग्यताओं के विकास में सहायक है।
- विद्यार्थिओं में सामूहिक कार्य करने एवं सहयोग व सहिष्णुता के विकास में सहायक है।

स्रोत विधि की सीमाएं (Limitations of Source Method)

इस विधि के निम्नलिखित सीमाएं मानी जाती है-

- माध्यमिक व निम्न स्तर की कक्षाओं के लिए यह विधि अनुपयोगी है।

- इतिहास के सूत्रों से सम्बंधित साहित्य भारतीय भाषाओ में व अपेक्षित संसाधनों दोनों की सीमित उपलब्धता है।
- यह विधि समय और श्रम दोनों ही परिप्रेक्ष्य में अधिक मितव्ययी है।
- इतिहास शिक्षकों में अपेक्षित दक्षता व कुशलता का आभाव है।
- इसे इतिहास विषयवस्तु के समस्त प्रकरणों के शिक्षण में अनुप्रयुक्त नहीं किया जा सकता है।

viii. **कथन या विवरण प्रविधि (Narration Technique) -**कथन या विवरण प्रविधि इतिहास शिक्षण की एक अत्यंत उपयोगी प्रविधि है। इस प्रविधि के माध्यम से अतीतकालीन अप्रत्यक्ष तथ्यों, सूचानों, घटनाओं, कार्यों, उपलब्धियों आदि से सम्बंधित विवरण को सरल, बोधपूर्ण, स्पस्ट एवं सुगम बनाकर विद्यार्थिओं तक सम्प्रेषित किया जाता है। इसमें शिक्षक की भूमिका अधिक महत्वपूर्ण होती है। शिक्षक अपने व्यक्तित्व एवं वाणी की स्पष्टता व माधुर्य प्रभावोत्पादकता के साथ आवश्यक उद्दीपन परिवर्तन कौशल का प्रयोग करते हुए किसी ऐतिहासिक प्रसंग के शिक्षण को रुचिपूर्ण एवं सुसंगत रूप में विद्यार्थिओं तक पहुंचाता है। शिक्षक के लिए यह आवश्यक माना जाता है कि वह अपने कथन या विवरण को विद्यार्थिओं के स्तर, आयु, मानसिक स्तर एवं बौद्धिक पृष्ठिभूमि के अनुकूल रखना होता है। इस प्रविधि के माध्यम से शिक्षक किसी ऐतिहासिक प्रकरण को इतने रोचक और सजीवता के साथ प्रस्तुत करता है कि विद्यार्थी को ज्ञान प्राप्त करने व समझ विकसित करने में सुविधा रहती है।

कथन प्रविधि की विशेषताएं (Characteristics of Narration Technique)

इस प्रविधि की निम्नलिखित विशेषताएं है-

- इस प्रविधि द्वारा इतिहास पाठ्यक्रम से सम्बंधित प्रकरणों की विषय-सामग्री के सभी पक्षों को समग्रता के साथ कम समय में पूर्ण किए जा सकते है।
- इसके माध्यम से कम समय में अधिक ज्ञान की प्राप्ति होती है अत: अधिक पुस्तकें पढ़ने की आवश्यकता नहीं रहती है।
- इस प्रविधि से विद्यार्थी में ध्यानपूर्वक सुनने एवं समझने के गुणों का विकास होता है।
- विद्यार्थिओं में जिज्ञासाओं को जाग्रत करने तथा तर्कशक्ति के विकास में यह प्रविधि सहायक है।

कथन प्रविधि की सीमाएं (Limitations of Narration Technique)

इस प्रविधि की निम्नलिखित सीमाएं है-

- इस प्रविधि में शिक्षक अधिक सक्रिय तथा विद्यार्थी अधिक निष्क्रिय की भूमिका में रहते है।

- शिक्षक की वाणी, व्यक्तित्व एवं कौशलों में दक्षता व प्रभावोत्पादकता के आभाव में यह प्रविधि आधिक महत्वपूर्ण नहीं रह जाती है।
- इस प्रविधि का अधिक प्रयोग तथा उपयुक्त शिक्षण सामग्री के प्रदर्शन का आभाव शिक्षण में नीरसता ला देता है।
- शिक्षक कथन या विवरण में तारतम्यता, तार्किकता तथा क्रमबद्धता का आभाव रहता है।

ix. **तुलनात्मक विश्लेषण विधि (Comparative Analysis Method)-** तुलनात्मक विश्लेषण से आशय दो या दो से अधिक सम या समान विकल्पों, कालक्रमों, संस्कृतियों, समाजों आदि आदि का विश्लेषण करते हुए अध्ययन करने से है। तुलनात्मक विधि का अनुप्रयोग सर्वप्रथम ऑगस्टस काम्टे ने 1853 ई० में किया था। इसके पश्चात तुलनात्मक विधि के अनेकों प्रारूप उभर कर आए जोकि सामाजिक विज्ञान के विभिन्न उद्देश्यों, प्रदत्तों. सैद्धांतिक अवधारणाओं एवं रूचि आदि के आधार पर तुलना के संदर्भ में प्रयुक्त हुए। एमिल दुर्खीम ने तुलनात्मक विश्लेषण के विषय में यहाँ तक कहा है कि वास्तव में सभी प्रकार के सामाजिक विश्लेषण आवश्यक रूप से तुलना पर आधारित होते है।

इतिहास अध्ययन में तुलनात्मक विश्लेषण विधि का अपना अलग महत्व है। इस विधि के माध्यम से विद्यार्थियों को इतिहास के किसी एक प्रकरण के अंतर्गत सम या समान तथ्यों, सूचनाओं, कालक्रमों, आर्थिक-राजनीतिक पक्ष, संस्कृतियों, सभ्यताओं, समाजों, धर्मों, समुदायों, सामाजिक जीवन व क्रिया-कलापों आदि का शिक्षण किया जाता है। इस विधि द्वारा विद्यार्थिओं में ज्ञान व समझ की प्रवृति का विकास होता है साथ ही उनमें विश्लेषण योग्यताओं का भी होता है।

तुलनात्मक विश्लेषण विधि की विशेषताएं (Characteristics of Comparative Analysis Method)

इस विधि की निम्नलिखित विशेषताएं है-

- यह विधि उच्च स्तर की कक्षाओं के लिए अत्यंत प्रभावकारी है।
- इसके माध्यम से विद्यार्थी में तुलना, निर्णय, विश्लेषण-संश्लेषण, तर्क आदि करने की योग्यताओं का विकास होता है।
- इस विधि के माध्यम से प्राप्त किया गया ज्ञान अधिक स्थायी प्रकृति का होता है।

तुलनात्मक विश्लेषण विधि की सीमाएं (Limitations of Comparative Analysis Method)

इस विधि की निम्नलिखित सीमाएं है-

- यह विधि माध्यमिक व निम्न स्तर की कक्षाओं में उपयोगी नहीं है।
- इसके द्वारा शिक्षण में अधिक समय व श्रम की आवश्यकता होती है तथा प्रकरण से भटकाव होने की सम्भावना भी अधिक रहती है।
- इतिहास की सामग्री व विषयवस्तु का व्यस्थापन तथा नियोजन इस प्रकार का नहीं है कि तुलनात्मक विधि को अधिक अनुप्रयोग में लाया जा सके।

4.6 इतिहास के शिक्षण में संसाधन या साधन (Resources in Teaching of History)

शिक्षण के साधनों या संसाधनों का विद्यार्थियों की अधिगम प्रक्रिया में अत्यंत महत्व है क्योकि इनके माध्यम से ही शिक्षण को रुचिपूर्ण, सरल, रोचक, बोधपूर्ण, गतिशील और मूर्त बनाया जाता है तथा यह साधन अधिगम को स्थायीकृत करने में भी सहायक होते है। साधनों का मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक आधार होता है। इतिहास की विषय-सामग्री अतीत या भूतकाल से सम्बंधित होती है और अतीत प्राय: धूमिल, अस्पस्ट, अप्रत्यक्ष एवं अमूर्त होता है। इस कारण इतिहास शिक्षण के लिए आवश्यक साधनों का प्रयोग सदैव अपेक्षित रहता है। साधनों के द्वारा इतिहास शिक्षण को न केवल मूर्त, सरल व बोधगम्य बनाया जाता है अपितु शिक्षण में सजीवता एवं वास्तविकता की अनुभूति जाग्रत करने का प्रयत्न होता है। जॉन्सन महोदय इस संदर्भ में कहा है कि "इतिहास विषय में चाहे जो परिकल्पना हो एवं इसके शिक्षण उद्देश्य को चाहे जिस रूप में निर्धारित किया जाए , क्षागत परिस्थिति में इतिहास को प्रभावी बनाने व अतीत को सजीव रूप में चित्रण व प्रस्तुतीकरण हेतु अंततः एक आधारभूत विकल्प है।"

इतिहास शिक्षण के लिए अनेकों साधनों को उपयोग में लिया जाता है। यहाँ पर कुछ प्रमुख साधनों की चर्चा की जा रही है-

i. **शेष चिन्ह या अवशेष (Traces)-** अतीत के शेष चिन्हों या अवशेषों के आधार पर ही इतिहासकार इतिहास को लिपिबद्ध करता है। शेष चिन्हों या अवशेषों से तात्पर्य है वह नष्ट न हुई वस्तुएं, भवन, तामपत्र, शिलालेख, स्तम्भलेख, बर्तन, औजार, हथियार, पोशाक, खंडहर आदि से है। इन्हीं अवशेषों की समयावधि के आधार पर अतीतकालीन मानव समाज की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि पक्षों का विवरण प्रस्तुत किया जाता है। अवशेषों का अपने आप में कोई अर्थ नहीं होता है। इतिहासकार अवशेषों में सजीवता प्रदान कर उन्हें विशेष अर्थ प्रदान करता है।

   इतिहास शिक्षण के द्वारा विद्यार्थिओं को अवशेषों के महत्व से अवगत कराया जा सकता है एवं ऐतिहासिक भ्रमण, संग्रहालय आदि के माध्यम से अवशेषों का वास्तविक साक्षात्कार कराया जा सकता है। विद्यार्थिओं को ऐतिहासिक विधि के द्वारा अवशेष के सत्यापन व प्रमाणन प्रक्रिया का

प्रयोग कर किस प्रकार इतिहासकार अस्थिपंजर व अवशेषों में सजीवता लाकर उन्हें अर्थपूर्ण बनाता है, बता कर उन्हें भी ऐसा करने का अवसर देकर इतिहास शिक्षण को रुचिपूर्ण बनाया जा सकता है।

ii. **ऐतिहासिक स्थल (Historical Places) -**ऐतिहासिक स्थलों का इतिहास शिक्षण में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। किसी भी देश के ऐतिहासिक स्थल वह स्थान है जो उस देश के अतीत की गौरवशाली विरासतों के प्रतिबिम्बों का प्रदर्शन करते है। इन स्थलों के द्वारा ही अतीत के मानव जीवन एवं सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि पक्षों की झलक देखने को मिलती है। ऐतिहासिक स्थलों के अंतर्गत निम्न इतिहास सम्बन्धी विषय-सामग्री का प्रत्यक्ष व वास्तविक अध्ययन किया जाता है। जैसे- प्राचीन दुर्ग, किलें, भवन, इमारतें, ऐतिहासिक राजधानियों(फतेहपुर सीकरी, आगरा, दिल्ली, पाटलिपुत्र, काशी, हम्पी आदि), शहरों, शिक्षा केन्द्रों के खंडहरों(तक्षशिला, नालन्दा, विक्रमशिला आदि) , ऐतिहासिक खुदाई के स्थल (मोहनजोदड़ो, हडप्पा, वनवाली, कालीबंगा आदि), मकबरें, दरगाह, गुफाओं, स्तूपों, मंदिरों एवं अन्य आदि।

ऐतिहासिक स्थलों के भ्रमण या पर्यटन द्वारा विद्यार्थिओं को जहाँ एक ओर मनोरंजन होता है वही दूसरी ओर इतिहास घटनाओं, परम्पराओं व धरोहरों का प्रत्यक्ष व वास्तविक ज्ञान प्राप्त करते है। इससे विद्यार्थिओं में खोज की प्रवृति, निरीक्षण-परीक्षण शक्ति के विकास के साथ-साथ इतिहास की यथार्थता का दर्शन कराया जाता है। इससें विद्यार्थिओं में इतिहास अध्ययन की रूचि व विभिन्न मानसिक शक्तियों का विकास किया जाता है।

iii. **ऐतिहासिक भवन या इमारतें (Historical Buildings) -**ऐतिहासिक भवन या इमारतें वह स्थल है जो अतीत से लेकर वर्तमान तक अपने अस्तित्व को पूर्णतया या ध्वंसावशेष के रूप में बनाए रखे हुए है। ऐतिहासिक इमारतें या भवन अपने काल विशेष की कला एवं स्थापत्य का अदभुत नमूना होते है जिनके माध्यम से किसी ऐतिहासिक काल विशेष की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, कला, स्थापत्य आदि की वास्तविक प्रगति का ज्ञान प्राप्त होता है। भारत में अनेकों ऐतिहासिक भवन आज भी अपनी गौरवशाली विरासत को समेटे हुए विद्यमान है। जैसे- हवामहल, पंचमहल, भूल-भुलैया, जहाज महल, कुतुबमीनार आदि।

iv. **ऐतिहासिक पदार्थ (Historical Objects) -**इतिहास शिक्षण में ऐतिहासिक पदार्थों का विशेष महत्व है। ऐतिहासिक पदार्थ अतीत की वह वस्तुएं या अवशेष है जिनका अस्तित्व वर्तमान में भी विद्यमान है। ऐतिहासिक पदार्थों के अवलोकन तथा साक्षात्कार द्वारा विद्यार्थिओं को इतिहास का यथार्थ ज्ञान कराया जाता है। ऐतिहासिक पदार्थ के अंतर्गत जैसे ऐतिहासिक शेष-चिन्ह या अवशेष, भवन या इमारतें, गुफाएं, स्तंभलेख, शिलालेख, तामपत्र लेख, अस्त्र व शास्त्र, बर्तन, मुहरें, सिक्के, वेशभूषा के लिए प्रयोग में लाई जाने वाली पोशाकें, आभूषण आदि आते है। विद्यार्थिओं को इन पदार्थों का दर्शन ऐतिहासिक स्थलों या इमारतों अथवा संग्रहालय में ले जाकर कराया जा सकता है।

v. **समाचार-पत्र एवं पत्रिकाएँ (Newspapers and Magazines) -** इतिहास शिक्षण में द्रश्य सामग्री के रूप में समाचार पत्र एवं पत्रिकाओं का उपयोग किया जाता है। समाचार पत्र व पत्रिकाएँ वह साधन है जिनके माध्यम से न केवल नवीनतम या समसामयिक घटनाक्रमों की जानकारी मिलती है अपितु अतीत कालीन घटनाक्रमों व संदर्भो की भी जानकारी प्राप्त होती है जोकि शिक्षकों एवं विद्यार्थिओं के अत्यंत लाभकारी व उपयोगी होती है। इनमें अधिकांशतः समसामयिक ऐतिहासिक तथ्यों और सूचानों की बहुलता रहती है किन्तु कई बार वर्तमान संदर्भो या घटनाक्रमों की जानकारी व वस्तुस्थिति की समझ हेतु ऐतिहासिक पृष्ठिभूमि को स्पस्ट करना आवश्यक हो जाता है। इतिहास शिक्षक एवं विद्यार्थी विभिन्न समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं में प्रकाशित ऐतिहासिक तथ्यों, सूचानों, विवरणों आदि को अलग से कटिंग करके विज्ञप्ति बोर्ड पर चिपकाकर या बुलेटिन बोर्ड में लगाकर या अन्य किसी माध्यम का प्रयोग कर संकलित, संग्रहित एवं प्रदर्शित कर सकता है।

vi. **पाठ्यपुस्तक (Textbooks) -**पाठ्यपुस्तक वह साधन है जिसमें किसी विषय की विषय-वस्तु या विषय सामग्री को इस प्रकार नियोजित एवं प्रस्तुत किया जाता है कि वह किसी स्तर या कक्षा विशेष के विद्यार्थी एवं शिक्षक के लिए अत्यंत उपयोगी एवं महत्वपूर्ण हो। इतिहास अध्ययन का प्रारम्भिक आधार पाठ्यपुस्तकों को ही माना जाता है। जॉन्सन महोदय पाठ्यपुस्तक को सबसे महत्पूर्ण शिक्षण उपकरण मानते है। किसी कक्षा के लिए एक से अधिक अच्छी पाठ्यपुस्तकों को निर्धारित या चनियत किया जाना चाहिए जिससे शिक्षक को विषयवस्तु एवं शिक्षण विधियों के चयन व प्रस्तुतीकरण में सहायता मिल सके तथा विद्यार्थी को भी स्वक्रिया एवं स्वाध्याय के अच्छे अवसर मिल सके। एक अच्छी पाठ्यपुस्तक की विशेषताएं यह मानी जाती है कि उसमें निम्न गुण समाहित होने चाहिए। जैसे- उद्देश्याधारिता, शुद्धता एवं स्पष्टता, सरल एवं प्रभावोत्पादक भाषा शैली, स्वक्रिया उत्प्रेरकता, चयन विशिष्टीकरण, क्रमबद्धता व व्यवस्थित, समुचित एवं विस्तृत विषयवस्तु, आकर्षक साज-सज्जा व व्यवस्थापन, अभ्यास व मूल्यांकन प्रश्न, संदर्भ सामग्री विवरण, सामाजिक तथा सांस्कृतिक पक्ष पर अधिभार आदि।

vii. **टेलीविज़न (Television) -** टेलीविज़न द्रश्य-श्रव्य साधनों में से सबसे महत्वपूर्ण शिक्षण साधन है। इसका आविष्कार जे०एल० बेयर्ड ने किया था। टेलीविज़न के माध्यम से औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों ही प्रकार का शिक्षण प्रभावी रूप में किया जा सकता है। इस साधन में विद्यार्थी की देखने व सुनने अर्थात दो ज्ञानेन्द्रियां का एक साथ उपयोग होता है। इस कारण अधिगमित ज्ञान अधिक स्थायी रहता है। टेलीविज़न के माध्यम से शिक्षण कार्यक्रमों को एक साथ पर देश में प्रसारित किया जा सकता है। इसके अंतर्गत इतिहास विषय के महत्वपूर्ण एवं प्रभावोत्पादक शिक्षणों को प्रसारित कर विद्यार्थिओं को अच्छे व्याख्यानों एवं शिक्षण कार्यक्रमों से लाभान्वित होने का अवसर प्रदान किया जा सकता है। इसमें पहले से रिकार्डेड एवं सजीव दोनों प्रकार के शिक्षणों को प्रसारित किया जाता है।

टेलीविज़न से विषय विशेषज्ञों द्वारा कठिन प्रकरणों पर तैयार किए गए पाठों को आसानी से विद्यार्थिओं तक पहुँचाया जाता है। विषय विशषज्ञों द्वारा तैयार पाठ शोध व अनुसंधान पर आधारित नवीनतम ज्ञान एवं सूचना को समाहित रखते है। टेलीविज़न अतीत कालीन घटनाओं, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आदि परिस्थितियों का यथार्थ ज्ञान प्रदान करने में सहायक होता है।

viii. **रेडियो (Radio) -**इसका अविष्कार मारकोनी द्वारा किया गया था। रेडियो आधुनिक मौखिक संचार का एक महत्वपूर्ण श्रव्य साधन है। इसकी उपयोगिता इसलिए भी मानी जाती है क्योकि अन्य संचार साधनों के अपेक्षा रेडियो की सर्वसुलभता सर्वाधिक है। इसके माध्यम से ऐतिहासिक प्रसंगों, शासकों, महापुरुषों, घटनाक्रमों आदि से सम्बंधित पाठों या प्रकरणों के शिक्षण को संचारित किया जा सकता है। रेडियो द्वारा एक निर्धारित समय में विभिन्न कक्षाओं के विद्यार्थिओं के लिए इतिहास शिक्षण कार्यक्रमों को प्रसारित किया जा सकता है। दूरस्थ या खुली शिक्षा में इस साधन की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है। इसी कारण वर्तमान में कुछ शैक्षिक संस्थानों ने स्वयं के शैक्षिक रेडियो चैनल्स का प्रसारण प्रारम्भ कर दिया है।

रेडियो के माध्यम से सामान्यत: दो तरह के शिक्षण कार्यक्रमों का प्रसारण किया जाता है-पहला ज्ञानवर्धक पाठों का दूसरा प्रत्यक्ष शिक्षण पाठों का। ज्ञानवर्धक पाठ प्रसारण का पाठ्यक्रम के विशिष्ट प्रकरणों से कोई प्रत्यक्ष संबंध नहीं होता है फिरभी इनके माध्यम से विषयवस्तु की पृष्ठिभूमि से सम्बंधित महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान कर विषय की समझ को बढाया जाता है। प्रत्यक्ष शिक्षण पाठ का पाठ्यक्रम से प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है। इनकों विषय विशेषज्ञों द्वारा तैयार किया जाता है तथा इनका प्रसारण किसी निर्धारित समय पर करके विद्यार्थिओं को सीखने में सहायता पहुचाई जाती है।

अभ्यास प्रश्न

6. इतिहास शिक्षण की किन्हीं तीन क्रियापरक शिक्षण विधि का नाम लिखिए?
7. किस विधि में अभिनय प्रदर्शन के माध्यम से शिक्षण किया जाता है?
8. इतिहास शिक्षण की विधि में शिक्षक की भूमिका मुख्य होती है?
9. इतिहास शिक्षण की किसी एक प्रविधि का नाम लिखिए?
10. इतिहास शिक्षण में प्रयुक्त होने वाले किन्हीं तीन साधनों का नाम बताइए?

4.7 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अंतर्गत इतिहास विषय में विकासशील कौशल, कौशल व शिक्षण कौशल का अर्थ, आगमन, निगमन, अंतर्विषयक तथा रचनात्मक उपागम की व्याख्या की गई है। इसमें इतिहास शिक्षम में प्रयुक्त होने वाली विभिन्न शिक्षण विधियों तथा प्रविधयों का वर्णन किया गया है। इतिहास शिक्षण को प्रभावी बनाने हेतु उपयोग में लिए जाने वाले कुछ शिक्षण साधनों का वर्णन किया गया है।

4.8 शब्दावली

1. **कौशल:** किन्हीं विशेष अधिगम परिस्थितियों में ज्ञान को अनुप्रयोग में लाने की योग्यता या दक्षता या प्रवीणता से है। शिक्षण कौशल: इससे तात्पर्य शिक्षक से सम्बंधित शिक्षण-क्रियाओं या व्यवहारों के समूह से हैं जो विद्यार्थी के अधिगम को सुगम बनाने में सहायक है।
2. **उपागम:** इससे तात्पर्य शिक्षण की सम्पूर्ण अनुदेशानात्मक प्रक्रिया से है जोकि किसी निश्चित विचारधारा या दर्शन पर आधारित होता है।
3. **शिक्षण विधि:** यह एक विशेष प्रणाली या ढंग है जो निश्चित संरचनाओं पर आधारित विशिष्ट सम्प्रेषण कौशलों का समुच्चय है।
4. **शिक्षण प्रविधि:** एक विशेष ज्ञानावसर तरीका जिसके द्वारा किसी विशिष्ट ज्ञान प्राप्ति या अधिगम उद्देश्य को प्राप्त करने में सहायता मिलती है।
5. **साधन:** इससे तात्पर्य उन माध्यमों व उपकरणों से है जो अधिगम की ग्रहणशीलता को बढ़ाते है।

4.9 अभ्यास प्रश्नों का उत्तर

1. प्रो० शेक अली
2. बी. के. पासी
3. अंतर्विषयक उपागम
4. रचनात्मक उपागम
5. आगमन उपागम
6. प्रोजेक्ट विधि, स्रोत विधि, समस्या-समाधान विधि
7. अभिनय विधि
8. व्याख्यान विधि
9. कथन प्रविधि
10. अवशेष, रेडियो, टेलीविज़न

4.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Kochar, S. K., (2009) Teaching of History, Sterling Publishers Private Limited, New Delhi
2. सिन्हा, अतुल कुमार, (2003) इतिहास मूल्य और अर्थ, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.) लिमिटेड, नई दिल्ली
3. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा (2005) सामाजिक विज्ञान का शिक्षण, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली

4. Singh, Y. K., (2008) Teaching of History: Modern Methods, APH Publishing Corporation, New Delhi
5. दीक्षित, उपेन्द्रनाथ एवं बाघेला, हेतसिंह, (2007) इतिहास शिक्षण, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
6. Johnson, H., (1963) Teaching of History in Elementary and Secondary Schools, BiblioLife, New York

4.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. कौशल को परिभाषित करते हुए शिक्षण कौशलों के महत्व का वर्णन कीजिए?
2. उपागम को परिभाषित करते हुए आगमन एवं निगमन उपागम की व्याख्या कीजिए?
3. अंतर्विषयक एवं रचनात्मक उपागम की विवेचना कीजिए?
4. शिक्षण विधि से आप क्या समझते है? आप के दृष्टीकोण से इतिहास शिक्षण के सबसे उपयुक्त विधि कौन है? इसकी कारण सहित विवेचना कीजिए?
5. चर्चा एवं वाद-विवाद विधि को परिभाषित करते हुए इनमें अन्तर स्पस्ट कीजिए?
6. आप के दृष्टीकोण से इतिहास शिक्षण की विभिन्न विधियों मे कौन सी विधि है जो स्रोतों को अधिक प्राथमिकता देती है, विवेचना कीजिए?
7. इतिहास की योजना विधि को परिभाषित करते हुए इसके सोपानों तथा गुण-दोष की विवेचना कीजिए?
8. इतिहास में शिक्षण साधनों का क्या महत्व है? कुछ प्रमुख ऐतिहासिक शिक्षण साधनों का वर्णन कीजिए?
9. समस्या-समाधान विधि को इतिहास शिक्षण में किस प्रकार प्रयोग में लाया जा सकता है? उदाहरण सहित विवेचना कीजिए?
10. इतिहास शिक्षण की परम्परागत विधि किस विधि को माना जाता है? इसके गुण एवं दोषों का वर्णन कीजिए**?**

इकाई 5 - 5 E (संलग्नता, अन्वेषण, व्याख्या, विस्तार और मूल्यांकन) प्रतिरूप पर आधारित सामाजिक विज्ञान के लिए अधिगम योजना

Learning Plan for Social Science based on 5 E's (Engage, Explore, Explain, Elaborate, Evaluate) Model

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 सामाजिक विज्ञान और शिक्षण-अधिगम योजनायें:
5.3.1 संरचनात्मकता का सिद्धांत
5.4 5 E मॉडल अधिगम योजना
5.5 5 E प्रतिरूप की आवश्यकता, महत्व एवं सावधानियाँ
5.6 सामाजिक विज्ञान 5 E मॉडल अधिगम योजना
5.7 सारांश
5.8 शब्दावली
5.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.10 संदर्भ ग्रंथ सूची
5.11 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

वर्तमान समय में शिक्षा का स्वरुप काफी परिवर्तित हो गया है और इसी के ही साथ शिक्षण के निष्पादन में भी काफी परिवर्तन आया है। पहले जहाँ पाठ योजना में शिक्षण पर बल दिया जाता था और बल इस बात पर होता था कि शिक्षक किस प्रकार से कक्षा में शिक्षण करेंगे। पर अब बदलते समय के साथ विद्यालयों और कक्षाओं का स्वरूप बदला है और इसी के साथ ही शिक्षकों तथा विद्यार्थियों की भूमिकायें भी बदली हैं। और जहाँ पहले यह मात्र शिक्षण विधि होती थी, बदलती भूमिकाओं के साथ ही यह शिक्षण अधिगम विधि हो गया और पाठ योजनायें भी परिवर्तित होते हुए अधिगम योजनायें हो गयीं। वर्तमान समय में शिक्षा का अभिप्राय मात्र परीक्षाओं को उत्तीर्ण करना नहीं रहा है बल्कि शिक्षा ज्ञान के सृजन और

रचनात्मकता से जुड़ गयी है । 5 E मॉडल शिक्षा के इसी नवधारणाओं से जुड़ी हुई है जो इस तरफ निर्देशित करता है कि ज्ञान का सृजन किस प्रकार से किया जा सकता है । प्रस्तुत पाठ 5 E मॉडल के स्वरुप और महत्व की विशद व्याख्या करता है साथ ही साथ सामाजिक विज्ञान में किस प्रकार 5 E मॉडल पर आधारित अधिगम योजना का विकास करते हैं का उदाहरण प्रस्तुत करता है और वर्णन करता है।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत विद्यार्थी

1. संरचनात्मकता का शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया पर प्रभाव की चर्चा कर सकेंगे।
2. 5 E अधिगम प्रारूप को परिभाषित कर सकेंगे।
3. सामाजिक विज्ञान शिक्षण-अधिगम पर 5 Eके प्रभाव का विश्लेषण कर सकेंगे।
4. 5 E प्रारूप पर आधारित अधिगम योजना का निर्माण कर पायेंगे ।

5.3 सामाजिक विज्ञान और शिक्षण-अधिगम योजनायें

किसी भी शिक्षक के लिए कक्षा में अध्यापन हेतु योजना का बनाया जाना अत्यावश्यक है । शिक्षक एक खाका तैयार करता है कि कक्षा के दौरान उसको पाठ के उद्देश्यों को प्राप्ति के लिए कक्षा में क्या प्रयास करना है । शिक्षक द्वारा बनायी जाने वाली यह योजना जो वह कक्षा में पाठ के निष्पादन के लिए बनाते हैं, पाठ-योजना कहलाती है । यह कक्षा के आकार , विद्यार्थियों के मानसिक स्तर, उनकी कक्षा का स्तर, शिक्षण-अधिगम सामग्रियों की विद्यालय में उपलब्धता तथा प्रकरण की प्रकृति पर निर्भर करती है ।

एल० एन० बेसींग अपनी पुस्तक टीचिंग इन सेकेंडरी स्कूल्स में पाठ योजना की परिभाषा देते हैं- *पाठ योजना अध्यापक के मार्गदर्शन में दिन-प्रति-दिन किए जाने वाले कार्यकलापों के फलस्वरूप प्राप्त सभी उपलब्धियों और उन्हें प्राप्त करने के विशिष्ट साधनों का विवरण है।*

यदि पाठ-योजना की उपादेयता के विषय में शिक्षकों से प्रश्न किया जाए तो कोई भी शिक्षक इसकी उपादेयता से इनकार नहीं करता है । हर अध्यापक यह मानता है कि कक्षा में पूरी तैयारी के साथ जाना चाहिए पर वहीँ पर शिक्षक पाठ-योजना की गुणवत्ता और पाठ-योजना के प्रकार को लेकर सहमत नहीं हैं और इस पर प्रश्न उठाते हैं । यहाँ एक तरफ तो कुछ शिक्षकों को पाठ-योजना के गैर-लचीली और अपरिवर्तनीय प्रकृति से समस्या है तो कुछ उसे ही लक्ष्य मान लेते हैं और अपना सारा श्रम पाठ-योजना बनाने में ही लगा देते हैं और वास्तविक लक्ष्य को भूल जाते हैं । इस हेतु शिक्षक प्रशिक्षकों को यह प्रयास करने चाहिए कि शिक्षक प्रशिक्षुओं को इस प्रकार प्रशिक्षित किया जाए कि उन्हें यह ज्ञात हो जाए कि पाठ-योजना के लक्ष्यों और उद्देश्यों को किस प्रकार प्राप्त करना है जिससे विषय के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके ।

किसी भी पाठ को पढाए जाने से पूर्व इसकी योजना बनाया जाना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि यह शिक्षक को पाठ या विषय सम्बन्धी लक्ष्यों को पूर्ण करने में योगदान करती है। पूर्व में व्यवहारित सीखने सम्बन्धी योजनायें यदि उपयुक्त नहीं है तो ऐसे में मौजूदा योजनाओं में सुधार करना आवश्यक है।

ज्यादातर शिक्षकों के द्वारा पाठों को मात्र पढ़ा दिया जाता है और उससे सम्बंधित शिक्षण बिन्दुओं को पूरा कर लेने का प्रयास किया जाता है। शिक्षक मात्र यह मानते हैं कि कक्षा में पाठ को पढ़ा देना चाहिए और उनके स्तर पर इस प्रकार से पाठ या विषय से सम्बंधित लक्ष्य प्राप्त हो जाते हैं। ऐसे शिक्षकों का मानना है कि शिक्षक का कार्य पाठ या विषयवस्तु से सम्बंधित ज्ञान को विद्यार्थियों तक बस पहुँचा देना है और वहीँ विद्यार्थियों का कार्य निष्क्रिय रहकर उस ज्ञान को ग्रहण कर लेना है। यदि हम अपने यहाँ की पाठ योजनाओं या शिक्षण योजनाओं को देखें तो यही पाएंगे। हम अपनी शिक्षण योजना में ही विद्यार्थी को एक निष्क्रिय भूमिका देते हैं जो चुपचाप शिक्षक को सुनता है और शिक्षक द्वारा पूछे प्रश्नों का उत्तर देता है। सामान्य रूप से परंपरागत पाठ योजना में विद्यार्थी स्वयं शिक्षक से प्रश्न नहीं पूछने जाता और ना ही शिक्षकों द्वारा ऐसे अवसरों को पाठ्य योजना में स्थान दिया जाता है कि विद्यार्थी स्वयं आगे बढ़कर शिक्षकों से प्रश्न पूछें।

अधिकतर शिक्षक विद्यार्थी-केन्द्रित शिक्षा के अर्थ से परिचित नहीं हैं। विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षा से अभिप्राय है कि ऐसी शिक्षा जिसमें विद्यार्थी मुख्य हो और केंद्र में हो तथा शिक्षक की भूमिका गौण हो। शिक्षक मात्र सहायक के रूप में रहे। पर हमारे विद्यालयों में शिक्षक केन्द्रीय और सक्रिय भूमिका में होते हैं और विद्यार्गी गौण और निष्क्रिय भूमिका में रहते हैं। मनोविज्ञान को एक विषय के रूप में प्रशिक्षण कार्यक्रमों के दौरान पढ़ने के बावजूद भी जिन संज्ञानात्मक प्रक्रियों से शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के दौरान विद्यार्थी गुजरते हैं, शिक्षक उन्हें समझ नहीं पाते। पाठ योजनाओं के अधिकांश हिस्से में इस बात का वर्णन होता है कि शिक्षक क्या करेगा। उदाहरण के लिए, शिक्षक व्याख्यान देता है, समझाता है, बताता है, सवाल पूछता है और कभी-कभी कक्षा में कुछ प्रयोग करके दर्शाता है।

भारतीय कक्षाओं में बच्चों को ऐसी निष्क्रिय भूमिकाएँ दी जाती हैं कि उन्हें सक्रिय भूमिकाएँ निभाने के लिए तैयार करने हेतु शिक्षण प्रक्रिया को नए ढंग से तैयार करने की ज़रूरत है। और इसके लिए शिक्षकों को सीखने से सम्बंधित प्रक्रियात्मक पहलुओं पर ध्यान देने की आवश्यकता है। शिक्षकों को विद्यार्थियों और सीखने से सम्बंधित मनोवैज्ञानिक पहलूओं की सैद्धांतिक जानकारी पहले से होती है यहाँ आवश्यकता है कि वे उस सैद्धांतिक तथ्यों, सिद्धांतों, संकल्पनाओं को कक्षा में लागू करें। जितना हो सके शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को विद्यार्थी-उन्मुख बनाना चाहिए। इस क्रम में बच्चों को चर्चा करने, सवाल करने, अवलोकन करने, विश्लेषण करने, विचारों को लागू करने, प्रयोग करने, परिकल्पना करने, विचारों को सामने रखने, पढ़ने और लिखने के मौके मिलना चाहिए। शिक्षकों को चाहिए कि वे अपने विद्यार्थियों के साथ सीखने की ज़िम्मेदारी बाँटे। इस हेतु 5 E मॉडल लाभप्रद सिद्ध हो सकता है जो शिक्षण-अधिगम के संरचनात्मक उपागम का अनुसरण करता है।

यदि पाठ्यचर्या की रुपरेखा-2005 को देखा जाए तो उसमें प्रत्येक विषय और प्रत्येक पाठ के माध्यम से विद्यार्थियों में संरचनात्मकता का विकास किए जाने की बात की गयी है । एक संरचनात्मक शिक्षण योजना ही विद्यार्थियों को रचनात्मक बना सकती है।

5 E सीखने के चक्र के माध्यम से उदाहरण प्रदान किए जाते हैं । मात्र सामान्य लोगों को ही नहीं बल्कि शिक्षकों को भी यह लगता है की संरचनात्मक या 5 E मॉडल का प्रयोग मात्र गणित और विज्ञान जैसे विषयों के लिए करना चाहिए भाषा या सामाजिक विज्ञान जैसे विषयों के लिए यह उस तरह से आवश्यक नहीं । यदि विषय की प्रकृति को देखा जाए तो सामाजिक विज्ञान या भाषा उतने ही व्यावहारिक महत्व वाले विषय हैं जितने कि गणित एवं विज्ञान विषय और कभी-कभी उनसे भी अधिक । इस क्रम में यदि सामाजिक विज्ञान की बात की जाए तो यह वह विषय है जो समाज में सामंजस्य स्थापित करने ने सबसे अधिक सहायक होता है । विद्यार्थी जिसे समाज में ही जीवन-यापन करना है और जिसके लिए कक्षा में प्राप्त अनुभवों को वास्तविक जीवन से जोड़ा जाना आवश्यक है इस परिस्थिति में इसके लिए भी अधिगम योजनाओं को प्रयोग में लाना आवश्यक है । 5 E मॉडल किसी विषय के शिक्षण-अधिगम की वह विधि है है जो रचनात्मक शिक्षण / शिक्षा का समर्थन करती है। कुछ यह मानते हैं कि इस प्रकार की अधिगम योजनाओं में शिक्षक का महत्व नहीं रहता पर ऐसा नहीं है । 5 E प्रारूप में शिक्षको की भूमिका बदलती है उनका महत्व नहीं बदलता है । शिक्षकों के पारम्परिक नेतृत्व कौशल और उसका प्रयोग इसमें भी महत्वपूर्ण हैं

5.3.1 संरचनात्मकता का सिद्धांत

संज्ञानात्मक अधिगम पियाजे, ब्रूनर और वाइगोत्सकी के सम्मिलित प्रयासों और उनके सीखने के अवधारणाओं का परिणाम है । जहाँ पियाजे ने माना कि व्यक्ति अपने वातावरण एवं परिवेश के साथ मानसिक शक्तियों का प्रयोग करते हुए सीखता है और सीखना उस समय ज्यादा अर्थपूर्ण हो जाता है जबकि वह विद्यार्थी की रुचि और जिज्ञासा के अनुरूप हो। पियाजे की तरह के वाइगोत्सकी (5896-5934) ने भी यह माना कि बच्चे ज्ञान का निर्माण करते है। किन्तु पियाजे के विपरीत इन्होंने माना कि संज्ञानात्मक विकास एकाकी नहीं हो सकता, यह भाषा विकास, सामाजिक विकास, यहाँ तक कि शारीरिक विकास भी सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ में होता है। वहीँ ब्रूनर ने अनुसार सीखने को एक ऐसी सक्रिय प्रक्रिया है जिसमें सीखने वाला अपने पूर्व ज्ञान तथा नवीन सीखे हुए ज्ञान को आधार बनाते हुए नए विचार, संकल्पनाओं या अवधारणाओं निर्माण करता है। इस क्रम में वह सूचनाओं को चुन सीखे ज्ञान के आधार पर रूपांतरण करता है, प्रस्थापनाएं बनाता है, निर्णय लेता है । इन सबमें ज्ञान की पुनर्संरचना इस प्रकार करनी चाहिए जिससे नई प्रस्थापनाएं आसान बन सकें और सूचनाओं को आसानी से विद्यार्थियों तक पहुँचाया जा सके । 5 E प्रारूप इन्हीं के विचारों के जो ज्ञान के संरचनात्मकता को मानते हैं, का प्रतिफल है ।

संरचनात्मक शिक्षण की एक ऐसी रणनीति है जिसमें शिक्षक विद्यार्थी के अर्जित ज्ञान और कौशल का इस्तेमाल किया जाता है। रचनात्मक रणनीति के माध्यम से विद्यार्थी अपने पूर्व ज्ञान और सूचना के आधार पर नयी समझ और नए ज्ञान को विकसित करता है।

रचनात्मकता को कक्षा में प्रयुक्त करने वाला शिक्षक शिक्षण के दौरान प्रश्न उठाता है, विचार-विमर्श करता है, विद्यार्थियों के प्रयासों का निरीक्षण करता है, उन्हें दिशा-निर्देश देता है तथा सोचने-समझने के नए तरीकों का सूत्रपात करता है। इस क्रम में वह मात्र स्वयं ही कार्य नहीं करता है बल्कि वह सहयोगात्मक भूमिका में होता है और इन सभी के लिए प्रयास कक्षा के विद्यार्थी करते हैं। शिक्षक मात्र विद्यार्थियों को निर्देश देता है जिसके पश्चात् विद्यार्थी बाकी का प्रयास स्वयं करते हैं। किसी स्तर पर विद्यार्थी यदि समस्या महसूस करते हैं तो शिक्षक समस्या को सरलीकृत करने में मदद करते हैं। विद्यार्थी इस प्रक्रिया में यह समझ जाते हैं कि शिक्षण मात्र सूचनाएं देने से सम्बंधित नहीं है बल्कि यह एक ज्ञानात्मक प्रक्रिया है जो ज्ञान के सृजन से जुड़ी है। ज्ञान के रचना से सम्बंधित यह प्रक्रिया हर स्तर के विद्यार्थियों के लिए उपयुक्त है चाहे वह प्राथमिक स्तर के हों या उच्च स्तर के।

अभ्यास प्रश्न

1. पाठ को पढाए जाने से पूर्व पाठ योजना को बनाया जाना क्यों आवश्यक है?
2. विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षा से क्या अभिप्राय है?
3. संज्ञानात्मक अधिगम पियाजे, ब्रूनर और_____के सम्मिलित प्रयासों और उनके सीखने के अवधारणाओं का परिणाम है।

5.4 5 E मॉडल अधिगम योजना

5 E मॉडल जैसा की ऊपर वर्णित किया गया है सीखने के संरचनात्मक सिद्धांत से सम्बंधित है। 5 E प्रतिरूप में योजना रचनात्मक निर्देशात्मक प्रारूप पर आधारित होती है। इसमें शिक्षण अधिगम इस संकल्पना पर आधारित होता है कि विद्यार्थी ग्रहण किए ज्ञान को समझ सकें तथा स्वयं के दिन प्रतिदिन की समस्याओं को समाधानित करने में उस ज्ञान का प्रयोग कर सकें तब वह अधिगम माना जाएगा। शिक्षण- अधिगम प्रक्रिया का अर्थपूर्ण होना आवश्यक है। दूसरे शब्दों में 5 E एक अनुदेशनात्मक मॉडल है जो सीखने के संरचनात्मक उपागम या जाँच आधारित उपागम पर आधारित है जो विद्यार्थियों के मौजूदा ज्ञान, विश्वास, और कौशल को आकर्षित करती है। विद्यार्थी पहले के सीखे ज्ञान और नवीन ज्ञान पर आधारित समझ को संश्लेषित करते हैं। शिक्षक समस्या का निर्धारण करता है, विद्यार्थियों द्वारा किए अन्वेषण पर नज़र रखता है, विद्यार्थी द्वारा किए जाने वाले जाँच को निर्देशित करता है और सोच के नए पैटर्न को बढ़ावा देता है।

इस प्रारूप में पाठ योजना इस प्रकार विकसित की जाती है कि विद्यार्थी नवीन ज्ञान को पूर्व ज्ञान के आधार पर ग्रहण करते हुए आत्मसात करते जाते हैं। 5 E मॉडल को 5 E कहलाने के पीछे इसके

प्रत्येक चरण का E अक्षर से शुरू होना है। जिसमें पहला स्तर Engage अर्थात संलग्न करना है, दूसरा स्तर Explore यानि कि अन्वेषण है, तीसरा स्तर Explain अर्थात व्याख्या है। चौथा और पाँचवा स्तर क्रमशः Elaborate (विस्तार) और Evaluate (मूल्यांकन) हैं। हालाँकि अब 5 E मॉडल में 2 E (Elicit और Extend) और जुड़ गए हैं। ये सभी 5 E शिक्षकों और छात्रों को एक ही किस्म की गतिविधियों से जोड़ते हैं जिससे वे अपने मौजूदा ज्ञान के ऊपर नए ज्ञान का निर्माण करते हैं, अर्थ का सृजन करते हैं और किसी अवधारणा के लिए अपनी समझ का निरंतर मूल्यांकन करते हैं।

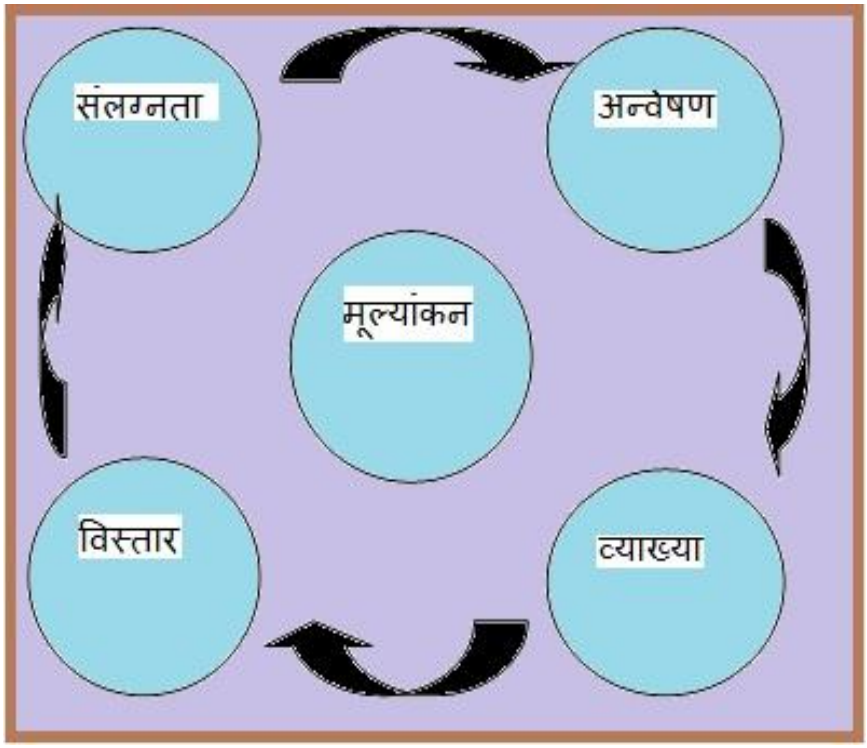

चित्र संख्या-5
5 E अधिगम प्रारूप

i. **संलग्नता (Engage) -** यह 5 E प्रारूप का प्रथम चरण है जहाँ शिक्षक यह प्रयास करता है कि वह विशिष्ट पाठ के साथ विद्यार्थी को जोड़े और यह भी कि उन्हें जोड़ना न पड़े बल्कि वे स्वयं ही पाठ के साथ सम्बन्ध स्थापित कर लें। इसके लिए एक अध्यापक को निम्न कार्य करने चाहिए:

- पिछले और वर्तमान सीखने के अनुभवों के बीच संबंध बनाने चाहिए
- शिक्षक को वर्तमान गतिविधियों के आधार पर सीखने के परिणामों पर छात्रों की सोच पर ध्यान केंद्रित करना और विद्यार्थी द्वारा सीखी गतिविधियों का पूर्वानुमान लगाना चाहिए।

छात्रों को सीखने के लिए अवधारणा, प्रक्रिया या कौशल में मानसिक रूप से शामिल होना चाहिए।

इस क्रम में अतीत और वर्तमान के सीखने के अनुभवों को एक-दूसरे से जोड़ा जाता है। इसमें गतिविधियों का खाका बना कर छात्रों के विचारों पर मौजूदा गतिविधियों के संदर्भ में ध्यान केंद्रित किया जाता है। छात्रों को सीखने वाले कौशल, प्रक्रिया और अवधारणाओं के साथ मानसिक रूप से संलग्न होना होता है। प्रत्येक पाठ्य-योजना में एक अनिवार्य प्रश्न होता है जो उनकी जांच का आधार होता है। आमतौर पर इस खंड में कुछ प्रमुख प्रश्न होते हैं जिनके द्वारा द्वितीय चरण में अन्वेषण को सही दिशा मिलती है।

अपने प्रश्नों के समर्थन में शिक्षक विभिन्न दृश्यों का उपयोग करते हुए, छात्रों को ध्यान आकर्षित करने का प्रयास किया जाता है। इसके साथ ही उनके वर्तमान ज्ञान स्तर को मापते हुए विषय से सम्बंधित अनुपलब्ध ज्ञान को जो विद्यार्थी को नहीं होता, उसे देने का प्रयास किया जाता है। इसके साथ ही छात्रों को यदि इस सम्बन्ध में कोई समस्या आती है या विषय के सम्बन्ध में कुछ अस्पष्ट है तो उसकी पहचान करने और पता लगाने का प्रयास कर उसे दूर भी किया जाता है।

ii. **अन्वेषण (Explore):** अन्वेषण, जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है विद्यार्थी इस स्तर पर छानबीन करते हैं और नया ढूँढने का प्रयास करते हैं। इस दौरान विद्यार्थी गहन अन्वेषण करते हैं। शिक्षक द्वारा इस स्तर पर कोई निर्देश नहीं दिया जाता है और ना ही शिक्षक इस स्तर पर कोई हस्तक्षेप नहीं करता है बल्कि उनके आपसी विचार-विमर्श को सुनकर यह सुनिश्चित करता है कि विद्यार्थी निश्चित पाठ पर चर्चा करते हुए सीखने का प्रयास कर रहे हैं। यदि आवश्यक होता है तो शिक्षक उनसे पाठ से सम्बंधित प्रश्न पूछता है और पाठ के सम्बन्ध में प्रगति का जायजा लेता है। विद्यार्थी विषय को अपने हिसाब से जाँचते हैं और समझने का प्रयास करते हैं।

इस चरण का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों को उनकी अपनी समझ का विकास करते हुए विषय/पाठ में शामिल कर लेना है। इसमें विद्यार्थियों को घटना और सामग्री के साथ सीधे शामिल होने का अवसर मिलता है। जैसे-जैसे वे समूह में मिलकर काम करते हैं, वे अपनी एक समान के अनुभवों का एक समूह बनाते हैं जो एक दूसरे के साथ साझा करते हैं और अपने विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। इस चरण पर अन्य चरणों की तुलना में सबसे अधिक गतिविधियाँ करते हैं। दूसरे शब्दों में कहा जाए यो विस्तार वह मंच है जो विद्यार्थियों को गतिविधियों को करने का सबसे अधिक अवसर उपलब्ध कराता है।जिसमें छात्रों के चरणों में सबसे अधिक गतिविधियाँ हैं। इस क्रम में विद्यार्थियों को 4 या 5 के समूह में विभाजित करना चाहिए और प्रत्येक समूह अपने अनुसार एक विषय चुन सकता है। छात्रों को अपने चुने हुए विषय से सम्बंधित विभिन्न परिणामों को प्राप्त करने के लिए कहा जाता है और यह निर्दिष्ट किया जाता है कि सत्र के अंत में परिणाम पूरी कक्षा के साथ साझा किए जाएंगे।

iii. **व्याख्या (Explain):** यह 5 E के सभी स्तरों में सबसे छोटा स्तर है जिसमें विद्यार्थी अन्वेषण स्तर पर प्राप्त हुए अनुभवों और परिणामों को एक-दूसरे से साझा करते हैं। अन्वेषण के दौरांन

विद्यार्थी जो सीखे होते हैं उसकी व्याख्या इस स्तर पर की जाती है। यह पिछले स्तर पर सीखे तथ्यों एवं अवधारणाओं की व्याख्या करने में मदद करता है। विद्यार्थी प्राप्त ज्ञान और उससे सम्बंधित अपनी समझ को शब्दों के माध्यम से व्यक्त करते हैं और स्वयं के द्वारा अर्जित नये कौशल व्यवहार का परिचय देते हैं।

इस चरण में अनुभवों और परिणामों को एक-दूसरे से विद्यार्थी साझा करते हैं उस दौरान शिक्षक एक सुविधाप्रदाता या सहायक की भूमिका में होते हैं। अपनी इस भूमिका में शिक्षक उस समय संकल्पना या अवधारणा की व्याख्या और उसको पूर्ण करने में विद्यार्थियों की मदद करते हैं जब विद्यार्थी अपनी सीमाओं के कारण स्वयं नहीं कर पाते हैं। शिक्षक अपने विद्यार्थियों को विषय से सम्बंधित औपचारिक शब्दावली, परिभाषाओं, तथ्यों, संकल्पनाओं, अवधारणाओं, प्रक्रिया, कौशल और व्यवहार से परिचित कराते हैं। अन्वेषण स्तर पर 4 या 5 बच्चों का जो समूह बनाया जाता है उस समूह से एक विद्यार्थी समूह के प्रतिनिधि के तौर पर समूह के अनुभवों को अन्य विद्यार्थियों से बाँटता है। इस प्रकार बनाए गए उन समस्त समूहों में से प्रत्येक समूह से एक विद्यार्थी परिणामों एवं अनुभवों को साझा करते हैं। इसके लिए जिन प्रश्नों का उत्तर ढूंढने के लिए समूह का निर्माण हुआ था उन प्रश्नों के उत्तर को मौखिक रूप से, किसी चित्र या आंकड़े के माध्यम से या किसी नाटक का मंचन करते हुए साझा किया जाता है।

iv. **विस्तार (Eloborate):** 5 E द्वारा सीखने का यह चरण विद्यार्थियों के वैचारिक समझ के दायरे का विस्तार करता है तथा पिछले स्तर पर सीखे कौशल और व्यवहार का अभ्यास करने की अनुमति देता है। इस चरण पर विद्यार्थियों से यह अपेक्षा रखी जाती है कि वे सीखे कौशल और व्यवहार पर सीधे काम करें। नए अनुभवों के आधार पर विद्यार्थी प्रमुख अवधारणाओं और संकल्पनाओं के सम्बन्ध में गहरी, व्यापक और विस्तृत समझ विकसित करता है। इसके साथ ही विद्यार्थी रूचि के विषय से सम्बंधित अन्य सूचनाओं को वह ग्रहण करते हैं और अपने कौशलों को परिशोधित करते है। इस चरण में यह विद्यार्थियों की जिम्मेदारी होती है कि वे नई सूचना का प्रयोग कर अपने निष्कर्षों की प्रस्तुति दूसरों के समक्ष करें। इस हेतु विद्यार्थी प्राप्त ज्ञान का मूल्यांकन हेतु उसे लिख सकते हैं या इसे कक्षा में प्रस्तुत कर सकते हैं या फिर प्रोजेक्ट के रूप में इस पर कार्य कर सकते हैं। शिक्षक को चाहिए कि इस सम्बन्ध में वे विद्यार्थी को यथासंभव निर्देश, सहयोग और समनुदेशन प्रदान करे।

v. **मूल्यांकन (Evaluation):** 5 E योजना में यह अंतिम चरण है। मूल्यांकन की आवश्यकता शिक्षक और विद्यार्थी दोनों के लिए होती है कि विद्यार्थियों द्वारा किए गए अधिगम और उनकी विषय के प्रति समझ का निर्धारण किया जा सके साथ ही यह भी पता चल सके कि कहाँ पर अधिगम नहीं हुआ है या क्या चीजें शेष हैं। शिक्षक के द्वारा यह अंतिम मूल्यांकन करना आवश्यक है कि वह जांच लें कि छात्रों ने पिछले चरणों में क्या सीखा है। इसमें विद्यार्थियों को उनकी समझ और क्षमताओं का आकलन करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है और शिक्षक विद्यार्थियों महत्वपूर्ण अवधारणाओं और कौशल विकास की समझ का मूल्यांकन कर सकते हैं।

इसके लिए अध्यापक लिखित मूल्यांकन के लिए जा सकता हैं। मूल्यांकन में शामिल किए जाने वाले प्रश्न उच्च स्तर की मानसिक गतिविधियों से सम्बंधित होने चाहिए। इस हेतु विद्यार्थी दिए गए कार्य को पूरा करके जमा करते हैं। शिक्षक द्वारा दिए गए कार्य (वर्कशीट) के मूल्यांकन के बाद, शिक्षक शेष जानकारियों से विद्यार्थियों को अवगत कराता है जिसे वह प्राप्त नहीं कर पाए थे और सभी संकल्पनाओं और अवधारणाओं को स्पष्ट करता है और इस प्रकार यह गतिविधि समाप्त हो जाती है। इस चरण में यह अत्यावश्यक है कि शिक्षक अपने विद्यार्थियों को आत्म-मूल्यांकन, समूह-मूल्यांकन आदि के लिए प्रेरित करे जिसके द्वारा वे अपने मूल्यांकन हेतु स्वयं ही उपकरणों का विकास कर सकें। जानकारी को पूरा करके और सबकुछ स्पष्ट करके गतिविधि समाप्त हो जाती है

अभ्यास प्रश्न

4. 5 E मॉडल क्या है?
5. 5 E मॉडल के पाँच चरण कौन-कौन से हैं?
6. विद्यार्थियों को पाठ से संलग्न करने के लिए शिक्षक को क्या करना चाहिए?

5.5 5 E प्रतिरूप की आवश्यकता, महत्व एवं सावधानियाँ

5 E मॉडल वर्तमान परिवेश में कक्षाओं के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है जो शिक्षार्थी को ज्ञान के सृजन का अवसर प्रदान करता है। यह मात्र विद्यार्थियों के लिए ही महत्व नहीं रखती बल्कि शिक्षकों के लिए भी इसकी उपादेयता है जिसके कारण शिक्षकों द्वारा शिक्षण-अधिगम के लिए इसे प्रयोग में लाया जाना आवश्यक है। 5 E प्रतिरूप की अधिगम योजना में आवश्यकता एवं इसके होने का महत्व इस प्रकार हैं-

विद्यार्थियों के लिए:

- विद्यार्थियों को सीखने को आधार प्रदान करता है
- विद्यार्थी यह समझ पाते हैं कि ज्ञान का एकमात्र स्रोत मात्र पुस्तकें ही नहीं हैं और अन्य स्रोतों की उपयोगिता को स्वीकार करते हुए उनका उपयोग करने में सक्षम हो पाते हैं।
- इस प्रारूप के प्रयोग से विद्यार्थी बाहरी जगत और कक्षा के ज्ञान को सहसम्बन्धित कर पाते हैं जिसके फलस्वरूप वे उस विषय को वास्तविक दुनिया से जोड़ने लगते हैं। अधिगम के स्थानांतरण के लिए यह अत्यावश्यक है।
- इस विधि के माध्यम से विद्यार्थियों को स्वतंत्र रूप से जानकारियों को खोजने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। विद्यार्थी स्वयं के माध्यम से सीखते हैं।
- विद्यार्थी स्वतन्त्र माध्यम से ज्ञान के स्रोतों की पहचान कर पाते हैं।

- इस मॉडल के माध्यम से विद्यार्थियों में स्वतंत्र रूप से पढ़ने के कौशलों का विकास किया जा सकता है।
- सामूहिक चर्चा के माध्यम से विद्यार्थी अपने विचारों को आपस में बाँट सकते हैं और उनकी पड़ताल कर सकते हैं।
- यदि विद्यार्थी कुछ नया पढ़ते हैं तो इस नवीन ज्ञान का सम्बन्ध अपने पूर्व अधिगम से स्थापित करते हैं।
- 5 E मॉडल महत्वपूर्ण और आधारभूत समझ विस्तृत विचारों संकल्पनाओं अवधारणाओं और कौशलों का निर्माण करता है।
- विद्यार्थियों को यह सीखे गए ज्ञान को प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान करता है।

शिक्षकों के लिए

- निर्देश के चरणों को स्पष्ट रूप से परिभाषित कर पाता है
- इसके माध्यम से स्पष्ट होता है कि कक्षा में शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के दौरान शिक्षक और विद्यार्थियों की क्या भूमिका होगी।
- मूल्यांकन के लिए विविध अवसरों को उपलब्ध कराता है।
- कक्षा में उपस्थित विभिन्न प्रकार के मानसिक स्तर एवं बुद्धि लब्धि वाले विद्यार्थियों के मध्य अंतर कर सकने का अवसर प्रदान करता है। इसके माध्यम से शिक्षक भिन्न मानसिक क्षमता वाले विद्यार्थियों में भेद कर पाते हैं।

सावाधानियाँ:

- शिक्षकों को विभिन्न चरणों पर विद्यार्थियों की निगरानी करनी चाहिए कि क्या अधिगम सही तरह से हो रहा है?
- शिक्षक को स्वयं को मात्र सहायक रूप में रखना चाहिए। सीखने का सारा क्रियाकलाप विद्यार्थी स्वयं करें।
- दिशा-निर्देश ऐसे होने चाहिए जिनके आधार पर अनुमान लगाए जा सकें और रिक्त स्थानों को भरा जा सके।
- शिक्षक द्वारा दिए गए दिशा-निर्देश विद्यार्थी के अपने अनुभवों और से जुड़े होने चाहिए क्योंकि इससे विद्यार्थी स्वयं ही सीखने में रूचि लेता है।
- शिक्षक द्वारा दिए जाने वाले दिशा-निर्देश स्पष्ट और संरचित होने चाहिए जिससे ये ये बच्चों को आससानी से समझ में आ सकें।

- शिक्षकों को प्रदर्शित करना चाहिए कि उनके विद्यार्थियों द्वारा कक्षा में प्रस्तुत किया गया ज्ञान सही है।

अभ्यास प्रश्न

7. 5 E मॉडल के द्वारा अधिगम क्रियान सम्पादित किए जाने पर यदि विद्यार्थी कुछ नया पढ़ते हैं तो इस नवीन ज्ञान का सम्बन्ध अपने _____ से स्थापित करते हैं।
8. 5 E मॉडल शिक्षकों के लिए क्यों महत्वपूर्ण है?

5.6 सामाजिक विज्ञान 5 E मॉडल अधिगम योजना

कक्षा- 5

विषय- भूगोल

प्रकरण- पृथ्वी का परिक्रमण

संकेतक: भौगोलिक, वैज्ञानिक और उपलब्ध प्रौद्योगिकी के ज्ञान के उपयोग से विद्यार्थियों को यह परिचित करना कि अन्य ग्रहों और तारों की तरह पृथ्वी भी गोलाकार है और यह अपनी अक्ष पर पृथ्वी का घूर्णन हर 24 घंटे में रात और दिन का कारक है।

निर्देशात्मक उद्देश्य:

विद्यार्थी पृथ्वी के आकार का वर्णन कर सकेंगे।

विद्यार्थी दिन और रात कि संकल्पना की व्याख्या कर सकेंगे।

विद्यार्थी विभिन्न देशों में समय के अंतर को तर्क सहित स्पष्ट कर सकेंगे।

संलग्नता: शिक्षक अपने विद्यार्थियों से पूछेगा कि उन्होंने पिछली कक्षा में सौर मंडल और सौर मंडल के ग्रह विशेष पृथ्वी के बारे में क्या सीखा है।

विद्याथियों को शिक्षक एक दृष्टान्त देते हुए- यदि तुम्हारा एक मित्र कुछ महीनों के लिए अपने माता-पिता के संग अमेरिका चला जाता है और आपको उससे बात करनी है। अब आपको यह सुनिश्चित करना है कि आप किस समय में उसे फ़ोन करेंगे जो वह आपको उपलब्ध भी हो जाए और आप उसे परेशान भी नहीं करें।

अन्वेषण: पृथ्वी का आकार

प्रश्न- पृथ्वी का आकार कैसा है? (उत्तर- गोलाकार, वस्तुतः Geoid)

प्र.- गोलाकार से क्या आशय है?

प्र.- क्या इस आकार की कुछ अन्य वस्तुओं के नाम बता सकते हैं? (उ.- विद्यार्थी कुछ अन्य गोल वस्तुओं के नाम बताएँगे।)

प्र.- गोल और वृत्त क्या समान आकृति हैं? (यहाँ विद्यार्थियों को समझने देने की आवश्यकता है कि गोल त्रिविमीय आकृति होती है जबकि वृत्त मात्र 2 आयामों वाला होता है। पृथ्वी की आकृति और उसकी परिक्रमा को समझने के लिए इसे समझना अत्यन्त आवश्यक है।)

प्र.- गोलाकार और वृताकार आकृतियों में क्या अन्तर है?

शिक्षक विद्यार्थियों से कुछ गोलाकार तथा कुछ वृताकार आकृतियों के उदाहरण देने को कहे।

अब विद्यार्थियों को एक संतरा (नारंगी) दिखायें और पूछें की क्या यह आकृति गोलाकार है। अब उसमें एक लम्बी छड़ी लगायें और देखें कि विद्यार्थी क्या यह समझ पाते हैं यह क्या दर्शा रहा है? (उ.- पृथ्वी का अक्ष)

प्र.- पृथ्वी का अक्ष क्या है? (उ.- वह काल्पनिक रेखा जो पृथ्वी के मध्य से होते हुए उत्तरी ध्रुव से होते हुए दक्षिणी ध्रुव तक जाती है और जो थोड़ी झुकाव लिए है पृथ्वी का अक्ष कहलाती है।)

प्र.- इस अक्ष के होने का क्या उद्देश्य है ? (उ.- पृथ्वी इस धुरी के चारों ओर एक लट्टू के समान घुमती है।)

कक्षा में शिक्षक एक लट्टू के माध्यम से इस घूर्णन को प्रदर्शित करता है। शिक्षक विद्यार्थियों से कहता है कि एक स्थान पर खड़े हों और कल्पना करें कि उनके शरीर के मध्य से होते हुए एक अक्ष जाता है और फिर उस परिकल्पनीय अक्ष के सहारे घूर्णन करें. उन्हें यह ध्यान रखना है कि वह यह घूर्णन अपनी जगह पर खड़े होकर ही करेंगे।)

बच्चे अवलोकन और खोज के लिए समूह में जायें इसके पहले सुरक्षा के मुद्दों की समीक्षा शिक्षक स्वयं करें। यह सुनिश्चित करें कि आंखों में रोशनी न चमकें और उपकरण जिनका प्रयोग किया जाना है वह सही स्थिति में हैं। इसके लिए विद्यार्थियों को पहले ही कुछ समूह में बाँट दिया जाए और हर एक समूह को एक नाम दे दिया जाए। इसके साथ ही शिक्षक समूह के प्रत्येक सदस्य को उसके द्वारा सम्पादित किए जाने वाले कार्यं के विषय में पहले ही निर्देश दे दे।

निर्देश:

1. विद्यार्थी संख्या 5 एक फुटबॉल को चुनता है और अपने सामने लेकर खड़ा हो जाता है।
2. विद्यार्थी संख्या 2 फुटबॉल के आकार को चार्ट पेपर पर लिखता है।
3. विद्यार्थी संख्या 3 टॉर्च जलाता है और सामने खड़े विद्यार्थी जिसने हाथों में एक फुटबॉल पकड़ा है, उस फुटबॉल पर टॉर्च की रौशनी डालता है।
4. विद्यार्थी यह ध्यान से देखते हैं कि गोलीय आकृति का कितना भाग प्रकाशित हो रहा है और किस भाग पर प्रकाश नहीं पड़ रहा है। सभी विद्यार्थी मिलकर यह आकलन करते हैं कि कुल कितना भाग प्रकाशित हो रहा है और कुल कितना भाग अन्धकार में है। विद्यार्थी संख्या 2 इसे चार्ट पर लिखता है ।

5. विद्यार्थी संख्या 4 दूसरे फुटबॉल को पकड़ता है और इसी क्रिया को दोहराता है। विद्यार्थी संख्या 3 टॉर्च को लेता है और गोले पर प्रकाश डालता है और समूह द्वारा यह अवलोकित किया जाता है कि गोले का कितना भाग प्रकाशित है और विद्यार्थी संख्या 2 इसे चार्ट पर लिखता है।
6. इसके पश्चात् सभी फुटबॉल को वापस रख लेना चाहिए।
7. इसके पश्चात् शिक्षक विद्यार्थियों से विचार विमर्श करेगा कि ऐसा क्यों हुआ कि गोले (फुटबॉल) का अधिकतर भाग टॉर्च की रौशनी से प्रकाशित हो रहा था। शिक्षक विद्यार्थियों को समझाने हेतु महत्वपूर्ण बिन्दुओं को लिख कर स्पष्ट कर सकता है। अन्वेषण पूरा होने के पश्चात् विद्यार्थी अपने समूह के साथ बैठ सकते हैं। इसके बाद शिक्षक पूरी कक्षा के साथ विचार-विमर्श करेगा कि फुटबॉल का कुल कितना भाग प्रकाशित था। विद्यार्थियों द्वारा दिए उत्तर शिक्षक द्वारा श्यामपट्ट पर लिख दिए जाएंगे।

शिक्षक विद्यार्थियों से यह प्रश्न करेगा कि यह ऐसा क्यों हुआ कि सामने का भाग ही प्रकाशित हुआ? (उ.- रौशनी केवल सामने के विस्तृत भाग पर ही फैलती है। यह गोले के वक्र से नहीं मुड़ सकता है जिससे पीछे का लगभग आधा हिस्सा अँधेरा रहता है।)

यहाँ शिक्षक को गोले और वृत्त के मध्य के अन्तर को स्पष्ट करते हुए इस विषय में विद्यार्थियों की संकल्पना को मजबूत करना चाहिए कि प्रकाश का गोले पर पड़ने और वृत्त पर पड़ने में क्या अन्तर आएगा। इसके बाद अध्यापक विद्यार्थियों से प्रश्न करेगा कि क्या पृथ्वी पर भी सूर्य का प्रकाश इसी भांति पड़ता है? और यदि ऐसा है तो यह क्यों है और यदि ऐसा नहीं है तो यह क्यों नहीं है ?

विद्यार्थियों के प्रत्येक समूह को शिक्षक के द्वारा एक ग्लोब दिया जाता है और विद्यार्थी यह टॉर्च वाली क्रिया को दोहराते हैं। (विद्यार्थी स्वयं करते हुए यह दुबारा देखते हैं कि टॉर्च की रौशनी ग्लोब पर डालने से ग्लोब का मात्र आधा हिस्सा ही प्रकाशित हो रहा है।)

सभी विद्यार्थियों को कमरे के पीछे के वृत्त में ले जाएं और अपने ग्लोब और टॉर्च को अपने साथ ले जायें। इसे अपने सामने के फर्श पर रखें और स्पर्श न करें। (टॉर्च को इकट्ठा करें।)

वृत्त के केंद्र में एक प्रकाश रखें (पीछे की ओर पड़ रही छाया हट जाती है)

प्र.- टॉर्च का यह प्रकाश क्या दर्शाता है? (उ.- सूर्य) ध्यान दें कि यह सभी दिशाओं में चमकता है, जो टॉर्च के विपरीत है जो केवल एक दिशा में चमकता है।

ग्लोब को इस तरह से घुमायें कि भारत सूर्य (टॉर्च) की रौशनी के ठीक सामने हो।

प्र.- आपने क्या देखा? (उ.- ग्लोब का आधा हिस्सा टॉर्च की रौशनी से प्रकाशित हो रहा है।)

प्र.- आपके अनुसार भारत में अभी क्या समय हो रहा है ? (उ.- दिन)

शिक्षक उनको ग्लोब को बिना घुमाए विद्यार्थियों को ग्लोब के उस हिस्से की तरफ आने को कहेगा जो प्रकाशित नहीं है।

प्र.- भारत के उलटी दिशा के देशों में अभी क्या समय हो रहा है? (उ.- इन हिस्सों में अँधेरा है तो इन देशों में अभी रात है।)

प्र.- अब उन देशों में क्या समय हो रहा होगा जहाँ हल्का अँधेरा है? (उ.- वहाँ सुबह या शाम का समय हो रहा है।) शिक्षक विद्यार्थियों को ग्लोब के उन पक्षेत्रों के बारे में बताएगा जहाँ सुबह या शाम का समय है तथा सुबह या शाम क्यों है पृथ्वी और सूर्य की स्थिति के सन्दर्भ में स्पष्ट करेगा।

प्र.- पृथ्वी के बाकी भाग पर जो अभी अँधेरे में है वहाँ पर दिन कब होगा? (उ.- जब सूर्य का प्रकाश इस भाग पर पड़ेगा)

प्र.- यह किस प्रकार से होगा? (उ.- पृथ्वी को इसके लिए अपने अक्ष पर तब तक घूमना होगा जब तक वह सूर्य के प्रकाश के सामने नहीं पड़ता है)

अपने ग्लोब को इस तरह घुमाएँ कि अब संयुक्त राज्य अमेरिका पर सूर्य की रौशनी पड़े आप क्या देखते हैं? (उ.- आधा हिस्सा प्रकाशित हो रहा है)

जब तक विद्यार्थी ग्लोब नहीं घुमाता है भारत में दिन है और संयुक्त राज्य अमेरिका में रात है। शिक्षक ग्लोब में विद्यार्थियों को भारत और अमेरिका की स्थिति को स्पष्ट करते हुए 2 विद्यार्थियों को चुनता है और दोनों को सटाकर एक-दूसरे के पीठ की तरफ खड़ा कर देता है। वह पहले विद्यार्थी को भारत का नाम देता है तथा दूसरे को संयुक्त राज्य अमेरिका का नाम देता है। अब एक विद्यार्थी को चेहरे के बचाते हुए पहले विद्यार्थी पर टोर्च की रौशनी डालने को कहता है। टॉर्च यहाँ पर सूर्य है। वह विद्यार्थियों से पूछता है कि अब बताओ कि भारत में दिन का समय है या रात का और संयुक्त राज्य अमेरिका में इसी क्रम में क्या होगा? इसके बाद दोनों विद्यार्थियों से एक-दूसरे की जगह लेने का निर्देश देगा और फिर टोर्च की रौशनी डालते हुए पूछेगा कि स्थिति बदल जाने पर दोनों देश के समय में क्या परिवर्तन होगा।

प्र.- क्या दिन से रात में परिवर्तन अचानक हो जाता है? (उ.- नहीं, यह एक क्रमिक प्रक्रिया है।)

दिन और रात के मध्य का समय किस नाम से जाना जाता है? (सुबह और शाम।) शिक्षक को यहाँ स्पष्ट करने की आवश्यकता है कि सुबह और शाम के समय में वातावरण कैसा होता है।

व्याख्या: (भौगोलिक संकल्पनायें, भूगोल की प्रकृति, लोक और वैज्ञानिक प्रक्रियाओं को समझने हेतु मस्तिष्क की प्रकृति)

प्र.- हमने जो निरीक्षण किया है उसके आधार पर दिन और रात होने के क्या कारण हैं? (उ.- पृथ्वी का अपने अक्ष पर घूमना)

प्र.- क्या यह प्रक्रिया उसी रूप में होती है जिस रूप में पृथ्वी अपने अक्ष पर घूमती है? व्याख्या करें।

प्र.- सूर्य किस दिशा में उगता है? (उ.- पूर्व)

प्र.- सूर्य किस दिशा में डूबता है? (उ.- पश्चिम)

प्र.- सूर्य क्या वास्तव में उगता और डूबता है? (उ.- नहीं, यह पृथ्वी के इस तरह से घुमने से बस इस रूप में दिखता है, वास्तविकता में सूर्य अपने उसी स्थान पर रहता है। सूर्य कहीं नहीं घूमता बल्कि पृथ्वी घुमती है।)

शिक्षक कुछ अन्य क्रियाकलाप करने के लिए भी विद्यार्थियों को प्रेरित करता है। वह ग्लोब पर भारत को ढूंढने को कहता है और मानचित्र में भारत के पूर्वी भागों को दिखाने को कहता है । शिक्षक को यहाँ आवश्यकता होती है कि वह देखे कि सभी विद्यार्थी सही भाग को ही चुने हैं।

शिक्षक विद्यार्थियों से ग्लोब को घुमाते हुए पूछता है कि इस ग्लोब को इस तरह से घुमाते हुए वह कौन सा भाग है जो सूर्य के सामने पहले आएगा। (उ.- पूर्वी भाग)

पूर्वी भाग से शिक्षक उन विभिन्न राज्यों या स्थानों के नाम पूछता है जहाँ सूर्य की रौशनी पहले पड़ेगी। (विद्यार्थी ग्लोब और मानचित्र की सहायता से उन स्थानों के नाम बताएंगे।)

विद्यार्थियों से शिक्षक स्वयं ग्लोब घुमाने को कहता है और कुछ स्थानों के नाम देते हुए पूछता है कि इनमें से किन पर पहले सूर्योदय होगा और किन स्थानों पर बाद में। समूह के आधार पर विद्यार्थी अपने-अपने समूह को दिए गए प्रश्न के आधार पर उत्तर देते हैं। शिक्षक यहाँ निरीक्षित करता है कि क्या विद्यार्थियों ने अपने अपने समूह को दिए गए प्रश्नों का सही उत्तर दिया है। यदि उनका उत्तर सही नहीं होता है तो शिक्षक उनको सही करता है।

शिक्षक फिर विद्यार्थियों से भारत को रात के समय की स्थिति में लाने को कहता है। (टॉर्च की रौशनी से भारत को पीछे करने पर भारत में मध्य रात्रि को दर्शाया जा सकता है)

अब भारत में मध्य रात्रि है। पुनः उसी स्थिति में पृथ्वी को आने में कुल कितना समय लगा है? या एक घूर्णन को पूरा करने के लिए पृथ्वी ने कितना समय लिया है?

(शिक्षक प्रश्न पूछने के बाद ग्लोब को पुनः एक बार घुमाएगा और विद्यार्थियों को ध्यान से देखने को कहेगा और फिर प्रश्न का उत्तर देने को कहेगा।) (पृथ्वी एक बार घूर्णन पूर्ण करने में 24 घंटे लेती है।)

अतः: पृथ्वी पर एक दिन कुल कितनी अवधि का होता है? (24 घंटे का)

प्र.- क्या दिन से रात में यह परिवर्तन एक ही बार में होता है? (उ.- नहीं, यह क्रमिक है।)

प्र.- दिन से रात के बीच के समय को क्या कहा जाता है? (उ.- सुबह और शाम)

जब हम यह कहते हैं कि पृथ्वी पर 24 घंटे का एक दिन होता है इसका ये अर्थ नहीं होता कि उसमें पूरे समय में यह दिन ही रहेगा। (शिक्षक इस संकल्पना को समझाने हेतु ग्लोब का प्रयोग कर सकता है और ग्लोब पह भारत के मानचित्र के सहारे सुबह, दोपहर , शाम और रात की संकल्पना को स्पष्ट करे। इसके साथ ही अन्य देशों की स्थिति में वहाँ के समय की स्थिति को स्पष्ट करे।)

प्र.- क्या साल भर दिन और रात बिल्कुल बराबर यानि 52 घंटे के होते हैं? (उ.- नहीं, क्योंकि यह मौसम पर निर्भर करता है।) (इसके साथ ही शिक्षक को विद्यार्थियों को यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि दिन रात बराबर ना होने का कारण पृथ्वी का अपने अक्ष पर झुका होना है। यही मौसम के लिए भी उत्तरदायी है। इसके साथ ही पृथ्वी अपने अक्ष पर घूर्णन के साथ ही सूर्य के चारों तरफ चक्कर लगाती है जो दिन और रात के समय के अंतर का कारक है।)

यदि इस समय भारत में सुबह के 55 बजे हैं तो संयुक्त राज्य अमेरिका में अभी क्या समय होगा उस स्थिति में जब यह ग्लोब में भारत के ठीक पीछे है ? (रात के 55 बजे हैं।) इसके साथ ही विद्यार्थियों को अन्य

देशों के समय के विषय में जानकारी दी जा सकती है। जैसे- जापान- दिन, चीन- दिन, पाकिस्तान-दिन, श्रीलंका- दिन, इंडोनेशिया- दिन, इंग्लैंड- रात, ऑस्ट्रेलिया-दिन, मेक्सिको- रात, ब्राज़ील-रात।

विस्तारण:

विद्यार्थियों को समय से सम्बंधित समस्याएं हल करने के लिए शिक्षक द्वारा दिया जाता है। इन समस्याओं को समाधानित करने के लिए वह ग्लोब की सहायता लेते हुए समूह में विचार-विमर्श कर सकते हैं (सहयोगपूर्ण तरीके से सीखना) पर सभी विद्यार्थियों को अपने उत्तर स्वयं लिखने हैं।

शिक्षक विद्यार्थियों से अब प्रारंभ में दी गयी समस्या का हल पूछ सकते हैं कि अब बताओ कि तुम अपने मित्र को किस समय फ़ोन करेंगे ? इसमें यह ध्यान रखना है कि उसे रात्रि में सोते समय फ़ोन करके नींद में व्यवधान नहीं डालना है। साथ ही साथ दिन के ऐसे वक़्त में फ़ोन नहीं करना है जब किसी काम से बाहर गया हो। (विद्यार्थी भारत के समय से तुलना करते हुए वहाँ के सुबह या शाम में से किसी वक़्त को बताएंगे।)

मूल्यांकन:

विद्यार्थियों को दिए पपत्र पर प्रश्नों का उत्तर लिख कर देना है।

5. पृथ्वी का आकार क्या है? इस आकार से मिलता हुआ एक उदाहरण दें।
2. दिन और रात होने का क्या कारण है? अपने विचारों को स्पष्ट करें।
3. पृथ्वी पर दिन और रात का समय किस कारण से अलग-अलग होता है?
4. जब भारत में दिन है तो ग्लोब पर ठीक उसके पीछे वाले देश में क्या होगा ? और क्यों?

अभ्यास प्रश्न:

9. यदि विद्यार्थी आपस में विचार विमर्श करके सीखते हैं तो यह किस प्रकार का सीखना हुआ?
10. मूल्यांकन के दौरान अध्यापक को उत्तर_____ रूप में लेने चाहिए

5.7 सारांश

सामाजिक विज्ञान शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में आज भी रुढ़िवादी तरीके से पढ़ाया जाता है। जहाँ विज्ञानं और गणित विषयों के लिए पाठ-योजना के नवाचारों को आवश्यक माना जाता है वहीँ सामाजिक विज्ञान के प्रति हमारा नकारात्मक दृष्टिकोण और इस विधि को विज्ञान विषयों से हीन मानने की मानसिकता नवाचारों को इसके लिए लिए आवश्यक नहीं मानती जबकि सामाजिक विज्ञान भी विज्ञान विषयों के समान ही महत्वपूर्ण है। विभिन्न गोष्ठियों और चर्चाओं में सामाजिक विज्ञान शिक्षण में भी विद्यार्थियों की

सक्रिय सहभागिता पर बल देने की बात कही गयी है और ये माना गया कि विद्यार्थी स्वयं ही ज्ञान का सृजन करेंगे। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा-2005 भी इस पर बल देती है ।संरचनात्मक शिक्षण-अधिगम पियाजे, ब्रूनर आर वाइगोत्सकी के प्रयासों का प्रतिफल है । 5ई अधिगम योजना शिक्षण के संरचनात्मकता सिद्धांत का अनुसरण करती है। इसमें योजना के खंड और गतिविधि को इस तरह से संयोजित किया जाता है कि विद्यार्थी लगातार अपने मौजूदा ज्ञान के साथ नए ज्ञान को समाहित करता जाये। 5 E, प्रारूप का हर चरण अंग्रेजी के E अक्षर से शुरू होता है- Engage (संलग्न), Explore (अन्वेषण), Explain (व्याख्या) Elaborate (विस्तार) और Evaluate (मूल्यांकन) जिसके कारण यह 5 E के नाम से जाना जाता है। ये चरण शिक्षकों और छात्रों को गतिविधियों से जोड़ते हैं जिससे वे अपने मौजूदा ज्ञान के ऊपर नए ज्ञान की निर्मिति करते हैं, अर्थ का सृजन करते हैं और किसी अवधारणा की अपनी समझ का निरंतर मूल्यांकन कर सकते हैं।

5.8 शब्दावली

1. **पाठ योजना**: पाठ योजना अध्यापक के मार्गदर्शन में दिन-प्रति-दिन किए जाने वाले कार्यकलापों के फलस्वरूप प्राप्त सभी उपलब्धियों और उन्हें प्राप्त करने के विशिष्ट साधनों का विवरण है।
2. **संरचनात्मक शिक्षण:** संरचनात्मक शिक्षण की एक ऐसी रणनीति है जिसमें शिक्षक विद्यार्थी के अर्जित ज्ञान और कौशल का इस्तेमाल किया जाता है। रचनात्मक रणनीति के माध्यम से विद्यार्थी अपने पूर्व ज्ञान और सूचना के आधार पर नयी समझ और नए ज्ञान को विकसित करता है।
3. **5 E अधिगम प्रारूप:** 5 E एक अनुदेशनात्मक प्रारूप है जो सीखने के संरचनात्मक उपागम या जाँच आधारित उपागम पर आधारित है जो विद्यार्थियों के मौजूदा ज्ञान, विश्वास, और कौशल को आकर्षित करती है। विद्यार्थी पहले के सीखे ज्ञान और नवीन ज्ञान पर आधारित समझ को संश्लेषित करते हैं। शिक्षक समस्या का निर्धारण करता है, विद्यार्थियों द्वारा किए अन्वेषण पर नज़र रखता है, विद्यार्थी द्वारा किए जाने वाले जाँच को निर्देशित करता है और सोच के नए पैटर्न को बढ़ावा देता है।

5.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. पाठ को पढाए जाने से पूर्व इसकी योजना बनाया जाना आवश्यक है क्योंकि यह शिक्षक को पाठ या विषय सम्बन्धी लक्ष्यों को पूर्ण करने में योगदान करती है।
2. विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षा से अभिप्राय 5.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर है कि ऐसी शिक्षा जिसमें विद्यार्थी मुख्य हो और केंद्र में हो तथा शिक्षक की भूमिका गौण हो।
3. वाइगोत्सकी
4. 5 E एक अनुदेशनात्मक मॉडल है जो सीखने के संरचनात्मक उपागम या जाँच आधारित उपागम पर आधारित है जो विद्यार्थियों के मौजूदा ज्ञान, विश्वास, और कौशल को आकर्षित करती है। विद्यार्थी पहले के सीखे ज्ञान और नवीन ज्ञान पर आधारित समझ को संश्लेषित करते

हैं। शिक्षक समस्या का निर्धारण करता है, विद्यार्थियों द्वारा किए अन्वेषण पर नज़र रखता है, विद्यार्थी द्वारा किए जाने वाले जाँच को निर्देशित करता है और सोच के नए पैटर्न को बढ़ावा देता है।

5. Engage (संलग्न), Explore (अन्वेषण), Explain (व्याख्या) Elaborate (विस्तार) और Evaluate (मूल्यांकन)
6. विद्यार्थियों को पाठ से संलग्न करने के लिए शिक्षक को पिछले और वर्तमान सीखने के अनुभवों के बीच संबंध बनाने चाहिए तथा शिक्षक को वर्तमान गतिविधियों के आधार पर सीखने के परिणामों पर छात्रों की सोच पर ध्यान केंद्रित करना और विद्यार्थी द्वारा सीखी गतिविधियों का पूर्वानुमान लगाना चाहिए।
7. पूर्व अधिगम
8. इसके माध्यम से शिक्षक (i) निर्देश के चरणों को स्पष्ट रूप से परिभाषित कर पाता है (ii) इसके माध्यम से स्पष्ट होता है कि कक्षा में शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के दौरान शिक्षक और विद्यार्थियों कि क्या भूमिका होगी (iii) मूल्यांकन के लिए विविध अवसरों को उपलब्ध कराता है (iv) कक्षा में उपस्थित विभिन्न प्रकार के मानसिक स्तर एवं बुद्धि लब्धि वाले विद्यार्थियों के मध्य अंतर कर सकने का अवसर प्रदान करता है। इसके माध्यम से शिक्षक भिन्न मानसिक क्षमता वाले विद्यार्थियों में भेद कर पाते हैं।
9. सहयोगपूर्ण तरीके से सीखना
10. लिखित

5.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Bransford, J. D., Ann L. B., & Rodney R. C. (2000). How People Learn: Brain, Mind, Experience, and School. Washington, DC: National Academy Press.
2. Bybee, R. W., Taylor, J. A., Gardner, A., Van Scotter, P., Powell, J. C., Westbrook, A., and N. Landes. 2006. *The BSCS 5E Instructional Model: Origins, Effectiveness, and Applications*. Colorado Springs: BSCS. Retrieved from http://www.bscs.org/curriculumdevelopment/features/bscs5es.html
3. Gardner, H. (5995). *The Unschooled Mind: How Children Think and How Schools Should Teach.* New York: Basic Books.
4. Jobrack, B. (nd.). The 5E Instructional Model Engage Explore Explain Evaluate EXTEND. Retrieved from

https://www.mheonline.com/research/assets/products/555d6702c950ecb7/5e_lesson_cycle.pdf

5. National Council of Educational Research and Training (2009) National Curriculum Framework for Teacher Education (NCFTE). New Delhi: NCERT.
6. Santrock, J.W. (2055). *Educational Psychology*. New York: The McGraw-Hill Comapanies Inc.
7. Shastry,V. (2009). *Educational Psychology*. Delhi: Pacific Publication
8. Siltala, R. (2050). Innovatively and Cooperative Learning in Business Life and Teaching. University of Turku.
9. Slavin, R.E. (2052). *Educational Psychology: Theory and Practice*. Boston: Pearson Education,Inc.
10. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् (2005)। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा 2005। नयी दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद्।
11. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् (2007). सामाजिक विज्ञान का शिक्षण *राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र* । नयी दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद्।

5.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. किसी भी प्रकरण को पढ़ाये जाने से पूर्व पथ-योजना का बनाया जाना क्यों आवश्यक है? हमारी परंपरागत पाठ योजनाओं के साथ क्या समस्या है और इसे किस प्रकार्दुर किया जा सकता है? अपने विचार स्पष्ट करें ।
2. 5 E अधिगम प्रारूप से क्या आशय है? इसके विभिन्न चरण कौन कौन से हैं? सविस्तार वर्णन करें।
3. 5 E अधिगम योजना सामाजिक विज्ञान के शिक्षण में क्यों आवश्यक है? 5 E योजना की आवश्यकता और महत्व को स्पष्ट करें ।
4. 5 E प्रारूप पर आधारित सामाजिक विज्ञान के किसी प्रकरण पर अधिगम योजना का निर्माण करें ।